प्राचीन हस्तलिखित पोथियों

का

विवरण

[पहला खण्ड]

सम्पादक

डॉक्टर धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

पटना

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण

[पहला खण्ड]

सम्पादक
डॉक्टर धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना

प्रकाशक
बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना-४

तृतीय संस्करण, २०००
शकाब्द १८९३; विक्रमाब्द २०२८; खृष्टाब्द १९७१

मूल्य : ६·५०

मुद्रक
सुनील प्रिन्टिंग प्रेस
पटना-४

वक्तव्य

[तृतीय संशोधित एवं संवर्द्धित संस्करण]

तथ्यपरक शोध, पाठानुसन्धान और साहित्येतिहास के पुनर्निर्माण की दृष्टि से प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विपुल महत्त्व है। इन क्षेत्रों में गहन अध्ययन की आधारशिलाएँ ये प्राचीन हस्तलिखित पोथियाँ ही प्रस्तुत करती हैं। अतः, एक शोध-संस्थान होने के कारण परिषद् ने ऐसी दुर्लभ प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण छह खण्डों में प्रकाशित किया है। हमें इस बात की प्रसन्नता है कि सूक्ष्मेक्षिका-सम्पन्न अनुसन्धित्सु-समुदाय ने इन सभी खण्डों का पर्याप्त समादर किया है।

परिषद् के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग द्वारा संगृहीत पुरानी पोथियों के प्रथम खण्ड का पहला संस्करण सन् १९५४ ई० में प्रकाशित हुआ था। प्रथम संस्करण में इस खण्ड की सामग्री कुछ और सुव्यवस्थित होने की अपेक्षा रखती थी; क्योंकि उस समय परिषद् द्वारा संकलित ग्रन्थों का जो विवरण त्रैमासिक साहित्य' में क्रमशः प्रकाशित हो रहा था, उसी की पुनर्मुद्रित प्रतियों का कुछ अंश पुस्तकाकार प्रकाशित कर दिया गया था। इसलिए, सन् १९५८ ई में जब इस खण्ड का दूसरा संस्करण प्रकाशित हुआ, तब उसे अपेक्षित संशोधनों एवं परिवर्द्धनों के साथ सन्तोषजनक रीति से सुव्यवस्थित कर दिया गया। सन् १९७१ ई० में प्रस्तुत यह नवीन तृतीय संस्करण दूसरे संस्करण की आवृत्ति-मात्र नहीं, बल्कि उसका और भी संवर्द्धित रूप है। अतः, हमें विश्वास है कि प्राचीन हस्तलिखित पोथियों के विवरण का यह प्रथम खण्ड इस रूप में गवेषकों और अनुसन्धित्सुओं को अधिक प्रीत करेगा।

इस खण्ड के पहले दो संस्करण प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-विभाग के तत्कालीन अध्यक्ष और इस विवरण-ग्रन्थ के सम्पादक स्वर्गीय डॉक्टर धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री के जीवनकाल में ही प्रकाशित हुए थे। किन्तु, कई वर्ष पूर्व उनका देहावसान हो जाने के कारण हम इस संस्करण में उनकी पारंगत विद्वत्ता और निपुण निर्देशन का लाभ नहीं उठा सके। प्रस्तुत संस्करण को संशोधित-संवर्द्धित करने का बहुलांश श्रेय श्रीरामनारायण शास्त्री को है, जिन्होंने पहले दो संस्करणों को उपस्थित करने में स्वर्गीय ब्रह्मचारीजी के साथ शोध-सहायक के रूप में कार्य किया था। श्रीरामनारायण शास्त्री ने इस तृतीय संस्करण को संशोधित-परिवर्द्धित करने में बहुत ही श्रम और अभिनिवेश से काम लिया है। इन्होंने इस बार 'ग्रन्थकारों का परिचय', शीर्षक अंश को अच्छी तरह मार्जित कर दिया है और ग्रन्थों के विवरण में भी अद्यतन सूचनाओं को अनेकत्र जोड़कर उसे अधिकाधिक उपयोगी बना दिया है। इस सन्दर्भ में इन्होंने श्रीवेदप्रकाश गर्ग, श्रीअगरचन्द नाहटा, श्रीमुनि कान्तिसागर

इत्यादि जैसे शोध-विद्वानों के सुझावों और सम्मतियों से भी लाभ उठाने की चेष्टा की है। इस प्रकार, प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-शोध-बिभाग के प्रधान अनुसन्धायक के रूप में श्रीशास्त्री ने तृतीय संस्करण का प्रस्तुत करने में जिस योग्यता का परिचय दिया है, उसके लिए हम इन्हें हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

आशा है, यह नवीन संस्करण अनुसन्धित्सुओं के लिए पहले संस्करणों की अपेक्षा अधिक लाभकर सिद्ध होगा।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना-४
जीवत्पुत्रिका, २०२८ वि०

(डॉ०) कुमार विमल
निदेशक

वक्तव्य

[द्वितीय संशोधित संवर्द्धित संस्करण]

परिषद् के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थशोध-विभाग द्वारा संगृहीत पुरानी पोथियों के विवरण का यह प्रथम खण्ड पहले-पहल विक्रमाब्द २०११ में प्रकाशित हुआ था। यह नवीन संस्करण उसी का सशोधित और संवर्द्धित रूप है। इस संस्करण में, पहले संस्करण में अंकित गुरुमुखी और बँगला की पुरानी पोथियों के विवरण नहीं हैं। केवल हिन्दी और संस्कृत की पोथियों के ही विवरण अलग-अलग इसमें दिये गये हैं।

पहले संस्करण से इसमें विशेषता यह है कि हिन्दी की ५७ पुरानी पोथियों के नये विवरण प्रकाशित हैं। उन पुरानी पोथियों में से अधिकांश ऐसी ही हैं, जिनसे बिहार-राज्य के अनेक ज्ञात-अज्ञात कवियों की रचनाएँ उपलब्ध हुई हैं।

पहले संस्करण से दूसरी विशेषता इसमें यह है कि इसकी पृष्ठ-संख्या क्रमबद्ध है और इसके आरम्भ में ग्रन्थकारों का संक्षिप्त परिचय दे दिया गया है तथा तीन परिशिष्टों में विश्लेषणात्मक ढंग से ज्ञातव्य विषयों के सम्बन्ध में संक्षिप्त सूचनाएँ संकलित कर दी गई हैं।

इस विवरण का दूसरा खण्ड भी प्रकाशित हो चुका है। इस प्रथम खण्ड के प्रथम संस्करण का प्रकाशन सीमित संख्या में ही हुआ था। साहित्यिक अनुसन्धान में संलग्न विद्वानों ने उसको बहुत उपयोगी समझकर अपनाया। फलस्वरूप, उसका यह परिष्कृत संस्करण प्रकाशित किया गया है। आशा है कि इस संस्करण से साहित्यिक गवेषणा के कार्य में यथोचित सहायता मिलेगी।

इस संस्करण में सम्मिलित नई पोथियाँ, जिन सज्जनों से प्राप्त हुई हैं, उनको हार्दिक धन्यवाद देते हुए हम आशा करते हैं कि वे भविष्य में इसी प्रकार परिषद् के ग्रन्थ-संग्रह-कार्य में सहयोग करते रहेंगे।

शिवपूजन सहाय
(संचालक)

महाशिवरात्रि, शकाब्द १८७६
फरवरी, १९५८ ई०

दो शब्द

[द्वितीय संस्करण]

तीन वर्ष पूर्व (सं० २०११ वि० में) हमने परिषद्-संग्रहालय में संकलित एक सौ हस्तलिखित पोथियों के, त्रैमासिक 'साहित्य' में प्रकाशित, विवरणात्मक लेखों की पुनर्मुद्रित (रिप्रिण्ट्स) प्रतियों को पुस्तकाकार प्रकाशित किया था। उसके इतना शीघ्र समाप्त हो जाने की सम्भावना नहीं थी। किन्तु, अनुसन्धित्सु सुधी-सुविज्ञों ने उसे इस प्रकार अपनाया कि आज हम उसका द्वितीय संस्करण प्रस्तुत कर रहे हैं।

इस किंचित् सुसम्पादित और परिष्कृत संस्करण में हिन्दी एवं संस्कृत-भाषा की हस्तलिखित पोथियों के विवरण पृथक्-पृथक् तो दिये ही गये हैं, ग्रन्थों की संख्या भी बढ़ाकर एक सौ इक्यावन (१०० हिन्दी और ५१ संस्कृत) कर दी गई है। इस विवरण में पूर्व-संस्करण में आई हुई पोथियों के अतिरिक्त हिन्दी की सत्तावन (दरिया-साहित्य २२* और चौबे-संग्रहस्थ ३५) अन्य पोथियों के विवरण सम्मिलित कर दिये गये हैं। विवरण के तृतीय परिशिष्ट में महत्त्वपूर्ण हस्तलेखों के समय तथा अन्य प्रकाशित खोज-विवरणिकाओं में उनके उल्लेख का संकेत कर दिया गया है।

इस संग्रह में ५१ ग्रन्थकारों (हिन्दी ३४, संस्कृत १७) के १५१ ग्रन्थों (१०० हिन्दी और ५१ संस्कृत) के विवरण हैं, जिनमें चालीस ऐसी रचनाएँ (हिन्दी १८ और संस्कृत २२), हैं जिनके ग्रन्थकार साहित्यिक जगत् के लिए अपरिचित एवं अज्ञात हैं (प्रथम परिशिष्ट में देखिए)।

निम्नलिखित तालिका में विक्रम-शताब्दी के अनुसार प्रत्येक शताब्दी में रचित तथा लिपिकृत ग्रन्थों की संख्या का निर्देश किया गया है। इनके अतिरिक्त ग्रन्थों में रचनाकाल का उल्लेख नहीं हुआ है।

विक्रम-शताब्दी के अनुसार ग्रन्थों के रचनाकाल और लिपिकाल

शताब्दी	इस शताब्दी में रचित पोथियों की संख्या	इस शताब्दी में लिपिबद्ध पोथियों की संख्या
सोलहवीं	१	×
सत्रहवीं	×	×
अट्ठारहवीं	१	५
उन्नीसवीं	२	२४
बीसवीं	६	४८

* २२ की संख्या जिल्दों की द्योतक है, इनमें ५४ पोथियाँ सम्मिलित हैं।

इस संस्करण में अप्रकाशित पोथियों की संख्या की वृद्धि हुई है, जिसके फलस्वरूप निम्नलिखित बिहारी एवं अन्य अज्ञात ग्रन्थकारों की विशेष चर्चा हुई है—

अवतार मिश्र, परमानन्द, भुवालस्वामी, कुशलसिंह और हरिदास।

इनके सम्बन्ध में संक्षिप्त परिचयात्मक टिप्पणी ग्रन्थ-विवरण के प्रारम्भ में दे दी गई है। इनमें सूरजदास, लालचदास पदुमनदास, कुंजनदास, शिवनाथदास, कृष्ण (कारख) दास के ग्रन्थों पर परिषद् के इस विभाग का खोज-कार्य जारी है। सन्त सूरजदास और उनकी कृति 'रामजन्म' का सम्पादन हो रहा है। 'सन्त कवि दरिया : एक अनुशीलन' के दूसरे खण्ड–'दरिया-ग्रन्थावली' के लिए सन्त दरिया के ग्रन्थों का पाठान्तर-विश्लेषण भी हो चुका है। प्रतिवर्ष एक हस्तलिखित ग्रन्थ अपने मूल रूप में समीक्षात्मक अध्ययन के साथ प्रकाशित करने का विचार है।

हम उन महानुभावों के कृतज्ञ हैं, जिन्होंने परिषद्-संग्रहालय के लिए उदारतापूर्वक हस्त-लिखित पोथियों का दान किया है। ग्रन्थ-विवरण-प्रसंग में उनके दान का उल्लेख कर दिया गया है। विशेष रूप से हम श्रीसाधु चतुरीदासजी तथा पं० श्रीगणेश चौबे के अनुगृहीत हैं, जिन्होंने सन्त दरिया के ग्रन्थों तथा महत्त्वपूर्ण हस्तलिखित पोथियों का दान कर परिषद्-संग्रहालय की श्रीवृद्धि की है।

धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री
अध्यक्ष
प्राचीन हस्तलिखित-ग्रन्थ-अनुसन्धान-विभाग

वसन्त-पंचमी
२०१४ वि०

निवेदन

[प्रथम संस्करण]

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की ओर से समस्त बिहार-राज्य में हस्तलिखित प्राचीन पोथियों और दुर्लभ मुद्रित पुस्तकों की खोज कराई जाती है। खोज का काम सर्वत्र भ्रमण करके श्रीरामनारायण शास्त्री करते हैं। यह काम परिषद् के मान्य सदस्य और बिहार-राज्य के शिक्षा-विभाग के उपनिर्देशक डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री के तत्वावधान में होता है। श्रीब्रह्मचारीजी की देख-रेख में श्रीरामनारायणजी सभी संगृहीत पोथियों का परिचयात्मक विवरण तैयार करते हैं, जो डॉ० शास्त्री द्वारा सम्पादित होकर 'साहित्य' में क्रमशः प्रकाशित होता रहता है। क्रमशः छपे हुए उस विवरण के कुछ अतिरिक्त पृष्ठ, त्रैमासिक 'साहित्य' के प्रत्येक अंक से अलग रख लिये जाते हैं। उन्हीं में से एक सौ पोथियों का विवरण इस पुस्तिका में प्रकाशित किया जा रहा है। यह संग्रह केवल अनुसन्धानकर्ता विद्वानों (रिसर्च-स्कॉलरों) की सुविधा के लिए बहुत सीमित संख्या में प्रकाशित हुआ है। आशा है, विद्वज्जन इससे लाभ उठावेंगे।

इस विवरण-पुस्तिका की पृष्ठ-संख्या क्रमबद्ध नहीं है। किन्तु, पोथियों का संख्या-क्रम ठीक है। विवरण का दूसरा खण्ड क्रमबद्ध पृष्ठ-संख्या के साथ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया जायगा।

इस संग्रह में प्रकाशित एक सौ पुस्तकों के विवरणों में हिन्दी के अतिरिक्त कुछ संस्कृत, बँगला और गुरुमुखी पोथियों के भी विवरण हैं। जिन उदार सज्जनों की कृपा और सहायता से परिषद् को हस्तलिखित प्राचीन पोथियाँ प्राप्त हुई हैं, उनके नाम और पते तो विवरण में दे ही दिये गये हैं, पर यहाँ हम परिषद् की ओर से उन सबको हार्दिक धन्यवाद देते हैं। विश्वास है कि परिषद् के ग्रन्थ-शोधक श्रीरामनारायण शास्त्री बिहार-राज्य में जहाँ कहीं जायेंगे, वहाँ सहृदय सज्जनों से, उनको संग्रहणीय ग्रन्थों का दान अवश्य प्राप्त होगा। पोथियाँ देनेवाले सहृदय सज्जनों को यह स्मरण रखना चाहिए कि जहाँ-तहाँ बिखरी पड़ी हुई पोथियों से साहित्यिक गवेषणा का काम सुविधा से नहीं हो सकता है। इसलिए, बिहार-सरकार की सहायता से परिषद्-पुस्तकालय में अलभ्य पोथियों का एक संग्रहालय बनाया गया है, जिसमें पोथी देनेवाले सज्जन भी पधारकर सुरक्षित रखी हुई पोथियों से लाभ उठा सकते हैं।

शिवपूजन सहाय
(परिषद्-मन्त्री)

दो शब्द

[प्रथम संस्करण]

भारत के प्राचीनतम साहित्य को मुख्यतः दो व्यापक संज्ञाएँ दी गई हैं—श्रुति और स्मृति। 'श्रुति' का आशय उस मूल साहित्य से है, जिसे मानव-जाति ने प्रथम प्रथम पाया। इस साहित्य का मुख्य स्रोत 'श्रुति' अथवा 'श्रवण' था और प्राचीन गुरु परम्परा के अभाव में इसे ईश्वरीय वाणी मानकर परम सम्भावना का पात्र बनाया गया। किन्तु, वह साहित्य, जो इस मूल श्रुति-साहित्य के आधार पर निर्मित हुआ, और जिसे गुरु-परम्परा से लोग स्मृति (स्मरण) द्वारा रक्षित करते रहे, 'स्मृति' के नाम से प्रचलित हुआ। इस प्रसंग में यह कहना कठिन है कि श्रुति और स्मृति दोनों प्रकार का मौखिक साहित्य प्रथम-प्रथम लिपिबद्ध कब हुआ। किन्तु, इतना तो असन्दिग्ध रूप से माना जायगा कि पाणिनि के व्याकरण की रचना के समय तक लिपिकला का आविष्कार हो चुका था।

प्रथम-प्रथम जो लिपिबद्ध साहित्य हमें प्राप्त है, वह मुख्यतः शिलालेखों, मुद्राओं अथवा ऐतिहासिक महत्त्व रखनेवाली इस प्रकार की अन्यान्य वस्तुओं पर अंकित मिलता है। जब बौद्धों और जैनों ने अपने विपुल अपभ्रंश, पालि तथा प्राकृत-साहित्य का निर्माण किया और उनका अधिकाधिक प्रचार करना चाहा, तब ग्रन्थों को भूर्जपत्र अथवा तालपत्र पर लिखकर सुरक्षित करने की प्रथा चलाई। प्राचीन काल में जितने बौद्धों के बिहार और जैनों के मन्दिर थे, उनसे सम्बद्ध हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रहालय रहा करता था। जैनधर्मावलम्बी इन संग्रहालयों को 'शास्त्र-भण्डार', सरस्वती-भण्डार 'भारती-भाण्डागार' अथवा संक्षेप में केवल 'भण्डार' कहा करते थे। आज भी राजस्थान तथा अन्यत्र स्थित अनेकानेक मन्दिरों में जैन-ग्रन्थों की विपुल निधि सुरक्षित है। काश्मीर, काशी, मिथिला, नदिया (बंगाल) आदि कतिपय प्रदेशों अथवा स्थानों में वैदिक अथवा हिन्दू-धर्म से सम्बद्ध संस्कृत-भाषा का प्रचुर साहित्य हस्तलिखित रूप में संचित है। बौद्धों के भी तक्षशिला, विक्रमशिला और नालन्दा-विहारों तथा विश्वविद्यालयों में बहुसंख्यक ग्रन्थ सुरक्षित थे, जिनमें से अनेक ग्रन्थ इतरधर्मियों द्वारा भस्मसात् भी कर दिये गये।

वर्त्तमान युग में जब मुद्रण के आविष्कार ने ज्ञान की सामग्री को सर्वसुलभ बनाया, तब विद्वानों का ध्यान इस ओर गया कि हस्तलिखित ग्रन्थों की अमूल्य निधि को प्रकाश में लाया जाय। फलतः, इस प्रकार के ग्रन्थों की खोज और उनके सम्बन्ध में संक्षिप्त सूचनाओं के प्रकाशन का कार्य सन् १८६८ ईसवी से आरम्भ हुआ। पहले-पहले यह कार्य मुख्यतः संस्कृत-ग्रन्थों की खोज तक सीमित था। डॉ० कीलहार्न, बूलर, पीटर्सन, बरनेल तथा भण्डारकर आदि विद्वानों ने एशियाटिक सोसाइटी एवं प्रादेशिक सरकारों के साहाय्य से, संस्कृत-ग्रन्थों की खोज के आधार पर, संग्रह प्रकाशित किये और उन सबको मिलाकर आफ्रेक्ट साहब ने एक बृहत् परिचयात्मक संकलन 'कैटेलोगस कैटेलॉगोरम्' के नाम से अनुसन्धित्सु-जगत् के सम्मुख प्रस्तुत किया। संस्कृत-ग्रन्थों तथा जैनधर्म-सम्बन्धी साहित्य के ऐसे कई बहुमूल्य परिचयात्मक संकलन विद्यमान हैं।

हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों के संग्रह तथा उनके सम्बन्ध में सूचनाओं के प्रकाशन का व्यवस्थित रूप से कार्य करने का प्रयत्न सर्वप्रथम काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने किया और

सन् १६०० ईसवी में श्रीबाबू श्यामसुन्दरदास के तत्त्वावधान में खोज-विभाग की स्थापना हुई। सभा ने अबतक १६ रिपोर्टें तैयार की हैं, जिनमें केवल १२ छप सकी हैं और शेष अभी लाल फीते के जटा-जूट में विलीन है। इन रिपोर्टों का प्रकाशन सरकार के आर्थिक अनुदान पर ही अवलम्बित रहा है। अतः, अप्रकाशित रिपोर्टों के उद्धार के लिए कब गंगावतरण होगा, यह अनिश्चित है। हिन्दी-साहित्य का प्रत्येक विद्यार्थी यह स्वीकार करेगा कि हमारे साहित्य और संस्कृति के नवीन इतिहास तथा नवीन चेतना के निर्माण में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज ने बहुत बड़ी देन दी है।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के तत्त्वावधान में हस्तलिखित पोथियों के संग्रह और अनुसन्धान का कार्य सन् १६५१ ई० के फरवरी मास से प्रारम्भ हुआ है। तीन वर्ष के अल्प-कालिक अन्वेषण के फलस्वरूप अबतक ७७७ हस्तलिखित ग्रन्थ संग्रहालय में संकलित हो चुके हैं। प्रान्त के विभिन्न ग्रन्थालयों में संगृहीत १५८ ग्रन्थों का विवरण-पत्र भी तैयार किया जा चुका है। संकलित ग्रन्थों का संक्षिप्त विवरण बिहार-हिन्दी-साहित्य सम्मेलन और बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के सम्मिलित त्रैमासिक मुखपत्र 'साहित्य' में क्रमशः प्रकाशित होता रहा है। उन प्रकाशित विवरणों की पुनर्मुद्रित प्रतियों का कुछ अंश पुस्तकाकार प्रस्तुत किया जा रहा है।

इस संग्रह में १०० हस्तलिखित ग्रन्थों के विवरण हैं, जिनमें ४२ हिन्दी, १ गुरुमुखी, ५ बँगला और १ तालपत्र पर लिखित मिथिलाक्षर-ग्रन्थ हैं। शेष ५१ नागरी लिपि में लिखित संस्कृत-ग्रन्थ हैं। हमें आशा है कि अनुशीलनशील सुधी-समाज के लिए यह संक्षिप्त विवरण अनुसन्धान-कार्य में मार्गनिर्देश का कार्य करेगा। संक्षिप्त विवरणों को तैयार करते समय यह ध्यान रखा गया है कि हस्तलिखित ग्रन्थों के उद्धरण अपने मौलिक अविकल रूप में आवें।

हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों में अनेक पोथियाँ ऐसी हैं, जो अबतक अप्रकाशित हैं और इनपर यदि सम्यक् अनुसन्धान किया जाय, तो हिन्दी तथा बिहार के साहित्यिक इतिहास पर अभिनव प्रकाश पड़ेगा। अबतक, परिषद् में तथा राज्य के विभिन्न पुस्तकालयों में संगृहीत पोथियों से पचीस ऐसे कवियों, लेखकों का पता चला है, जिनके सम्बन्ध में अनुसन्धान-अनुशीलन की नितान्त आवश्यकता है। इन पचीस में ग्यारह ऐसे हैं, जिनके ग्रन्थों की संक्षिप्त सूचनाएँ प्रस्तुत संग्रह में आई हैं। ये निम्नलिखित हैं —

१. **श्रीसन्त सूरजदास**—इनके द्वारा लिखित 'रामजन्म' नामक ग्रन्थ मिला है। रचना से प्रतीत होता है कि ये बिहार-प्रान्त के ही सन्त थे। 'रामजन्म' पर एक समालोचनात्मक अध्ययन डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा 'साहित्य' में प्रकाशित हो रहा है।

२. **श्रीलालचदास**—ये यथासम्भव गोस्वामी तुलसीदासजी से भी पूर्व आविर्भूत हुए थे और इन्होंने कृष्ण-सम्बन्धी प्रबन्ध-काव्य की रचना की थी। इनका दोहों और चौपाइयों में लिखित श्रीमद्भागवत प्राप्त हुआ है। परिषद्-संग्रहालय में इनके तीन ग्रन्थ हैं। इस विवरण में सबसे पहला ग्रन्थ इन्हीं का है। इनके दो ग्रन्थ भी मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में सुरक्षित हैं। नागरी-प्रचारिणी सभा की खोज-रिपोर्ट, मिश्रबन्धुविनोद तथा शिवसिंहसरोज में भी इनकी चर्चा की गई है। श्रीलालचदासजी का जन्मस्थान बरेली (उत्तरप्रदेश) था। इनकी साहित्य-भूमि बिहार थी। इन्होंने विशेषतः दरभंगा जिले के रोसड़ा के आसपास समय-यापन किया।

३. श्रीपदुमनदास—ये रामगढ़-राज्य के आश्रित कवि थे। इन्होंने हितोपदेश का हिन्दी-पद्यानुवाद किया था, जो इस विवरण में है। इनके द्वारा लिखित दो और ग्रन्थ मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में हैं। इनकी रचना में रामगढ़-राज्य की संक्षिप्त वंशावली भी दी हुई है।

४. श्रीशिवनाथदास—दरियापन्थ के एक साधु। इन्होंने इसी मत से सम्बद्ध एक मौलिक ग्रन्थ की रचना की है। ये प्रसिद्ध दरियापन्थी मठ, तेलपा (सारन जिला) में रहते थे।

५. श्रीकुंजनदास—शिवपुराण के आधार पर लिखित दोहे और चौपाइयों में 'शिवपुराणरत्न' इनकी मौलिक रचना है ये शाहाबाद जिले के निवासी थे। इनकी रचना से ज्ञात होता है कि इनके शिष्य पूर्वी बिहार के मुँगेर और भागलपुर जिले में अधिक थे।

६. श्रीकृष्णकारखदास—बिहार-प्रान्त के दरभंगा जिले के रोसड़ा के निवासी एक सन्त। ये सम्भवतः कबीर के समकालीन सन्त थे। रोसड़ा में इनका एक मठ भी है। कबीर-पन्थियों में इनकी एक पृथक् शाखा मानी जाती है। इनकी तीन रचनाएँ प्राप्त हुई हैं। इनके द्वारा लिखित अन्य अनेक हस्तलिखित ग्रन्थ रोसड़ा-मठ में सुरक्षित हैं।

७. श्रीझामदास—इनका निवासस्थान मिर्जापुर जिले के अकोढ़ी नामक ग्राम में था। यह ग्राम पूर्वीय रेलपथ के विन्ध्याचल स्टेशन से एक स्टेशन आगे, अष्टभुजा के करीब, बिरोही स्टेशन के सन्निकट है। इनके द्वारा लिखित 'श्रीरामार्णव' विशालकाय ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ लगभग २०० वर्ष प्राचीन है। इनकी रचना पर 'अवधी' का प्रभाव अधिक है। यह ग्रन्थ और ग्रन्थकार हिन्दी-जगत् के लिए नवीन हैं।

८. श्रीश्रीभट्ट—इनकी रचना 'युगलस्तोत्र' है। इसमें इन्होंने व्रजभाषा-प्रभावित भाषा में राधा और कृष्ण के सम्बन्ध में बड़ा ही रोचक वर्णन किया है। इनकी अन्य रचनाएँ श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय, गया में हैं। अपनी रचना में इन्होंने विभिन्न रागों के पद तो बनाये ही हैं, दोहे भी लिखे हैं। इनके सम्बन्ध की सूचना काशी-नागरी-प्रचारिणी की खोज-रिपोर्ट में भी है। इनके ग्रन्थों में इनके निवास-स्थान आदि के सम्बन्ध में कोई भी चर्चा नहीं है।

९. श्रीपरमानन्ददास—इन्होंने अपने ग्रन्थ 'कबीरभानुप्रकाश' में अपना कोई भी परिचय-संकेत नहीं दिया है। इनके ग्रन्थ से इनका विशाल अध्ययन तथा सभी धार्मिक सम्प्रदायों के मन्तव्यों से विस्तृत परिचय ज्ञात होता है।

१०. श्रीनगनारायण सिंह—ये सारन जिले के पटेही नामक ग्राम के निवासी साहित्यिक थे। यद्यपि ये बहुत प्राचीन कवि नहीं हैं, तथापि 'पूर्व-वर्त्तमानकाल' के साहित्यिकों में इनकी गणना होगी। इन्होंने हिन्दी, संस्कृत और फारसी में पद्य-रचना की है। विशेष इस विवरण में देखिए।

११. श्रीअवधकिशोर सहाय—ये बिहार-प्रान्त के पलामू जिले के डालटेनगंज के आसपास कंचनपुर-ग्रामवासी थे। इन्होंने चित्तौर की लड़ाई और राजपूती इतिहास से सम्बद्ध वीरकाव्य की रचना की थी। इनकी रचना 'चित्तौरोद्धार' का प्रवाह बड़ा ही सुन्दर है।

इन ग्यारह कवियों के अतिरिक्त जिन अज्ञात साहित्यस्रष्टाओं का पता चला है, उनके विवरण पृथक् संग्रह में सम्मिलित किये जायेंगे। बिहार के चम्पारन जिले में प्रचलित सरभंग सन्तों की वाणियाँ भी संगृहीत होकर परिषद्-संग्रहालय में आ गई हैं। उन वाणियों का

सांस्कृतिक-साहित्यिक अध्ययन यथासमय ग्रन्थाकार प्रकाशित किया जायगा। परिषद् ने यह भी निश्चय किया है कि क्रमशः प्रतिवर्ष मूलग्रन्थ भी मुद्रित तथा प्रकाशित किये जायँ।

विवरण प्रस्तुत करते समय यह ध्यान रखा गया है कि उद्धरण आदि उसी रूप में रखे जायँ, जिस रूप में वे मूल पोथी में हैं। फलत. श, ष, स, अथवा ह्रस्व, दीर्घ आदि को अविकल रूप से उतार दिया गया है और उनका शुद्ध रूप नहीं दिया गया है। व और ब के सम्बन्ध में यह जान लेना चाहिए कि प्रायः पोथियों में ब वैसा ही लिखा गया है, जैसा नागरी का व और व को नागरी व के नीचे बिन्दु (व़) देकर संकेतित किया गया है। किन्तु, उद्धरण देते समय छापे की सुविधा को ध्यान में रखकर उच्चरित ब और व को क्रमशः व और व़ न लिखकर ब और व ही लिखा गया है।

एक बात और। हस्तलिखित पोथियों में प्रायः छन्द के एक चरण को इकाई मानकर इस प्रकार लिखा गया है, जिससे शब्द एक-दूसरे से पृथक् नहीं मालूम पड़ते। या तो समग्र चरण या पोथी की समग्र पंक्ति के ऊपर एक ही लकीर दे दी गई है, अथवा जहाँ एक लकीर नहीं है, वहाँ उस पंक्ति अथवा चरण का प्रत्येक अक्षर समान दूरी पर अलग-अलग, किन्तु एक दूसरे से सटाकर, लिखा हुआ है।

आधुनिक लेखों और पुस्तकों के पढ़नेवालों को हस्तलिखित पोथियों के पढ़ने में इस कारण कुछ कठिनाई अवश्य होगी; क्योंकि पढ़ते समय अपने मन से एक में मिले हुए शब्दों को अलग-अलग करके पढ़ना और समझना होगा।

नागरी के य का उच्चारण प्रायः ज के समान होता है, किन्तु किसी अक्षर के साथ संयुक्त होने पर य के समान होता है। जहाँ संयुक्त न होते हुए भी य का उच्चारण अन्तःस्थ य के समान इष्ट है, वहाँ प्रायः उसके नीचे बिन्दु (य़) दे दिया गया है। मूर्धन्य ष का उच्चारण प्रायः ख के समान माना गया है और इसी कारण दुष (दुख), शाषा (शाखा) और वषानि (बखानि) आदि प्रयोग किये गये हैं। ग्रन्थों के लिपिकार अन्य प्रकार की भी बहुत-सी अशुद्धियाँ करते थे, जिनका परिचय मूल उद्धरणों से पाठकों को मिल जायगा। पोथियाँ जहाँ-जहाँ से संगृहीत हुई हैं, उन स्थानों अथवा पुस्तकालयों के नाम विवरण के साथ ही दे दिये गये हैं

हम इस संग्रह को व्यवस्थित तथा वैज्ञानिक नहीं बना सके हैं; क्योंकि यह रिप्रिण्टों का संकलन-मात्र है और प्रयास भी प्रथम है। किन्तु, हमें आशा है कि अगले संग्रह को हम पूर्वनिर्धारित योजना के अनुसार साहित्यिक जगत् को भेंट कर सकेंगे।

इस संग्रह को तैयार करने तथा सामग्री जुटाने में हमारे शोधकर्त्ता श्रीरामनारायण शास्त्री ने जिस तत्परता तथा लगन से कार्य किया है, वह अभिनन्दनीय है।

श्रीमहावीर-जयन्ती
चैत्रशुक्ल १३, सं० २०११ वि०

धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री
अध्यक्ष
प्राचीन हस्तलिखित-ग्रन्थ शोध-विभाग
बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

विषय-सूची

सांस्कृतिक-साहित्यिक अध्ययन यथासमय ग्रन्थाकार प्रकाशित किया जायगा। परिषद् ने यह भी निश्चय किया है कि क्रमशः प्रतिवर्ष मूलग्रन्थ भी मुद्रित तथा प्रकाशित किये जायँ।

विवरण प्रस्तुत करते समय यह ध्यान रखा गया है कि उद्धरण आदि उसी रूप में रखे जायँ, जिस रूप में वे मूल पोथी में हैं। फलत. श, ष, स, अथवा ह्रस्व, दीर्घ आदि को अविकल रूप से उतार दिया गया है और उनका शुद्ध रूप नहीं दिया गया है। व और ब के सम्बन्ध में यह जान लेना चाहिए कि प्रायः पोथियों में ब वैसा ही लिखा गया है, जैसा नागरी का व और व को नागरी व के नीचे बिन्दु (व़) देकर संकेतित किया गया है। किन्तु, उद्धरण देते समय छापे की सुविधा को ध्यान में रखकर उच्चरित ब और व को क्रमशः व और व़ न लिखकर ब और व ही लिखा गया है।

एक बात और। हस्तलिखित पोथियों में प्रायः छन्द के एक चरण को इकाई मानकर इस प्रकार लिखा गया है, जिससे शब्द एक-दूसरे से पृथक् नहीं मालूम पड़ते। या तो समग्र चरण या पोथी की समग्र पंक्ति के ऊपर एक ही लकीर दे दी गई है, अथवा जहाँ एक लकीर नहीं है, वहाँ उस पंक्ति अथवा चरण का प्रत्येक अक्षर समान दूरी पर अलग-अलग, किन्तु एक दूसरे से सटाकर, लिखा हुआ है।

आधुनिक लेखों और पुस्तकों के पढ़नेवालों को हस्तलिखित पोथियों के पढ़ने में इस कारण कुछ कठिनाई अवश्य होगी; क्योंकि पढ़ते समय अपने मन से एक में मिले हुए शब्दों को अलग-अलग करके पढ़ना और समझना होगा।

नागरी के य का उच्चारण प्रायः ज के समान होता है, किन्तु किसी अक्षर के साथ संयुक्त होने पर य के समान होता है। जहाँ संयुक्त न होते हुए भी य का उच्चारण अन्तःस्थ य के समान इष्ट है, वहाँ प्रायः उसके नीचे बिन्दु (य़) दे दिया गया है। मूर्धन्य ष का उच्चारण प्रायः ख के समान माना गया है और इसी कारण दुष (दुख), शाषा (शाखा) और वषानि (बखानि) आदि प्रयोग किये गये हैं। ग्रन्थों के लिपिकार अन्य प्रकार की भी बहुत-सी अशुद्धियाँ करते थे, जिनका परिचय मूल उद्धरणों से पाठकों को मिल जायगा। पोथियाँ जहाँ-जहाँ से संगृहीत हुई हैं, उन स्थानों अथवा पुस्तकालयों के नाम विवरण के साथ ही दे दिये गये हैं

हम इस संग्रह को व्यवस्थित तथा वैज्ञानिक नहीं बना सके हैं; क्योंकि यह रिप्रिण्टों का संकलन-मात्र है और प्रयास भी प्रथम है। किन्तु, हमें आशा है कि अगले संग्रह को हम पूर्वनिर्धारित योजना के अनुसार साहित्यिक जगत् को भेंट कर सकेंगे।

इस संग्रह को तैयार करने तथा सामग्री जुटाने में हमारे शोधकर्त्ता श्रीरामनारायण शास्त्री ने जिस तत्परता तथा लगन से कार्य किया है, वह अभिनन्दनीय है।

श्रीमहावीर-जयन्ती
चैत्रशुक्ल १३, सं० २०११ वि०

धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री
अध्यक्ष
प्राचीन हस्तलिखित-ग्रन्थ शोध-विभाग
बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

विषय-सूची

संकेत-विवरण

वि० सं०	विक्रमी संवत्
क्र० सं०	क्रम-संख्या
ग्र० संख्या	ग्रन्थ-संख्या
फ०	फसली सन्
ई०	ईसवी सन्
ना० प्र० स० का०	नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी
खो० वि०	खोज-विवरणिका
र० का०	रचनाकाल
लि० का०	लिपिकाल और लिपिकार
पृ० स०	पृष्ठ-संख्या
प्र० पृ० पं०	प्रतिपृष्ठ पंक्तियाँ
पु० क्र० सं० का०	पुस्तकालय-क्रमसंख्या-काव्य
खो० वि० ग्रं०	खोज-विवरण-ग्रन्थ
बि० रा० भा० प० १ खं०	बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् १ खण्ड
आ० शा० भं० ज० ग्रं०	आमेरशास्त्र-भण्डार, जयपुर (जैन)-ग्रन्थ-सूची
क० प्रा० ता० ग्रं०	कन्नडप्रान्तीय तालपत्रीय ग्रन्थ-सूची
ज० सि० भ० आ० सू०	जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा-सूची
बि० रि० सो० सा० डि० कै० मि०	बिहार रिसर्च सोसायटी डिस्क्रिप्टिव कैटलॉग ऑव मैनस्क्रिप्ट्स
सी० सी० पार्ट	कैटलोगस कैटलोगोरम, स्क्रिप्ट्स-भाग
सी० एस्० सी० खं०	कलकत्ता-संस्कृत-कॉलेज-खण्ड
एच्० पी० एस् खं०	हरप्रसादशास्त्री-खण्ड
बी० एम्०	ब्रिटिश-म्यूजियम
सी० पी० बी०	सेण्ट्रल प्रोविन्स ऐण्ड बरार
डिस्० कैट० एम्०	डिस्क्रिप्टिव कैटलॉग ऑव संस्कृत मैनस्क्रिप्ट्स गवर्नमेण्ट ओरियण्टल मैनस्क्रिप्ट्स लाइब्रेरी, मद्रास

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण

[पहला खण्ड]

ग्रन्थकारों का संक्षिप्त परिचय[1]

[ग्रन्थकारों के नाम के सामने (अंकित) कोष्ठकान्तर्गत संख्याएँ विवरणिका में सम्मिलित ग्रन्थों की क्रम-संख्याएँ हैं ।]

१. अवतार मिश्र (६१)—'नाममाला' के रचयिता; चम्पारन जिला (बरिअरिया ग्राम)-निवासी ; रचना काल १६६४ वि० ।

२. अवधकिशोर वर्मा (२०)—पलामू जिले के कंचनपुर-ग्राम-निवासी सं० १६६४ वि० में वर्त्तमान ; 'साहित्यवाचस्पति' उपाधि से विभूषित ; हिन्दी और संस्कृत के प्राध्यापक ।

३. आनन्द कवि (७६)—'कोकसार' के रचयिता । इनकी मुख्यतः—कोकसार, कोकमंजरी, कोकविलास और आसनमंजरीसार—इन चार रचनाओं का उल्लेख मिलता है । आनन्द कवि के सम्बन्ध में अन्य खोज-विवरणों में उल्लेख हुआ है । नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी के खोज-विवरण के अनुसार कवि की रचना की सबसे प्राचीन प्रति सं० १८१० वि० (सन् १७५३ ई०) की मिली है । सरोजकार के मत से कवि का उपस्थिति-काल १७११ वि० है । 'सरोज-सर्वेक्षण' में डॉ० किशोरीलाल गुप्त ने कवि को कायस्थ जाति का और हिसार (हरियाना) का निवासी बताया है । उन्होंने 'कोकमंजरी' का रचनाकाल १६६८ वि० निश्चित किया है । इसकी पुष्टि में ग्रन्थ का निम्नांकित उद्धरण दिया है—

"कायथ कुरु आनन्द कवि, वासी कोट हिसार ।
कोककला इति रुचि करन जिन यह कियो विचार ॥
ऋतु वसंत सम्बत् सरस सोरह सै अरु साठ ।
कोकमंजरी यह करी धर्म कर्म करि पाठ ॥"

राजस्थान रिपोर्ट के द्वितीय भाग में पृ० सं० १४० और १४१ में किसी आनन्द राय कवि की 'वचनविनोद' नामक एक रचना का उल्लेख हुआ है, जिसकी पुष्पिका में इन्हें भटनागर कायस्थ और काशीवासी तुलसीदास का शिष्य बताया गया है । इस ग्रन्थ का प्रतिलिपि काल १६७१ वि० है । इस ग्रन्थ में कुल १२५ छन्द हैं । इस ग्रन्थ की एक प्रति

१. यह परिचय उपलब्ध सामग्री के आधार पर संकलित है । हम इसमें संशोधन अथवा परिमार्जन के सुझाव का स्वागत करेंगे ।—सं०

बीकानेर की अनूप संस्कृत-लाइब्रेरी में भी सुरक्षित है, जिसका लिपिकाल १६८२ वि० है। 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' में पं० मोतीलाल मेनारिया ने पृ० सं० २८० में एक नाजिर आनन्दराम की चर्चा की है, जिनकी सं० १७६१ वि० में लिखित रचना—'भगवद्गीता'—खोज में मिली है। जोधपुर के राजस्थान-प्राच्यविद्या-प्रतिष्ठान की हस्तलिखित ग्रन्थ-सूची, भाग २ की पृष्ठ-सं० २०८ में आनन्दकवि की रचनाओं की उपलब्ध चार प्रतियों का उल्लेख हुआ है। १६०७ वि० में २६ पृष्ठों में लिपिकृत एक दूसरी प्रति राजस्थान के कोटा में स्थित इन्द्रगढ़ के संग्रहालय में भी सुरक्षित है।

४. कबीरदास (२३-क, २७,३२,८०,८३,८४)—निर्गुण-काव्यधारा के प्रसिद्ध सन्त कवि; कबीर-पन्थ के प्रवर्त्तक; जन्म सं० १४५५ वि०; निर्वाण सं० १५०५ वि०। रामानन्द के शिष्य और धर्मदास के गुरु। इस विवरण में इनके निम्नांकित ग्रन्थ हैं—

१. हनुमानबोध—लि० का० १२७८ साल; अबतक खोज में प्राप्त कबीर-साहित्य में यह ग्रन्थ नवोपलब्ध है।

२. शब्द—यह रचना नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी खोज में मिल चुकी है।[1]

३. शब्दावली—उपर्युक्त ग्रन्थ के समान।

४ बीजक—कबीर का प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ। इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि सन् १८०५ ई० (=१७४८ वि०) की है।

५ ज्ञानसम्बोध—सन्तमहिमा-विषयक कबीर का यह ग्रन्थ सम्भवतः अप्रकाशित है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इस ग्रन्थ की एक प्रति खोज में मिली है।[2]

६. श्वासगुंजार—यह ग्रन्थ कबीरपन्थ की योग-साधना का आध्यात्मिक विवेचन है। सम्भवतः अद्यावधि अप्रकाशित। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को कवि की लगभग पचहत्तर रचनाएँ प्राप्त हुई हैं।[3]

५. कुंजनदास (२१)—'शिवपुराणरत्न' के ग्रन्थकार; बिहार-राज्यान्तर्गत शाहाबाद जिले के 'पँवार' ग्राम निवासी; रचना-काल अज्ञात।

६. कृपाराम (८५)—सं० १८३५ वि० के लगभग वर्त्तमान; रामानुज-सम्प्रदाय के भक्त कवि। ना० प्र० स०, का० को भी यह ग्रन्थ—'भागवत-भाषा'

---

१. दे० 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण', पहला भाग, पृ० सं० १८।
२. दे० 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण', पहला भाग, पृ० सं० ५६।
३. दे० वहीं पृ० सं० १८ और देखिए—

'हस्तलिखित हिन्दी-ग्रन्थों का त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण (१९२६-२८ ई०), पृ० स० ५१।
,, ,, चतुर्दश ,, ,, (१९२९-३१ ई०) ,, ५५।
,, ,, पंचदश ,, ,, (१९३२-३४ ई०) ,, ४१।

खोज में मिला है। 'समयबोध' के ग्रन्थकार इनसे भिन्न हैं। काव्यशास्त्र पर हिन्दी में प्रथम उपलब्ध ग्रन्थ 'हिततरंगिणी' के ग्रन्थकार, सन् १५४१ ई० में वर्त्तमान कवि कृपाराम से ये भिन्न हैं। इनकी चार रचनाएँ नागरी-प्रचारिणी सभा काशी को खोज में मिली हैं। सभा से प्रकाशित हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण की पृ० सं० २६ द्रष्टव्य है। सरोजकार ने 'माधवसुलोचनाचम्पू' नामक ग्रन्थ के रचयिता कृपाराम (नरैनापुर-निवासी) का उल्लेख किया है। सरोजकार ने महेशदत्त द्वारा रचित 'काव्य-संग्रह' में इनके उल्लेख की चर्चा की है। 'सरोज-सर्वेक्षण' में श्रीकिशोरीलाल गुप्त ने खोज में मिले पाँच कृपाराम कवि—(१) ज्योतिष-सार भाषा के रचयिता; १७६२ वि० के लगभग वर्त्तमान; शाहजहाँपुर-निवासी; कायस्थ कुलोत्पन्न; (२) धीरजराम के पिता, १८१० वि० के पूर्व वर्त्तमान ब्राह्मण-कुल के कवि; (३) भाई झड़नजी (सेवापन्थी) के शिष्य; 'कीमियाय सआदत' नामक ग्रन्थ के रूपान्तरकार; (४) कण्ठमाल या विसुनपद के रचयिता और (५) 'हिततरंगिणी' के ग्रन्थकार का उल्लेख किया है। इनके मतानुसार 'भागवत-भाषा, के ग्रन्थकार कृपाराम इन सभी से भिन्न हैं और इनका रचनाकाल १८१५ वि० है।

राजस्थान की खोज-रिपोर्ट में भी १८६५ वि० के लगभग वर्त्तमान, जोधपुर-राज्य के खराड़ी-वासी खिड़िया-शाखा के चारण कवि कृपाराम मिले हैं। इनके रचित सोरठों की संख्या १७५ के लगभग है। इन्होंने 'चालकनेसी' नामक नाटक और अलंकारों से सम्बद्ध एक ग्रन्थ भी लिखा है। 'राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज', तृतीय भाग में पृ० सं० १७४ पर 'नयनदीप' ग्रन्थ के रचयिता एक दूसरे कृपाराम ग्रन्थकार का उल्लेख हुआ है, जिनका रचनाकाल १७८५ वि० है। आयुर्वेद-विषयक यह ग्रन्थ उदयपुर के जगदीश चौक-स्थित श्रीस्वरूपलाल के पास सुरक्षित है। 'राजस्थान-पुरातत्त्वान्वेषण-मन्दिर' की खोज में १९२२ वि० में प्रतिलिपिकृत 'मकरन्दकारिका' और १९०७ वि० में लिपिकृत ज्योतिषसार' नामक रचनाएँ मिली हैं, जिनके ग्रन्थकार भी (पृ० सं० १०४ और १७४) कृपाराम ही है। प्रस्तुत कृपाराम इन सभी कृपारामों से भिन्न प्रतीत होते हैं।

७. कृष्ण (कारख) दास (३८)— विचारगुणावली' के ग्रन्थकार; बिहार-राज्यान्तर्गत दरभंगा जिले के रोसड़ा-वासी। कहा जाता है कि ये सम्भवतः कबीर साहब के समकालीन थे। कबीर-पन्थ की प्रचलित शाखाओं में 'वचनवंशीय' शाखा के सम्भवतः प्रवर्त्तक। धनीधर्मदास के पुत्रों में एक— चूड़ामणिदास— के वंशजों ने भी, कहा जाता है, वचनवंशीय शाखा चलाई थी, जिसका मुख्य स्थान मध्यप्रदेश के रायपुर में कबीरधर्मनगर है। कबीरदास और धर्मदास के

प्रश्नोत्तर में 'काली वंशी' की चर्चा में इस शाखा का उल्लेख है। देखिए नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी से प्रकाशित 'कबीर-वचनावली' की पृ० सं० ३४, विक्रमाब्द १७१७ में भक्तमाल' के ग्रन्थकार राघोदास ने कबीरपन्थ की शिष्य परम्परा के सम्बन्ध में लिखा है, छन्द-सं० ६४० पूर्वार्द्ध में—

"ज्यूँ नारायण नस निरमए त्यूँ कबीर किये सिखनव।
प्रथमहि दास कमाल दुती है दास कमाली॥
पदमनाभ पुनि त्रितय चतुरथय राम कृपाली।
पंचम षष्टम् नीर खीर सप्तम पुनो ज्ञानी॥
अष्टम हैं धर्मदास नवम हरदास प्रमानी।
नव का नव नर तिरन कौ जन राघो कह्यो पयोधिभव॥
ज्यूँ नारायन नव निरमए त्यों कबीर किय सिख नव।"

कबीरपन्थ की यह शिष्य-परम्परा राघोदास ने मौलिक रूप में प्रस्तुत की है।[१]

८. केशवदास (७३,८६,६७,६८,१००. (—ओरछा-नरेश मधुकरशाह और उनके पुत्र राजकुमार इन्द्रजीत सिंह के आश्रित; ओरछा (बुन्देलखण्ड)-निवासी सनाढ्य ब्राह्मण; सुप्रसिद्ध ग्रन्थकार; इनके निम्नांकित हस्तलेख इस संग्रह में हैं —

१. विज्ञानगीता—दो हस्तलेख।

२. रसिकप्रिया—दो हस्तलेख।

३. रामचन्द्रिका—एक हस्तलेख; समय—सं० १७९३ वि० = (सन् १७३६ ई०)।

इनकी रचनाएँ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली हैं।[२] कवि का अनुमित समय सन् १६०० ई० है।

सरोजकार के मत से कवि का उपस्थितिकाल १६२४ वि० है। 'सरोज-सर्वेक्षण' के लेखक ने इनका जन्म सं० १६१२ वि० और मृत्यु सं० १६७४ वि० माना है। लाला भगवान दीन ने इनका जन्म १६१८ वि० में माना है। ओरछा-नरेश मधुकरशाह का शासन-काल १६११—१६४९ वि० था। इन्हीं के शासनकाल में आचार्य केशव ने अपने प्रथम ग्रन्थ 'रसिकप्रिया' की रचना की थी। सं० १६४९ से १६६९ वि० तक का शासनकाल

---

१. दे० हिन्दी भक्तवार्त्ता-साहित्य, प्रथम संस्करण, पृ० ११४।
२. दे० ना० प्र० स०, काशी की खोज-विवरणिका, १९२३—२५ ई० की ग्रं० सं० २०७।
,, १९२६—२८ ई० ,, ,, २३३।
,, १९२९—३१ ई० ,, ,, १९२।
,, १९३२—३४ ई० ,, ,, ११३।
,, १९०९—११ ई० ,, ,, २०५।

था मधुकर शाह के पुत्र इन्द्रजित शाह का, जो रामसिंह या रामसाह के भाई थे और जिन्हें अपने आठों भाइयों में कछौआ-राज्य का हिस्सा मिला था। 'मिश्रबन्धु-विनोद' में इनका रचनाकाल १६१२ वि० विवृत है। आचार्य शुक्ल भी कवि का समय यही मानते हैं। 'हिन्दी-नवरत्न' के लेखक ने १६०८ वि० अनुमित जन्मकाल माना है। 'सुकवि-सरोज' के मत से इनका जन्मकाल १६१८ वि० है। कवि की अन्तिम रचना 'जहाँगीर-जसचन्द्रिका' (१६६९ वि० में रचित) में इन्होंने बुढ़ापा का मार्मिक वर्णन किया है। सरोजकार शिवसिंह ने कवि को भाषा-काव्य का 'भामह' लिखा है। अबतक इनकी ये रचनाएँ ('सरोज-सर्वेक्षण' के अनुसार) मिलती हैं—(१) रतन-बावनी, (२) रसिकप्रिया, (३) कविप्रिया, (४) रामचन्द्रिका, (५) वीरसिंह देवचरित्र, (६) विज्ञानगीता, (७) जहाँगीर-जसचन्द्रिका और (८) नखसिख। कतिपय अन्य रचनाएँ भी इनके नाम से प्रचारित हैं किन्तु वे शोधोपरान्त इनकी नहीं ठहरती हैं। इनके अतिरिक्त, अबतक की खोज में अन्य पांच केशव की रचनाएँ प्राप्त हुई हैं। दे० 'सरोज-सर्वेक्षण', पृ० सं० १६२—१६६। 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास' ('इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐन्दुई ऐ ऐन्दूस्तानी') के लेखक गार्साँ द तासी ने अपनी पुस्तक (प्र० हिन्दुस्तानी एकेडमी, उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद; लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय द्वारा अनूदित), प्रथम संस्करण की पृ० सं० ४० पर लिखा है; "हिन्दुई के ब्राह्मण जाति के एक प्रसिद्ध लेखक हैं, जो सोलहवीं शताब्दी के अन्त और सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जहाँगीर और शाहजहाँ के राजत्व काल में विद्यमान थे।" तासी ने कवि के सम्बन्ध में श्रीरीड (Reid), श्रीविल्सन, ब्रिटिश-म्यूजियम के मेकेंजी-संग्रह, 'हिस्ट्री ऑव दि लिटरेचर ऑव दि हिन्दूज के लेखक वॉर्ड के पास इनकी रचनाओं की प्राप्ति का उल्लेख किया है।

विभिन्न संग्रहालयों में सम्भवतः अबतक प्राप्त पाण्डुलिपियों की संख्या निम्नांकित क्रम से है—

१. **कविप्रिया**—(क) काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा—(१७६७ वि०, १७६९ वि०, १८२२ वि०, १८८२ वि० और १९१४ वि०, में लिपिकृत)—१३ प्रतियाँ।

(ख) हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग—(१७३९ वि०, और १९३१ वि० में लिपिकृत)—५ प्रतियाँ।

(ग) राजस्थान में हिन्दी-हस्तलिखित पोथियों की खोज—(१७४० वि० में लिपिकृत)—१२ प्रतियाँ।

(घ) मन्नूलाल पुस्तकालय, गया—(१८८३ वि० और १९०० वि० में लिपिकृत)—२ प्रतियाँ।

(ङ) बिहार-रिसर्च-सोसयटी, पटना की खोज में उपलब्ध—(लक्ष्मीश्वर पब्लिक-लाइब्रेरी, दरभंगा में सुरक्षित)—१ प्रति।

(च) बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना—(१८८३ वि०, और १९०० वि०, में लिपिकृत) ५ प्रतियाँ। कुल = २७ प्रतियाँ।

२· रसिकप्रिया—(क) काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा—(१७३७ वि०, १८१४ वि०, १९०८ वि० और १९१७ वि० में लिपिकृत)—८ प्रतियाँ।

(ख) राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ-सूची—(१७३० वि० में लिपिकृत)—१ प्रति।

(ग) हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग—(१८४८ वि० में लिपिकृत)—१ प्रति।

(घ) राजस्थान हस्तलिखित ग्रन्थ-सूची—(१७५९ वि०, १७९९ वि०, १८२६ वि०, १८४६ वि०, और १८५९ वि० में लिपिकृत)—८ प्रतियाँ।

(ङ) मन्नूलाल पुस्तकालय, गया—(१८६७ वि० और १९१६ वि० में लिपिकृत)—२ प्रतियाँ।

(च) बिहार-रिसर्च-सोसायटी, पटना की खोज में उपलब्ध ४ प्रतियाँ।

(छ) बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना—(१८५४ वि० १८६७ वि० और १९१६ वि० में लिपिकृत)—११ प्रतियाँ। = कुल ३९ प्रतियाँ।

३. विज्ञानगीता—(क) काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा—(१७०५ वि०, १८४९ वि०, १८९१ वि०, और १८९९ वि० में लिपिकृत)—६ प्रतियाँ।

(ख) बिहार-रिसर्च-सोसायटी, पटना की खोज में उपलब्ध—(१२६५ वि०)—१ प्रति।

(ग) बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् पटना (१२६५ वि० में लिपिकृत)—४ प्रतियाँ। = कुल ११ प्रतियाँ।

४· रामचन्द्रिका—(क) काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा—(१८४९ वि०, १८८२ वि०, १८८८ वि०, में लिपिकृत)—८ प्रतियाँ।

(ख) हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग—(१८८५ वि०, १८९९ वि० और १९०५ वि० में लिपिकृत)—७ प्रतियाँ।

(ग) राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज—(उदयपुर के कविराव मोहन सिंह को संग्रहालय में स्थित)—१ प्रति।

(ध) मन्नूलाल पुस्तकालय गया—(१८३५ वि० १९३७ वि० में लिपिकृत)—३ प्रतियाँ ।

(च) बिहार-रिसर्च-सोसायटी, पटना को खोज में उपलब्ध—(१८१४ वि० में लिपिकृत और सुखपुर, भागलपुर के चिन्तामणि सिन्हा के संग्रहालय में सुरक्षित)—१ प्रति ।

(छ) बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना—(१७९३ वि० में लिपिकृत)—१ प्रति । =कुल २० प्रतियाँ ।

५· रतनबावनी—(क) काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा -(राजा मधुकरशाह के पुत्र कुँवर रतनसिंह और अकबर-सेना के युद्ध का वर्णन) -१ प्रति ।

आचार्य केशवदास की समस्त रचनाएँ हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद से तीन भागों (प्रथम भाग —(१) रसिकप्रिया, (२)कविप्रिया; (द्वितीय भाग)—(१) रामचन्द्र-चन्द्रिका, (२) छन्दमाला, (३) शिखनख; तृतीय भाग—(१) रतनबावनी, (२) वीरचरित्र, (३) जहाँगीर-जसचन्द्रिका, (४) विज्ञानगीता – में (आचार्य विश्वनाथमिश्र द्वारा सम्पादित) प्रकाशित हुई हैं ।

६. गुरु नानक साहब (१५)—'सतनाम विहंगम' के ग्रन्थकार' ; सिक्ख-पन्थ के प्रसिद्ध संस्थापक; तिलावरी (पंजाब)-निवासी ; जाति के वेदी खत्री ; सं० १५२६—१५९६ तक वर्त्तमान ; नामदेव छीपी के समकालीन वर्णनात्मक तथा उपदेश-शैली में महत्वपूर्ण रचना। इनके शिष्यों में इन प्रवचनों का विशेष प्रचार है । सिक्ख-मत के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'जपुजी साहब' तथा 'सुखमनि-साहब' के आधार पर ही इस ग्रन्थ की रचना हुई है । नागरी-प्रचारणी सभा, काशी को इनकी अन्य तीन सुखमनी, अष्टांग योग, नानकजी की साखी और गुरुनानक-वचन—पाण्डुलिपियाँ खोज में मिली हैं। विस्तार के लिए दे० खोज-विवरणिका, १९०२, ग्रं०सं० २१८; १९०६,—१९०८, ग्रन्थ-सं० १९६; १९०९—१९११, ग्रं० सं० २०५; २०७; १९२३-२५, ग्रं० सं० २९३; १९२६-२८, ग्रं० सं० ३१५; १९२९-३१, ग्रं० सं० २३६; १९३२-३४, ग्रं० सं० १५१ । गुरुनानक साहब की रचनाओं के सम्बन्ध में ये सूचनाएँ भी मिलती हैं—

१. श्रीगुरुग्रन्थ-साहिब में इनकी रचनाएँ 'महला' के नाम से संकलित हैं ।[1]

---

१. दे० श्रीगुरुग्रन्थदर्शन (इलाहाबाद-स्थित अग्रवाल डिग्री कॉलेज के हिन्दी-विभागाध्यक्ष डॉ० जयराममिश्र-लिखित), पृ० २३ ।

२. श्री गुरुग्रन्थ-साहिब में वाणियों का क्रम है—(क) जपुजी (१ पृ० से ८ पृ० तक), (ख) सोदरु (पृ० ८ से १० तक) (ग) सो पुरखु (पृ० १० से १२), (घ) सोहिला (पृ० १२ से १३). (ङ) रागमाला (पृ० १२ से १३५३) (च) आदि श्रीगुरुग्रन्थ साहबजी (पृ० १३५३ से १४३०)।[१]

३ पिनकाट के अनुसार श्रीगुरुग्रन्थ साहिब में ३३८४ शब्द हैं और उनमें १५ ५७५ बन्द हैं। इनमें से २९४९ बन्द आदि गुरुनानकदेव 'महला १' द्वारा रचित हैं।[२]

४. 'महला १' का अभिप्राय सिक्खों के आदि गुरुनानक से है। इसका संकलन सिक्खों के पाँचवें गुरु अर्जुनदेव ने १६६१ वि० (१६०४ ई०) में किया था।[३]

५. सिक्खों के आदि गुरु नानक को कोई गुरुनानक, कोई बाबानानक कोई नानक शाह, कोई गुरुनानकदेव, कोई नानक पातशाह और कोई नानक साहब कहते हैं। इनका जन्म वैशाख सुदी ३, सं० १५२६ वि० (५, अप्रैल. १४६९ ई०) में तलवण्डी नामक स्थान में हुआ था। सिक्ख लोग तलवण्डी को ननकाना साहब भी कहते हैं। तलवण्डी लाहौर जिले (पाकिस्तान) में, लाहौर शहर से ३० मील दक्षिण-पश्चिम में है। उनके पिता का नाम कालू एवं माता का नाम तृप्ता था।[४]

६. नानकजी ने देश-देशान्तर को तीन बार यात्रा की थी, जिसे 'उदासी' (विचरण-यात्रा) कहते हैं। पहली उदासी १५०७ ई० से १५१५ ई० तक, दूसरी उदासी १५१७ ई० से १५१८ ई० तक और तीसरी उदासी १५१८ ई० से १५२१ ई० तक की थी। इस यात्रा में उन्होंने हरिद्वार, अयोध्या प्रयाग, काशी, गया, पटना, असम, जगन्नाथपुरी, रामेश्वर सोमनाथ द्वारिका, नर्मदातट, बीकानेर, पुष्करतीर्थ, दिल्ली, पानीपत, कुरुक्षेत्र, मुलतान, लाहौर, ऐमनाबाद, सियालकोट, सुमेर-पर्वत, बहावलपुर साधुबेला, (सिन्ध), मक्का, मदीना, बगदाद, बलख बुखारा, काबुल, कन्धार आदि स्थानों का भ्रमण किया था।[५]

उनकी कविता में उपमा, रूपक अलंकारों और अन्योक्तियों की प्रधानता तो है ही, सिटी, माझ गररड़ी, आसा, गूजरी, बउहंस सोरठि, धनासरी, तिलंग, सूही, बिलावल,

---

१. दे० गुरु ग्रन्थ दर्शन, वही, पृ० ३१।
२. दे० वही पृ० २२।
३. दे० नानकवाणी (डॉ० जयराम मिश्र-लिखित और मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद से प्रकाशित), पृ० १।
४. दे० उपर्युक्त पृ० ८१५।
५. दे० हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २, पृ० २८०।

रामकली, मारू, तुखारी, भरेउ, वसन्त, सारंग, मलार और प्रभाती रागों का प्रयोग हुआ है। इनकी रचना में फारसी, मुलतानी, पंजाबी, सिन्धी, व्रजभाषा और हिन्दी-भाषा है।[१]

७. नानक के जीवनकाल में बहलोल लोदी, सिकन्दर लोदी, इब्राहीम लोदी, बाबर और हुमायूँ राजा हुए। अपने जीवन के प्रथम पचास वर्षों में नानक साधु के वेष में यात्रा करते और मनन-चिन्तन करते रहे। सन् १५२८ और १५३८ ई० के बीच उन्होंने अपने अनुयायियों का संगठन किया। उन्होंने एक चर्या, एक ग्रन्थ, एक राष्ट्रीय आवास और संयत नियमावली प्रस्तुत की। उन्होंने करतारपुर में नगर बसाया और वहीं अपना अधिकांश वाणी-काव्य लिखा। उन्होंने हजारों पद लिखे तथा अपने रचित पदों को ३१ राग-रागिनियों में बाँधा। कबीर और नानक के साहित्यिक और नैतिक दृष्टिकोण में बहुत अन्तर था; क्योंकि नानक हिन्दू साहित्यिक और नैतिक परम्पराओं को कहीं अच्छी तरह समझते थे।[२]

८. कवि के सम्बन्ध में 'शिवसिंह सरोज' में कवि-सं० ३९१ से ३२३ के अन्तर्गत लिखा है—"नानकजी वेदी खत्री, तिलवड़ा गाँव (पंजाब) वासा, सं० १५२६ में उ०।....इनका ग्रन्थ 'ग्रन्थ साहब' के नाम से नानकपन्थियों में पूजनीय है। उसमें दस गुरुओं की कविता के सिवा और भक्त कवि लोगों का काव्य भी शामिल है।"

९. 'सरोज-सर्वेक्षण' के लेखक डॉ० किशोरीलाल गुप्त के मत में—'सरोज में गुरुनानक से सम्बद्ध सभी तथ्य और तिथियाँ ठीक हैं। गुरुनानक की सारी रचनाएँ ग्रन्थ साहब के पहले महले में हैं। ये रचनाएँ साखी, सुखमनी और अष्टांगयोग हैं। इनकी रचनाएँ हिन्दी में है।"[३]

१०. गार्सां द तासी ने ('इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐन्दुई' ऐ ऐन्दु स्तानी) 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास' (अनुवादक, लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय) में लिखा है—'सिक्ख-सम्प्रदाय के प्रसिद्ध संस्थापक, नानकशाह, उसके आदि ग्रन्थ, अर्थात् पहला ग्रन्थ, नामक पूज्य ग्रन्थ के रचयिता हैं। सम्भवतः, यह वही है, जो 'पोथी गुरु नानकशाही' (गुरु नानकशाह की पोथी) के शीर्षक के अन्तर्गत ईस्ट इण्डिया हाउस में है।

---

१. दे० 'हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २, पृ० २८१।
२. दे० 'भारतीय वाङ्मय', पृ० सं० ४७८ और ४७९।
३. दे० 'सरोज-सर्वेक्षण' : डॉ० किशोरीलाल गुप्त (प्रकाशक : हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद), पृ० ३७८।

पैरिस के राजकीय पुस्तकालय में, हिन्दुस्तानी में, नानक का एक हस्तलिखित इतिहास है, जिसमें इस प्रसिद्ध सुधारक के अनेकानेक वाक्य उद्धृत हैं, और 'ईस्ट इण्डिया हाउस' में, ब्रजभाखा' में लिखित 'निर्मल ग्रन्थ', अर्थात् 'पाक-पुस्तक' और 'पोथी सरव गनि' नामक दूसरी पुस्तक में नानक के सिद्धान्तों की व्याख्या सुरक्षित है।"[1]

११. मिश्रबन्धु-विनोद में इनका विवरण कवि-सं० ११६ के अन्तर्गत हुआ है।

१२. प्रयाग के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के संग्रहालय में नानकदेव की ११ पृष्ठों में १८१० वि० की लिखित एक रचना है, जो वेष्टन-सं० १३६० में ग्रन्थ-सं० २१६४ के अन्तर्गत १६वाँ संग्रह है।[2]

नाभादास के उत्तरवर्ती भक्तवार्त्ता-साहित्य के प्रमुख ग्रन्थकार राघोदास ने विक्रमाब्द १७१७ में रचित 'भक्तमाल' की छं० सं० ६३५, पूर्वार्द्ध में नानक-पन्थ की शिष्य-परम्परा का निम्नांकित उल्लेख किया है—

"श्री नानक गुरु पद्धति चली ताको करौं बखान जू।
निराकार निरलेप निरंजन नानक मिलिया।।
उनके अंगद भए राम भजि रामहिं रलिया।
अंगद को पुनि अमरदास अमरा पद पाये।।
रामदास तापारि राम कैं अर्जुन भाये।
हरि गोविन्द हरिराम जन हरि कूपन तजो हद आन जू।।
श्री नानक गुरु पद्धति चली ताकों करूँ बखान जू।।"[3]

१०. **गोस्वामी तुलसीदास** (२, ३, ४, ५, १८, ३६, ४०, ४१, ४२, ६६, ७४, ७५, ८१, ६६)—हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ सन्तकवि। निम्नांकित रचनाओं की कुल सत्रह प्रतियाँ मिली हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है—

क्र० सं०	ग्रन्थनाम	प्रतियाँ	लिपिकाल
१.	रामचरितमानस	१५	१८५८ वि०, १९२२ वि०, १८४७ वि०, १८८८ वि०, १८५६ वि०, १८६४ वि० १८३६ वि०, १९०६ वि०।
२.	विनयपत्रिका	१	१८०६ वि०।
३.	छप्पय रामायण	१	×

१. दे० हिन्दुई साहित्य का इतिहासः मूल-लेखक गार्सां द तासी; अनुवादक : लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, (प्रकाशक : हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, उत्तरप्रदेश) पृ० १२३-१२४।

२. दे० 'पाण्डुलिपियाँ' पृ० ३६२।

३. दे० 'हिन्दी-भक्तवार्त्ता-साहित्य', प्रथम संस्करण, पृ० ११४।

११. चरनदास (६६)—चरणदासी-सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक ; प्रसिद्ध सन्त ; दहरा (अलवर-राजस्थान)-निवासी ; धूसर बनियाँ ; सुखदेव के शिष्य और सहजोबाई के गुरु ; जन्म—१७६० वि० ; मृत्यु—१८३८ वि० ; प्रथम नाम रणजीत। कवि के अट्ठारह ग्रन्थ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिले हैं।[1]

ध्यानदास के शिष्य ; १७४६ वि० में वर्त्तमान ; 'नेहप्रकाशिका' के रचयिता; बालकृष्ण नायक के गुरु चरनदास से भिन्न। इनके पिता का नाम मुरलीधर और माता का कुंजी था। अपने पीछे इन्होंने ५२ शिष्य छोड़े। नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी को खोज में इनके द्वारा रचित चौदह ग्रन्थ (१. अष्टांगयोग, २. नासकेत, ३. सदेह-सागर, ४. भक्तिसागर, ५. हरिप्रकाशटीका, ६. अमरलोक अखण्डधाम, ७. भक्तिपदारथ, ८. शब्द, ९. मन बिरक्तकरन गुटका १०. रासमाला, ११. ज्ञानस्वरोदय, १२. दान-लीला, १३. ब्रह्मज्ञानसागर और १४. कुरुक्षेत्र-लीला) खोज में मिले हैं। 'ज्ञानस्वरोदय' की एक पाण्डुलिपि क० मु० भाषाविज्ञान-विद्यापीठ, आगरा के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-संग्रहालय में भी सुरक्षित है। 'शिवसिंह-सरोज' के ग्रन्थकार ने कवि-सं० २३६ के अन्तर्गत इन्हें फैजाबाद जिले के पण्डितपुर ग्राम का निवासी, १५३७ वि० (सन् १४८० ई०) में उपस्थित और 'ज्ञानस्वरोदय' ग्रन्थ का रचयिता लिखा है। ग्रियर्सन ने अपने इतिहास-ग्रन्थ में (किशोरीलाल गुप्त द्वारा सम्पादित-अनूदित, हिन्दी-प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी से १९५७ में प्रकाशित) पृष्ठ-सं० ७७ पर इनका उल्लेख किया है और इनका उपस्थिति-काल सरोजकार के अनुसार ही माना है। इसपर किशोरीलाल गुप्त की टिप्पणी है—"ज्ञानस्वरोदय के रचयिता चरणदास न तो पण्डितपुर, जिला फैजाबाद के ब्राह्मण थे और न सन् १४८० ई० में उत्पन्न हुए थे। ग्रियर्सन ने यह विवरण सरोज से एवं सरोजकार ने महेशदत्त के 'भाषाकाव्य-संग्रह' से लिया है। चरणदास अलवर-राज्य के अन्तर्गत दहरा-नाम के गाँव में मुरली नामक धूसर बनिये के घर भाद्रपद शुक्ल ३, मंगलवार, संवत् १७६०, को उत्पन्न हुए थे। इनकी मृत्यु सं० १८३९ में अगहन सुदी ४ को दिल्ली में हुई। 'भाषा-काव्यसंग्रह' के अनुसार सं० १५३७ चरणदास का मृत्युकाल है। इसे ग्रियर्सन ने जन्मकाल मान लिया है। चरणदास के बचपन का नाम रणजीत था। बाल्यावस्था में यह घूमते-घामते दिल्ली पहुँचे, जहाँ गुरु सुखदेव से इनकी भेंट हुई और ये चरणदास हो गये। इन्होंने चरणदासी सम्प्रदाय चलाया।

मिश्रबन्धु-विनोद में इनके द्वारा रचित 'ज्ञानस्वरोदय' का रचनाकाल १५३७ वि० लिखा है। विनोद के लेखक ने तीन अन्य चरणदास नाम के ग्रन्थकारों का उल्लेख किया है, जिनका स्थितिकाल १७६० वि०, १७४९ वि० और १८१० वि० माना है।[2]

---

१. दे० नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) का खोज-विवरण, १९०५ ग्रन्थ-सं० १७, १८,१९, १९०६-८, ग्रन्थ०-सं० १४७ ; १९०९-११, ग्रन्थ-सं० ४५ ; १९१७-१९, ग्रन्थ-सं० ३७ ; १९२०-२२, ग्रन्थ-सं० २९ ; १९२३-२५, ग्रन्थ-सं० ७४ ; १९२६-२८, ग्रन्थ-सं० ७८ ; १९२९-३१ ग्रन्थ सं० ९५ ; १९३२-३४, ग्रन्थ-सं० ३८।

२. दे० मिश्रबन्धु-विनोद (प्रकाशक : गंगा पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ, पंचम सं०, २०१३ वि०) पृ० सं० १६६, कवि-सं० ११५।

'सरोज-सर्वेक्षण' के लेखक डॉ० किशोरीलाल गुप्त ने इनके द्वारा रचित ३४ ग्रन्थों की सूची दी है, जो नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी के खोज-विवरणों पर आधृत है। चरणदास के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ज्ञानस्वरोदय' के अतिरिक्त अमरलोक अखण्डधाम, अष्टांगयोग, कालीनाथन-लीला, कुरुक्षेत्र-लीला चरणदास के पद, चरणदास-सागर, जागरण-माहात्म्य, जोग, जोगशिक्षा-उपनिषद् तत्त्वजोग नामोपनिषद्, तेजबिन्दोपनिषद् दानलीला, धर्म-जहाज, नासिकेत, निर्गुन बानी, पंच उपनिषद्, अथर्वणवेद की भाषा, पद और कवित्त, बानी चरणदास की, बाल लीला, ब्रजचरित्र, ब्रह्मज्ञानसागर, भक्तिपदार्थ, भक्तिसागर, मटकी और हेली, मन विरक्तकरन गुटका माखनचोरी लीला, योगसन्देहसागर या सार, राममाला शब्दों के मंगलाचरण या शब्द, षटरूपमुक्ति, गुरुचेले की गोष्ठी, सर्वोपनिषद्, स्फुट पद और कवित्त तथा हंसनाद उपनिषद् नामक ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को खोज में मिली हैं। खोज में 'अनेक प्रकार' नामक एक रचना का भी हस्तलेख प्राप्त हुआ है, जिसमें ब्रजचरित्र, अमरलोक-कथा, योगसार, ज्ञानस्वरोदय, ब्रह्मज्ञानसागर भक्तिपदार्थ मन विरक्तिकरन गुटका सन्देश-सागर आदि आठ ग्रन्थ और फुटकर छप्पय, कवित्त, स्तुति आदि हैं।[1]

'राजस्थान-रिपोर्ट' के भाग १, पृ० ८४ के आधार पर डॉ कि० ला० गुप्त ने राजस्थान-खोज में 'भक्तिसागर' नामक ग्रन्थ का उल्लेख किया है, जिसमें कवि की १४ रचनाएँ हैं। यह ग्रन्थ लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से सन् १८९८ ई० में प्रकाशित भी हुआ था, जिसमें उपर्युक्त चौदह रचनाओं में १३ रचनाएँ प्रकाशित थीं। इसका रचनाकाल १७८१ वि० है।[2]

चरणदास की शिष्या सहजोबाई ने 'सहजप्रकाश' नाम से इनका जीवनचरित्र लिखा है। इसके अनुसार इनका जन्म १७६० वि० में और इनकी मृत्यु १८३९ वि० में हुई। इनके बावन शिष्यों में सहजोबाई दयाबाई, श्यामचरण, रामरूप, गुरु भक्तानन्द और जसराम प्रसिद्ध थे। अपने सम्प्रदाय के अनुयायियों में ये कृष्ण के अवतार माने जाते थे। निर्गुनिए होकर भी इन्होंने कृष्णलीला-सम्बन्धी ग्रन्थ रचे हैं। इन्हें 'श्याम-चरणदासाचार्य' नाम से स्मरण किया गया है।[3]

'हिन्दुस्तानी एकेडमी' से डी० लिट् उपाधि के लिए डॉ० त्रिलोकीनारायण दीक्षित-लिखित 'चरनदास' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुका है।

डॉ० रामचन्द्र तिवारी ने चरनदास के सम्बन्ध में लिखा है—"भागवत पुराण का ग्यारहवाँ स्कन्ध इनकी प्रेरणाओं का स्रोत है। समन्वयात्मक दृष्टिकोण होते हुए भी इन्होंने

---

१. दे० 'सरोज-सर्वेक्षण' (हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद से सन् १९६७ ई० में प्रकाशित), प्रथम संस्करण, पृ० २८३, २८४, २८५।
२. दे० उपर्युक्त।
३. दे० उपर्युक्त।

योग-साधना पर अधिक बल दिया है। इसीलिए, रामदास गौड़ ने इनके सम्प्रदाय को योगमत के अन्तर्गत रखा है। विल्सन महोदय ने इसे वैष्णव-पन्थ माना है, जो गोकुलस्थ गोस्वामियों के महत्त्व को कम करने के लिए प्रवर्त्तित हुआ था। बड़थ्वाल ने प्रेमानुभूति की प्रगाढताके कारण इसे निर्गुण-सम्प्रदाय के अन्तर्गत रखना ही उचित माना है। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने इसे ज्ञान, भक्ति और योग का समन्वय करने वाला पन्थ कहा है। समन्वयात्मक दृष्टिकोण होने पर भी इनका मूल स्वर सन्तों का ही है। इनमें काव्य-रचना की अच्छी क्षमता थी और इनकी रचनाएँ सामान्य सन्तों से उत्कृष्ट हैं। इनकी समस्त रचनाओं का प्रमुख विषय योग ज्ञान भक्ति, कर्म और कृष्णचरित का दिव्य सांकेतिक वर्णन है।[1] हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग के संग्रहालय में इनकी—१. अष्टांगयोग भाषा (लि० का० १९२२ वि०, १९३१ वि०), २. हठयोग (लि० का० १८०६ वि०), ३ अक्षरशरणी (लि० का० १८८५ वि०), ४. ज्ञानस्वरोदय (लि० का० विक्रमाब्द १८०५, १८६०, १८७६, १८८८; १९२६ १९५१); ५ नासिकेत-कथा (लि० का० १८३४ वि०)—रचनाओं के पन्द्रह हस्तलेख संकलित हैं।[2] पूना-विश्वविद्यालय के जयकर-ग्रन्थालय' में १८९० वि० में लिपित 'स्वरोदय' का १२ पृष्ठों का (दोहा चौपाई तथा छप्पय छंद) हस्तलेख सुरक्षित है, जिसकी ग्रन्थ क्र० सं० ४३।१० है।[3] उदयपुर (राजस्थान) के घोली बावड़ी में स्थित रामहारा-संग्रहालय में गुटका-सं० २६ में कवि की रचना 'नासकेत' (१०८ दोहे और १९५६ चौपाइयाँ) संकलित है। भीडर (राजस्थान) के माणिक्य ग्रन्थ-भण्डार में गुटका-सं० ३० में भी 'नासकेत' की पाण्डु-लिपि है। उदयपुर के अन्ताणो-संग्रह में भी ७४ पृष्ठों में लिखित 'नासकेत' की पाण्डुलिपि सुरक्षित है।[4] राजस्थान प्राच्यविद्या-प्रतिष्ठान, जोधपुर के संग्रहालय में १९०२ वि० में लिपिकृत 'स्वरोदय' का एक हस्तलेख सुरक्षित है।[5] सन्त चरनदास को 'भक्तितरंगणी' को १९४१ वि० में, ४० पृष्ठों में लिपिकृत प्रति और 'ज्ञानस्वरोदय' को १९०७ वि० में ३१ पृष्ठों में लिपित दूसरी प्रति भी जोधपुर के राजस्थान प्राच्यविद्या-प्रतिष्ठान में सुरक्षित है।[6]

---

१. दे० हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २ (ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी), प्रथम संस्करण, पृ० १७०।
२. दे० हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से प्रकाशित 'पाण्डुलिपियाँ' की पृ० सं० ८६, वे० सं० और ग्रन्थ-सं० १२६०।१९१९, १२६३।१९३०; पृ० सं० ३८४, वे० सं० और ग्रन्थ-सं० १००८।१६०३; पृ० सं० ३८८, वे० सं० और ग्रन्थ-सं० १३६५।२१७०, १४१७।२३७६, १३५८।२५७०, १७६३।३३६६, १३९७।२२९०, १५९९।३१००१, १२८४।१९०१, १४६१।२१६८; पृ० सं० ४४३, वे० सं० और ग्रन्थ-सं०-८१४।१११२, १०८७।१९८४, १०८९।१६८६, १२६?।१९२८।
३. दे० पुणे विद्यापीठ-पत्रिका : ज्ञानखण्ड, पृ० २९।
४. दे० रा० में० हि० के ह० ग्रन्थ की खोज (उदयसिंह भटनागर, राजस्थान-विश्वविद्यापीठ, उदयपुर, प्रथम स०) पृ० १६; २२ और १८१।
५. दे० राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला, भाग १, प्र० सं०, ग्रन्थ-सं० १७५६।
६. दे० राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला, हस्तलिखित ग्रन्थ-सूची, भाग २, पृ० ११८, ११९, ग्रन्थ सं० ५४५४ और ६६०८।

इसी प्रतिष्ठान के इन्द्रगढ़ पोथीखाना में भी 'स्वरोदय' की पाण्डुलिपि संकलित हुई है।[1] जयपुर (राजस्थान) के पाड्या में स्थित श्री दि० जैन मन्दिर लूणकरजी में संगृहीत 'ज्ञानस्वरोदय' का लेखनकाल १८९५ है।[2] जयपुर के ही बड़ा में तेरहपन्थियों के श्री दि० जैन मन्दिर के शास्त्र-भण्डार में १८३६ वि० में प्रतिलिपित 'ज्ञानस्वरोदय' की पाण्डुलिपि सुरक्षित है।[3]

संवत् १८११ में चरनदास से दीक्षित, १८०० वि० जनमे, दिल्ली के निकटस्थ जैसिंहपुर ग्रामवासी रामरूप ने 'चरनदास की परिचयी' लिखी है, जिसकी १८४२ में लिखित प्रति दिल्ली-निवासी गणेशदत्त मिश्र के पास सुरक्षित है। २५० पृष्ठों और १३९५ छन्दों में रचित इस 'परिचयी' में चरनदास का जन्म-सं० १७६० वि० माना है।[4]

१२. ज्ञानदास (२८)—'श्रीरामार्णव' के ग्रन्थकार, अकोढ़ो ग्राम, विन्ध्याचल (मिर्जापुर) निवासी; जाति के ब्राह्मण; साधु; सं० १८१८ वि० के लगभग वर्त्तमान। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इनके ग्रन्थ खोज में मिले हैं।[5] 'रामायण पिंगल' नामक इनकी दूसरी रचना भी खोज में मिली है।[6]

१३. धर्मदास (२३ ख, २३ ङ, २६, २९, ३७, ९०)—कबीरदास के शिष्य; सं० १४५७ के लगभग वर्त्तमान; कबीरपन्थ के प्रचारक; कबीरपन्थ में आने से पूर्व का नाम जुड़ावन; जाति के बनिया और बान्धवगढ़ (मध्यप्रदेश)-निवासी। धर्मपत्नी 'अमीना' से नारायणदास और चूड़ामन नामक दो पुत्र; नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इनकी अनेक पोथियाँ खोज में मिली हैं।[7] 'हिन्दी-साहित्य-कोश', भाग २ की पृष्ठ-सं० २५५ में इनके सम्बन्ध की निम्नां-

---

१. दे० उपर्युक्त की पृ० सं० ३६०, क्र० सं० ९४ (क)।

२. दे० राजस्थान के जैनशास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची (द्वितीय भाग), सं० कस्तूरचन्द कासलीवाल, प्रथम संस्करण, पृ० सं ३६, ग्रन्थ-सं० ३३।३६५।

३. दे० वही, पृ० सं० ३५१, ग्रन्थ-सं० २४४८, वेष्टन-सं० २५६५।

४. दे० हिन्दी-भक्तवार्त्ता-साहित्य, डॉ० ललिताप्रसाद दुबे-लिखित, साहित्य-सदन, देहरादून से प्रकाशित) प्रथम संस्करण, पृ० २६७।

५. दे० नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज-विवरण, १९०१, ग्रन्थ-संख्या २१ ; १९०३, ग्रन्थ-संख्या १४५।

६ दे० नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी की खोज विवरणिका सन् १९२०-२२, सन् १९१३-२५, ग्रन्थ-सं० १९१।

७. दे० ना० प्र० स०, का०, खो० वि०—१९०६-८ ई०, ग्रन्थ-संख्या—१५८ ; १९२३-२५ ग्रन्थ-संख्या १०० ; १९३२-३४, ग्रन्थ-संख्या ५३।

कित सूचना है—"सन्त-सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार-धनी धर्मदास कबीर से आयु में छोटे थे और इनकी मृत्यु कबीर की मृत्यु के पच्चीस वर्ष बाद हुई। इस प्रकार, सामान्य रूप से धर्मदास का जीवन-सं० १४७५ और १५८५ वि० के बीच मानना उचित होगा। प्रारम्भ में, साकारोपासना के समर्थक। नागरी-प्रचारिणी सभा काशी को 'कबीर के द्वादश पन्थ' नामक रचना खोज में मिली है।"[१] इनका पूर्वनाम जुड़ावन था। मध्य-प्रदेश के छत्तीसगढ़ में स्थित धमखेड़ा में इनकी गद्दी अवस्थित है। कबीरपन्थ में आने के बाद इन्होंने अपनी जायदाद तथा अन्य सभी सुखोपभोग-सम्पत्ति का परित्याग कर दिया।

मिश्रबन्धु-विनोद के अनुसार इस नाम के चार ग्रन्थकार खोज में मिले हैं। १. १५७५ वि० में कबीरदास की गद्दी के अधिकारी 'कबीर के द्वादश पन्थ 'निर्भयज्ञान' और 'कबीरबानी' के ग्रन्थकार धर्मदास का जन्मकाल १५०० वि० और मरणकाल १६०० वि० लिखा है। ये बांधोगढ़ के वासी कसौंधन बनिया थे। दे० मिश्रबन्धु-विनोद, पृ० सं० १६७ और कवि-सं० ११२। २. विनोद की पृ० स० २६१ की कवि-सं० १६१ में 'आत्मबोध' के रचयिता एक दूसरे धर्मदास उल्लिखित हुए हैं। ३. काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के प्रथम त्रैवार्षिक खोज-रिपोर्ट और चतुर्थ खोज-रिपोर्ट के आधार पर मिश्रबन्धुओं ने 'विनोद' की पृ० सं० ३२५ और कवि-सं० ३५५ में 'महाभारत' ग्रन्थ के ग्रन्थकार धर्मदास का रचनाकाल १६४४ वि० माना है और १७११ वि० में भी उपस्थिति लिखी है। ४. 'विनोद' में पृ० सं० २५६ तथा कवि-सं० १८४ में 'उपदेशमाला बालबोध' के रचयिता धर्मदास गणि का रचनाकाल १५८५ वि० सिद्ध किया है।

१४. **नगनारायण सिंह (२४)**—बिहार-प्रान्तस्थ सारन जिले के 'पटेहीं' ग्राम-निवासी; अनेक हिन्दी संस्कृत-ग्रन्थकारों के आश्रयदाता ; फारसी, हिन्दी और संस्कृत में समान भाव से लिखनेवाले कवि।

१५. **नन्ददास (६)**—स्वामी विट्ठलदास के शिष्य; सं० १६२४ वि० के लगभग वर्त्तमान; तुलसीदास के भाई; अष्टछाप के कवियों में प्रमुख; इनके अन्य ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में उपलब्ध हुई है। दे० ना० प्र० स०, का० खो० वि० १६०१, ग्र० सं० ११, ६६; १६०२, ग्र० सं० २०० ए, बी, सी, डी, ई; १६०३, ग्र० सं० १५३; १६०६—११, ग्र० सं० २०८ बी, डी, ए, सी, ई, एफ्; १६१७-२०, ग्र० सं० ११६ ए०; १६२०-२१ ग्र० सं० ११३ डी, ई; १६२३-२५ ग्र० सं २६४; १६२६-२८ ग्र० सं० ३१६ ए, बी, सी, डी, ई, एफ् जी; १६२६—३१, ग्र० सं० २४४।

अबतक इनकी निम्नांकित पन्द्रह पोथियाँ खोज में उपलब्ध हुई हैं—

१. अनेकार्थमंजरी (नाममाला) २. भँवरगीत, ३. नाममंजरी या मानमंजरी, ४. फूलमंजरी, ५. रानो मंगो, ६. रासपंचाध्यायी, ७. रुक्मिणी-मंगल, ८. विरहमंजरी, ९. दशमस्कन्ध भागवत, १०. नामचिन्तामणि माला, ११. जोग-लीला, १२. श्यामसगाई, १३. नासुकेतपुराण-भाषा, १४. रसमंजरी और १५. विरहमंजरी।

इनका जन्मकाल सन् १५३३ ई०, सम्प्रदाय-प्रवेश सन् १५५९ ई० तथा गोलोकवास सन् १५८६ ई० माना गया है। 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता में उन्हें गोस्वामी तुलसीदास का भाई कहा गया है। हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २ के अनुसार इनकी निम्नांकित रचनाएँ प्रकाशित-अप्रकाशित मिलती हैं— १. रासपंचाध्यायी, २. भँवरगीत, ३. सिद्धान्त-पंचाध्यायी, ४. श्याम-सगाई, ५. रसमंजरी, ६. अनेकार्थमंजरी ७. मानमंजरी नाममाला, ८. विरहमंजरी, ९. रूपमंजरी, १०. रुक्मिणीमंगल, ११. गुरुमहिमा, १२. नाममहिमा, १३. विनय-भावना, १४. गोवर्द्धनलीला और १५. सुदामाचरित। इनके सम्बन्ध में कहा गया है— जहाँ और कवि 'गढ़िया' हैं, नन्ददास 'जड़िया' हैं। इनकी सम्पूर्ण कृतियों के दो संस्करण—पण्डित उमाशंकर शुक्ल द्वारा सम्पादित और प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित 'नन्ददास' तथा व्रजरत्नदास द्वारा सम्पादित और नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा प्रकाशित 'नन्ददास ग्रन्थावली'—प्रकाशित हो चुके हैं। नन्ददास अष्टछाप के कवियों में सबसे अल्पवयस्क थे। कहा जाता है, इनके अन्य हजार पद मिलते हैं, जो ग्रन्थावली में नहीं आये हैं। 'रानी मंगो' नामक इनकी एक रचना नागरी-प्रचारिणी-सभा काशी को खोज में मिली है। दे० सभा का चौदहवाँ खो० वि०, ग्रं० सं० २४४ आइ० (पृ० सं० ६५ और ४५६)। यह ग्रन्थ उत्तरप्रदेशीय आगरा जिला के होलीपुरा-स्थित रटोटी-ग्रामवासी डॉ० प्रताप सिंह के पास सुरक्षित है। राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज (तृतीय भाग) की पृष्ठ-सं० २१, २२, ३८, ३९, ५५, ५६, ५७, ६३, ६४, १५० और १८१ पर उदयपुर के धोली बावड़ी-स्थित रामद्वारा में दो रचनाएँ (अनेकनाममाला' और 'अनेकार्थमाला') सुरक्षित हैं; भीडर के माणिक्य ग्रन्थ-भण्डार में गुटका-सं० ३० में ग्रन्थ-सं० १; भीडर के ही ब्रजलाल साधु के पास १९३१ वि० में लिपिकृत 'भ्रमरगीत'; उदयपुर के दादूपन्थी केवलराम और प्रयागदासजी का स्थल में भागवत दशमस्कन्ध भाषा (१७३५ और १७९२ वि० में लिपिकृत) की ५ प्रतियाँ (ग्रन्थ-संख्या ५३, ५४, ५५ और ५६) मिली हैं। इसी संग्रह में रासपंचाध्यायी, विरहमंजरी की प्रतियाँ भी हैं।

राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थ-सूची, भाग १ की पृष्ठ-सं० ४४ पर १८३७ वि० में लिपिकृत 'नासकेत पुराणभाषा' की एक प्राचीन प्रति के प्राप्त होने का उल्लेख हुआ है और भाग २ की पृ० सं० १४, ९०, २८१, २०६, २१०, २१२, २१४, २१७, २१९, २२०, २२१ और २२६ में यमुनाष्टक, १८२१ वि० में लिपिकृत दशश्लोकी टीका नासकेतपुराण-भाषा (१८३७ वि० में लिपिकृत), १८५९ में लिपिकृत अनेकार्थी, १८९० में लिपिकृत

चिन्तामणिमाला. १८१३ वि० तथा १८८६ वि० में लिपित नाममंजरी, मानमंजरी, पंचाध्यायी भँवरगीत, भाषाभूषण टीका, माखनलीला (१९१४ में लिपित), मानमंजरी, नाममाला, रसमंजरी और १८८५ वि० में लिखित रासपंचाध्यायी की पाण्डुलिपियाँ प्राप्त हुई हैं। दादूपन्थी राघोदास द्वारा १७१७ वि० में रचित 'भक्तमाल' में नन्ददासजी को रामानुज सम्प्रदाय के अन्तर्गत माना है।[1] विक्रमाब्द १८५०-१८६० में, दयालदास-रचित 'करुणा-सागर' में इनके द्वारा मरी हुई गाय को पुनः जिला देने का प्रसंग आया है। यह प्रसग नाभादास के भक्तमाल (र० का० १७१५ वि०) में भी वर्णित है।[2] 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता' की वार्त्ता-सं० ४ में 'नन्ददास' का उल्लेख 'भक्तमाल' की चर्चा से कुछ भिन्न है।[3]

१६. नाभाजी, नाभादास (६, १०, ११)—स्वामी अग्रदास के शिष्य और प्रियादास के गुरु; भक्तमाल के प्रसिद्ध लेखक; सं १६५७ के लगभग वर्त्तमान; ध्रुवदास के समकालीन। इनका उपनाम नारायणदास था। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इनकी रचनाएँ खोज में मिली हैं।[4]

१७. पदुमनदास (२२)—बिहार-प्रान्तस्थ हजारीबाग जिले के रामगढ़-राज्य के आश्रित कवि, कर्ण कायस्थ, दामोदरलाल के पुत्र, सं० १७३८ (=१६८१ ई०) के लगभग वर्त्तमान। इनके ग्रन्थ अबतक अप्रकाशित हैं। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को इनकी रचनाएँ खोज में मिली हैं।[5]

रामगढ़-राज्य के पद्मानरेश और कवि, खैरबार राजा दलेल सिंह से प्रेरणा-प्राप्त कवि ने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। इनके रचित अन्य ग्रन्थ भी पारखद्-संग्रहालय में सुरक्षित हैं। 'हिन्दी-साहित्य-कोश' के अनुसार 'कविशिक्षा-ग्रन्थों' की दृष्टि में हिन्दी में केशव के बाद इन्हीं का स्थान है। संस्कृत के आचार्यों के अतिरिक्त इन्होंने केशव की 'कविप्रिया' से भी सहायता ली है। इस ग्रन्थ[6] में अन्य काव्यांगों का विवेचन भी है, पर कविशिक्षा-विषयक प्रकरण 'कविप्रिया' के इस प्रकरण की अपेक्षा अधिक व्यवस्थित है। ये केशव की परम्परा के कवि माने गये हैं।[7] इनके द्वारा १७४१ वि० में रचित 'काव्यमंजरी'

---

१. दे० हिन्दी-भक्तवार्त्ता-साहित्य (प्रकाशक : साहित्य-सदन, देहरादून, ले० डॉ० ललता प्र० दूबे), प्रथम संस्करण, सं० ११२।
२. दे० हिन्दी-भक्तवार्त्ता-साहित्य, प्रथम संस्करण, पृ० १८३।
३. दे० उपर्युक्त, पृ० ३२४, ३२५, ३४३ और ३४४।
४. ना० प्र० स० (काशी), १९००, ग्र० सं० १५, ७२; १९०६-८, ग्रं० सं० १२१; १९०९-११, ग्रं० सं २०२, २११।
५. दे० ना० प्र० स०, का०, १९२६—२८, ग्रं० सं०, ३२६।
६. 'इस ग्रन्थ में' का अभिप्राय इनकी एक दूसरी रचना-'काव्यमंजरी'—से है।—सं०
७. 'हिन्दी-साहित्यकोश' भाग २, प्रथम संस्करण, पृ० सं० २६६।

कों १८६७ ई० में लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से प्रकाशन हुआ है। इस ग्रन्थ में ७१६ छन्द और १४ कलिकाएँ हैं। काव्य की दृष्टि से इस रचना को केशव की कविप्रिया की परम्परा में माना गया हैं। इनको एक नई रचना परिषद्-संग्रहालय में संकलित हुई है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के बृहद् इतिहास के खण्ड ६ में भी इस कवि का उल्लेख हुआ है।

१८. **परमानन्द (६२)**—बिरहमासा के रचयिता; बिहार-राज्य के शाहाबाद जिले के कोरी ग्रामवासी कवि; सं० १८५५ (=सन् १७६८ ई०) के लगभग वर्त्तमान।

१६. **परमानन्ददास (३३)**—पंजाब प्रान्तस्थ दौदा (मुक्तसर) ग्रामवासी; सं० १६३५ (=सन् १८७८ ई० के लगभग वर्त्तमान। ना० प्र० स०, का० को इनकी रचना खोज में मिली है।[1]

२०. **बिहारीलाल (७२)**—हिन्दी के प्रसिद्ध कवि; ग्वालियर-राज्य के निवासी; १७३० वि० के लगभग वर्त्तमान, माथुर चौबे; जयपुर-नरेश जयसिं मिर्जा के आश्रित; कृष्णदास के गुरु, जिन्होंने सतसई पर टीका लिखी है। ये नवरत्नों में गिने जाते हैं। बिहारी-सतसई की पाण्डुलिपियाँ ना० प्र० स० (काशी) को खोज में मिली हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है—

क्रम-सं०	लिपिकाल	खोज-विवरण-काल	ग्रन्थ स०
१.	१७१६ वि०	१६०० ई०	११५
२.	१७७५ वि०	१६०१ ई०	२७
३.	१८०३ वि०	१६०२ ई०	८
४.	(टीका) १८३७ वि० (टीका-काल १७७७ वि०)	१६०१ ई०	५२
५.	,, ,,	१६०४ ई०	१२६
६.	,, १८२३ वि० ,,	१६०१ ई०	७५
७.	,, १८५० वि०	१६०६—१६०८ ई०	६६
८.	,, १८५१ वि०		
६.	,, १८२८ वि०	१६२६—२८ ई०	६८ ए
१०.	,, सं० १८४० (=सन् १७८३ ई०)	१६२६—२८ ई०	६८ बी
११.	सं० १८६८ वि० (=सन् १८४१ ई०)	१६२६—२८ ई०	६८ सी
१२.	सं० १६०० वि० (=सन् १८४३ ई०)	१६२६—२८ ई०	६८ डी
१३.	—	१६२६—२८ ई०	६८ ई
१४.	१७६२ वि० (=सन् १७०५ ई०)	१६२६—३१ ई०	५३ सी

इसके अतिरिक्त इसी विवरणिका में देखिए ग्रं० सं० ५३ ए और बी।

१. दे० ना० प्र० स०, काशी १६२६-३१, ग्रं० सं० २१२।

अन्य पाण्डुलिपियाँ भी इसी खोज में मिली हैं। विस्तार के लिए दे० ना० प्र० स० (का०), खो० वि० १९२०—२२, ग्रं० सं० २०, २३, २५ और ६२।

'राजस्थानी भाषा और साहित्य' (पृ० सं० १९६) के अनुसार इनका जन्म सं० १६०० के लगभग भी माना गया है। इनका देहान्त १७२० में हुआ था। ये ग्वलियर-राज्य के वसुवा-गोविन्दपुर ग्राम के निवासी थे। ये जयपुर के मिर्जा राजा जयसिंह के दरबारी कवि थे, जिनकी ओर से प्रति दोहे पर इन्हें एक अशर्फी मिला करती थी।

'हिन्दी-साहित्य-कोश' भाग २ के उल्लेख में—कवि के सम्बन्ध में जन्म-सं० १६५२ वि० (१५७५ ई०) माना गया है। इनके पिता का नाम केशवराय था। इनके एक भाई और एक बहन थी। इनके जन्म के सात-आठ वर्ष बाद इनके पिता केशवराय ग्वालियर छोड़कर ओरछा चले गये। वहीं इन्होंने हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि आचार्य केशवदास से काव्यशिक्षा ग्रहण की।

मुगल बादशाह शाहजहाँ के कृपापात्र; जोधपुर, बूँदी, जयपुर आदि अनेक रियासतों के कृपापात्र कविवर बिहारी के ७१३ मुक्तक, दोहे और सोरठे के संग्रह 'सतसैया' के अतिरिक्त तीन कवित्त भी खोज में उपलब्ध हुए हैं।

२१. भुवाल (६७)—भगवद्गीता के--दोहे-चोपाइयों में—रूपान्तरकार; उपनाम—जनभुवाल और भुवालस्वामी; नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण में भी इनकी पाण्डुलिपि की चर्चा हुई है। दे० खोज-विवरण—१९०९-११ ई०, ग्रं० सं० ११२। उक्त पाण्डुलिपि का हस्तलेख-समय है १७६२ वि०।

जनभुवालस्वामी नाम के एक अन्य ग्रन्थकार भी हैं, जिनकी रचना भी गीता से सम्बद्ध है। 'मिश्रबन्धु-विनोद' के अनुसार कवि का स्थितिकाल १००० वि० है। सं० २०१३ में गंगा ग्रन्थागार, लखनऊ से प्रकाशित 'मिश्रबन्धु-विनोद' (पंचम संस्करण) की पृ० सं० ८८ और कवि-सं० २५ द्रष्टव्य है।

२२. रामानन्द (७८)—सिद्धान्त-पटल' के ग्रन्थकार, प्रसिद्ध सुधारक और कबीर के गुरु; रचनाकाल सम्भवत: पन्द्रहवीं शती; ना० प्र० स०, का० को इनकी रचना मिली है।[1] रामभक्ति के प्रथम आचार्य। डॉ० फर्कुहर के मतानुसार १४५७ वि० से १५२७ वि० के बीच वर्त्तमान। पं० रामचन्द्र शुक्ल के लेख के अनुसार

---

१. दे० ना० प्र० स०, का०, खो० वि०, सन् १९०२ ई०, ग्रन्थ सं०-६५।
,, ,, सन् १९०९-११ ई० ग्रन्थ सं० २०५।
,, ,, सन् १९२६-२८ ई०, पृ० सं० ७८३ (ग्रन्थ-सं० ११७ तृतीय परिशिष्ट, अज्ञात रचनाकारों की कृतियाँ)।

पन्द्रहवीं शती के पूर्वार्द्ध और सोलहवीं शती के प्रारम्भ में उपस्थित। 'अगस्त्यसंहिता' ने इनका जन्म १३५६ वि० माना है। डॉ० फर्कुहर के मत का आधार कबीर, रैदास, और सन्त पीपा से सम्बद्ध किंवदन्तियाँ हैं और पण्डित शुक्ल ने सिकन्दर लोदी और तकी को कवि का समकालीन ठहराया है। 'हिन्दी-भक्तवार्त्ता-साहित्य' (डॉ० लालता प्रसाद दुबे-लिखित और साहित्य-सदन, देहरादून से प्रकाशित, प्रथम संस्करण) की पृ० सं० १३२ पर लिखा है—"पीपाजी गागरौन गढ़ के राजा थे। देवी के बतलाने पर रामानन्द से दीक्षा ली।" चन्ददास-रचित 'भगत बिहार' (र० का० १८०७ वि०) में ६७८वें पद के बाद—'रामानन्द राम अधिकारी। ते करिहैं प्रभू मुक्ति तुम्हारी।। करौ तिन्हें गुरु लै उपदेसा। भजो राम गुन छूट कलेसा।—पंक्तियाँ सन्त रामानन्द के सम्बन्ध में लिखी हैं। 'हिन्दी-भक्तवार्त्ता-साहित्य' की पृ० सं० १२५ में इस पाण्डुलिपि का उल्लेख हुआ। पाण्डुलिपि प्रयागस्थ हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के संग्रहालय की क्र० सं० २५, वेष्टन-सं० १३१३/१६५६२ में सुरक्षित है।

'हिन्दी-साहित्य-कोश', भाग २ की पृ० सं० ४६७ पर इनकी लिखी गई कही जाने-वाली इन रचनाओं की सूचना मिलती है—'श्रीवैष्णव मताब्ज-भास्कर', श्रीरामार्चन-पद्धति, 'गीताभाष्य,' 'उपनिषद्-भाष्य, 'आनन्दभाष्य,' 'सिद्धान्तपटल' 'रामरक्षा-स्तोत्र' 'योगचिन्तामणि', 'रामाराधनम्,' वेदान्तविचार,' 'रामानन्दादेश' 'ज्ञानतिलक,' 'ग्यानलीला,' 'आत्मबोध,' 'राममन्त्र जोगग्रन्थ,' 'फुटकल हिन्दी पद,' 'अध्यात्मरामायण'। नागरी-प्रचारिणी सभा काशी ने 'रामानन्द की हिन्दी की रचनाएँ' नामक इनके फुटकल पदों का संग्रह प्रकाशित किया है। काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा को खोज में 'रामानन्द' नाम के चार ग्रन्थकार मिले हैं। दे० 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' (पहला भाग), पृ० सं० १४४, १४५। विवरणीय कवि सन्त रामानन्द के सम्बन्ध में उक्त विवरण में लिखा है —'पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में वर्त्तमान, प्रसिद्ध सुधारक, नामदेव छीपो व कबीर के गुरु थे।, सभा के खो० वि० १६०२, ग्रन्थ-सं० ६५ और खो० वि० १६०६—११, ग्रन्थ-सं० २०५ द्रष्टव्य है।

'राजस्थानी भाषा और साहित्य' की पृ० सं० ३११ पर १८००—२० वि० में उपस्थित कवि बालकराम के विवरण-सन्दर्भ में, उनकी रचना में स्वामी रामानन्द का उल्लेख हुआ है। राजस्थानी साहित्य के शोध-विद्वान् अगरचन्द नाहटा द्वारा लिखित 'राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज' (चतुर्थ भाग) में स्वामी रामानन्द

की उपलब्ध रचनाओं का उल्लेख हुआ है—पृ० सं० ३४ में अभय जैन पुस्तकालय में संगृहीत ज्ञानतिलक'; पृ० सं० ४१ में स्वामी नरोत्तमदासजी के संग्रह में स्थित बालकदास द्वारा १८५६ वि० में लिखित दो पद और पृ० सं० ४७ में मोतीचन्द खजांची-संग्रह के सन्तवाणी-संग्रह (गुटका १२) में पत्रांक ४२५ पर तीन पद। श्रीउदयसिंह भटनागर द्वारा लिखित 'राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज (तृतीय भाग) की पृ० सं० २४ में भीडर (राजस्थान) के माणिक्य ग्रन्थ-भण्डार के संग्रहालयस्थ गुटका (सं० ३०) में रचना-सं० ५१ और इसी खो० वि० की पृ० सं० ५८ में उदयपुर (राजस्थान) के केवलराम दादूपन्थी के संग्रहालय की १८२५ वि० में लिखित (वाणी-संग्रह) की पृ० सं० २३५ पर सन्त रामानन्द के पद लिखित हुए हैं। पुरातत्त्वाचार्य जिनविजय मुनि द्वारा सम्पादित राजस्थान-राज्य द्वारा संस्थापित राजस्थान-प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान से प्रकाशित 'राजस्थानी-हस्तलिखित ग्रन्थ-सूची[1] (भाग १ की पृ० सं० ७५ में १८५६ वि० में लिखित कवि की रचना को चार प्रतियों (क्रमांक १५०१—१५०४) का और इसी खो० वि० के भाग २ के इन्द्रगढ़ पोथीखाना-सूची (ग्रन्थ की पृ० सं० ३३८ पर) के अन्तर्गत क्रमांक १६४ में १९०५ वि० में लिखित 'रामरक्षा' ग्रन्थ की एक प्रति तथा उन्नीसवीं शताब्दी में लिखित (पृ० सं० १९२, क्र० सं० ५५१, ५६० और ग्रन्थांक ६७४९ (२) और ७६०९) दो प्रतियों का उल्लेख हुआ है। आगरा (उत्तरप्रदेश) के क० मु० भाषा-विज्ञान विद्यापीठ के हस्तलिखित ग्रन्थ-संग्रहालय में भी कवि की रचना संगृहीत ('भारतीय साहित्य', वर्ष ६, अंक ४, अक्टूबर, १९६१ ई० की पृ० सं० १५६) हुई है।

'रसिकप्रकाश भक्तमाल' की पृ० सं० ११ के अनुसार 'रामानन्दजी के पिता का नाम सदन शर्मा तथा माता का नाम सुशीला बताया जाता है।' देशवाड़ी प्राकृत में लिखे हुए 'प्रसंगपारिजात' नामक ग्रन्थ में उनकी माता का नाम मुरली देवी दिया है। 'रसिकप्रकाश भक्तमाल' तथा नाभाकृत 'भक्तमाल' के टीकाकार रूपकलाजी के अनुसार इनका प्रारम्भिक नाम रामदत्त था। डॉ० बदरीनारायण श्रीवास्तव ने अपने रामानन्द-सम्प्रदाय' ग्रन्थ की पृ० सं० १०० पर विभिन्न सूत्रों से ज्ञात रामानन्द की तथाकथित रचनाओं के नाम दिये हैं। इन्होंने संस्कृत की अपेक्षा जनभाषा को अधिक महत्त्व दिया। भक्तमाल के अनुसार इनके बारह—अनन्तानन्द, कबीर, सुखानन्द, पद्मावती, नरहर्यानन्द पीपा, भवानन्द, रैदास, धना, सेन, सुरसुरानन्द और सुरसरि—प्रधान शिष्य थे।[1] दक्षिण से आकर उत्तर भारत में 'राममन्त्र' का प्रचार करनेवाले, 'भक्तमाल' के रचयिता नाभाजी के अनुसार सारी पृथ्वी को पत्रालम्बित कर (हिलाकर) चारो वर्णों और आश्रमों को भक्ति में दृढ़ करनेवाले रामोपासक राघवानन्दजी रामानन्द के दीक्षागुरु थे। स्वामी राघवानन्द यामुन मुनि के शिष्य रामानुजाचार्य (१०७६ वि०—११७४ वि० = १०१९-१११७ ई०)

---

१. दे० हिन्दी-भक्तवार्त्ता-साहित्य (डॉ० लालताप्रसाद दुबे-लिखित और साहित्य-सदन, देहरादून से प्रकाशित), प्रथम संस्करण।

की तेरहवीं पीढ़ी में स्वामी राघवानन्द थे। कहा जाता है, रामानुज-सम्प्रदाय के लिए जो महत्त्व तोताद्रि का था, वही महत्व रामानन्दी सम्प्रदाय में उत्तर भारत के 'गलता' को प्राप्त हुआ। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' की पृ० सं० १२१ पर इस स्थान को 'उत्तर तोताद्रि' नाम से लिखा है।[१] नाभादास के उत्तरवर्ती भक्तवार्त्ता-साहित्य के प्रणेता राघोदास ने स्वरचित भक्तमाल (१७१७ वि० में रचित) में रामानन्द-सम्प्रदाय की परम्परा, रामानन्द के शिष्य पयहारी कृष्णदास के शिष्य तथा अग्रदास शिष्यों के वर्णन पर विचार किया है।[२] रामानन्द की शिष्य-परम्परा के सम्बन्ध में राघोदास ने भक्तमाल में लिखा है—

"यम रामानंद प्रताप तैं यतने दिग्ग द्वादश महंत।
अनंतानन्द कबीर सुखानन्द सुख मैं बूलैं।।
सुमरि सुरसुरानन्द राम रैदास न भूलैं।।
धना सेन पद्मावती पीपा मुनि नरहरि दासा।।
भावानन्द सुरसुरी कियो हरि घटि में बासा।।
प्रमारथ कूँ अवतरे जन राघो मिलि राम रहंत।।
यम रामानंद प्रताप ते यतने दिग द्वादस महंत।।"[३]

इससे मिलती-जुलती शिष्य-परम्परा का उल्लेख नाभादास के भक्तमाल में हुआ है—

"श्री रामानन्द रघुनाथ ज्यों दुतिय सेतु जगतरन कियो।
अनन्तानन्द, कबीर, सुखा, सुरसुरा, पदमावती, नरहरि।।
पीपा, भावानन्द, रैदास, धना सुन सुरसुर को थरहरी।।
औरो शिष्य प्रशिष्य एकते एक उजागर।।
विश्व मंगल आधार सर्वानन्द दसधा के आगर।।
बहुत काल वपुधारि कै प्रणत जनन कौं पार दियौं।।
श्री रामानन्द रघुनाथ ज्यौं दुतिय सेतु जगतरन कियौ।।"[४]

दोनो—'भक्तभाल'—की शिष्य-परम्पराओं में कोई विशेष अन्तर नहीं हैं केवल क्रम का अन्तर है।[५]

---

१. दे० हिन्दी-भक्तवार्त्ता-साहित्य (डॉ० ललताप्रसाद दुबे द्वारा लिखित और साहित्य-सदन, देहरादून से प्रकाशित), प्र० सं० पृ० ४५, ४६।
२. उपर्युक्त, पृ० सं० ९९, १००।
३. भक्तमाल राघोदास, छ० सं २३६।
४. भक्तमाल रूपकला सटीक, छ० सं० ३६।
५. दे० हिन्दी-भक्तवार्ता-साहित्य, प्रथम संस्करण, पृ० सं० १०९-११०।

२३. रामप्रसाद शुक्ल (१९)—वैद्यरत्नार्णव के ग्रन्थकार। रचनाकाल १२७७ फ०= सन् १८७० ई०=१९२७ वि०।[1]

२४. लालचदास—(१, ८२)—बरेली-निवासी; हरिचरित्र के ग्रन्थकार; सं० १५२७ वि०=सन् १४७० ई० के लगभग वर्त्तमान। शिवसिंह-सरोज' और 'मिश्रबन्धु-विनोद' में केवल नाम-चर्चा; शिवसिंह ने इनका र० का० सं० १६५२ माना है और कालिदास-कृत हजारा में भी इनके नामोल्लेख की चर्चा की है।[2] नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी खोज में ग्रन्थकार के हस्तलेख मिले हैं। सन् १९०६—८ ई० की खोज-रिपोर्ट में इनका र० का० १५९५ वि० है।[3]

ना० प्र० स० (काशी) के एक हस्तलेख में इनका र० का० है सं० १५२५= सन् १४६८ ई० और दूसरे में सं० १५८५ वि० सन् =१५२८ ई०।[4] ऐसा प्रतीत होता है कि १५२५ वि० और १५८५ वि० में ८ और २ का व्यत्यय लिपिकार की अनवधानता का परिणाम है। कहा जाता है कि कवि की काव्यरचना-भूमि बिहार-राज्य के दरभंगा (रोसड़ा) जिले में थी।

ग्रन्थकार के सम्बन्ध में परिषद् का प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थशोध-विभाग विभिन्न सूचनाओं तथा खोजों के परिणामस्वरूप अधोलिखित निष्कर्षों पर पहुँचा है—

१. श्रीगोविन्दजी ने सूचित किया है कि उनके संग्रहालय में ६०० पृष्ठों में लिखित ९६ अध्यायों में समाप्त और १९३० वि० में लिपिकृत एक प्रति सुरक्षित है।

२. 'साहित्य-सन्देश' (आगरा, १९५८ दिसम्बर) में डॉ० शिवगोपाल मिश्र के लेख में हमारी इस स्थापना—'हरिचरित' की रचना को लालचदास द्वारा अधूरा छोड़े जाने पर आसानन्द ने पूरा किया'—को समर्थन मिला है।

३. लालचदास इसके ४५ अध्याय ही रच पाये। शेष ४५ अध्याय को आसानन्द ने पूरा किया।

---

१. ना० प्र० स० (काशी) को भी 'सुखजीवनप्रकाश' के ग्रन्थकार जहानगंजनिवासी 'रामप्रसाद' खोज में मिले हैं, जिनका र० का० १८७४ ई०=१९३२ वि० है। (दे० ना० प्र० स० का०, खो० वि० १९२९-३१ ई०, ग्रन्थ-सं० २९०)। दोनों ग्रन्थ के ग्रन्थकार एक ही 'रामप्रसाद' सम्भव हैं।

२. दे० शिव सिंहसरोज की पृ० सं० २८२ और ४४५।

३. दे० ना० प्र० स० का०, खो० वि० १९०६-८ ग्रन्थ सं० १८६; खो० वि० १९२३-२५ ग्रन्थ-सं० २३८।

४. दे० ना० प्र० स० का०, खो० वि० १९२६-२८ ई०, ग्रन्थ-सं० २६१ ए और २६१ बी।

४. यह रचना 'रामचरितमानस' से १०४ वर्ष पहले 'पदमावत' से लगभग ७० वर्ष पूर्व, 'चन्दायन' के १०० वर्ष बाद लिखी गई है। डॉ० दीनदयाल गुप्त के मत से नन्ददास से ४०-५० वर्ष पूर्व की रचना है।

५. रोसड़ा-निवासी श्रीबदरीलाल आर्य के पूर्वज-परिवार से ग्रन्थकार का सम्बन्ध था। ग्रन्थकार की काव्यरचना-भूमि बिहार रही है। रोसड़ा के निकटवर्त्ती एक 'डोह' को इनका स्थान बताया जाता है।

ग्रन्थकार के बिहार से सम्बद्ध और समादृत होने के सन्दर्भ में एक नई सूचना भी प्राप्त हुई है। 'परिषद्-पत्रिका' के वर्ष ७ अंक ३ की पृ० सं० १०१ पर 'बिहार में हिन्दी शिक्षा की आरम्भिक स्थिति' शीर्षक निबन्ध में डॉ० मुरलीधर श्रीवास्तव ने बिहार के कतिपय जिलों में १८३५ ई० के लगभग हिन्दी-पाठ्यक्रम से सम्बद्ध 'विलियम एडम' द्वारा सम्पादित सर्वे की चर्चा करते हुए तत्कालीन विद्यालयीय पाठ्य-पुस्तकों में 'हरिचरित' का उल्लेख किया है। विशेषतः पटना, गया, तिरहुत तथा पूर्णिया के क्षेत्र में ग्रन्थकार की रचना पढ़ाई जाती रही है। डॉ० मुरलीधर ने अपने लेख में लिखा है—'इसके अतिरिक्त लालचदास का भागवत (जो दशमस्कन्ध का अनुवाद है)............पढ़े जाते हैं।' ग्रन्थ के पच्चीस अध्यायों का प्रथम खण्ड अनेक प्रतियों के पाठ-भेदसहित परिषद् से प्रकाशित हो चुका है।

'शिवसिंह-सरोज' के ग्रन्थकार के अनुसार कवि का स्थितिकाल १६५२ वि० और किशोरीलाल गुप्त के लेखानुसार १५८५ वि०, १५८७ वि० या १५९५ वि० है। कवि के स्थान के सम्बन्ध में भी मतभेद है। श्रीकिशोरीलाल गुप्त द्वारा रचित 'सरोज-सर्वेक्षण' की पृ० स० ६७५-६७६ और ९९७ द्रष्टव्य है।

ग्रन्थकार के सम्बन्ध में प्रयाग की त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी' (सन् १९६५ ई० का अंक) में गोविन्दजी-लिखित 'भक्त कवि लालचदास और उनकी भागवत कथा' शीर्षक निबन्ध और 'हिन्दी-अनुशीलन' के (वर्ष १४, अंक ३) १९६१ ई० के अंक में डॉ० मुरारीलाल शर्मा 'सुरस' द्वारा लिखित 'अवधी में कृष्ण-काव्य के प्रणेता : कवि लालचदास' शीर्षक लेख महत्त्वपूर्ण है। उक्त दोनों निबन्धों में 'हरि-चरित' के कतिपय हस्तलेखों की सूचना मिलती है, जिसमें बलिया जिला (उत्तरप्रदेश) के रँपुरा ग्रामस्थित, ६०० पृष्ठों में लिखित हस्तलेख में लिपिकाल १९३० वि० दिया हुआ है। इस ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रतियाँ काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा, वाराणसी के याज्ञिक संग्रहालय में रीवाँ के बान्धवेश भारती भण्डार (लि० काल १८४१ ई०) में, बहराइच (उ० प्र०) के सिसैया-स्थित नवटला ग्राम के ठा० माधवराय के संग्रहालय में, सीतापुर (उ० प्र० के बिसवाँ ग्राम-स्थित आनन्द भवन-पुस्तकालय (दोनों का लिपिकाल १८८५ वि०) में, सीतापुर के ही मल्लापुर के महाराज प्रकाशसिंह के पुस्तकालय (लि० का० १८५८ वि०) में, प्रयाग-संग्रहालय के वेष्टन-सं० २१३, पुस्तक-सं० ६ (लि० का० १७९० वि०) में, डॉ० शिवगोपाल मिश्र के संग्रहालय (लि० का० १७६० वि०) में,

गया (बिहार) के मन्नूलाल पुस्तकालय (लि० का० १८४६ वि०) में संकलित प्रतियाँ मुख्य हैं।

२५. शिवनाथ दास (२५)—'शिवसागर' के दरियापन्थी ग्रन्थकार; बिहार-राज्य के सारन-जिलान्तर्गत तेलपामठ-निवासी; सम्भवतः इनकी अन्य कई रचनाएँ उक्त मठ में सुरक्षित हैं। ग्रन्थ अप्रकाशित। लि० का० सम्भवतः सं० १८५० वि०= १७९३ ई० है।

२६. नन्दलाल कवि (१६ ख)—रामरतनगीता के ग्रन्थकार; रचना अप्रकाशित; कुछ अनुसन्धायकों के मत से इस ग्रन्थ के ग्रन्थकार कुशलसिंह हैं। इनका र० का० सं० १६७७ वि० लगभग था। कहा जाता है कि 'अर्जुनगीता' और 'रामरत्नगीता' के ग्रन्थ-कार कुशलसिंह फफूँद के राजा, राजा मधुकरसाहि के पुत्र, कवि देवदत्त के आश्रयदाता कुशलसिंह से भिन्न हैं।[1] बाराबंकी जिले के मथुरा-निवासी कुशलसिंह ने भी गीता या रामरत्नगीता नामक ग्रन्थ की रचना की है।[2] नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज में मिली रचना का लि० का० सं० १९२२ वि०=१८६५ ई० है।[3] बि० रा० भा० प०, पटना के संग्रहालयस्थ प्रति से इसमें पाठभेद है। पं० श्रीपरमानन्द पाण्डेय (भागीरथी, पटना-६) के पास संकलित हस्तलेख के पाठ से परिषद्-संग्रहालयस्थ हस्तलेख के पाठ में प्रायः समानता है।[4] एक और नन्दलाल कवि 'जैमुनी अश्वमेध' के ग्रन्थकार हो चुके हैं, जिनकी १८९२ वि० में लिपिकृत रचना प्राप्त हुई है। ये इनसे भिन्न हैं।

२७. श्रीभट्ट (१४)—निमादित्य के शिष्य; वृन्दावन-निवासी; सं० १६०१ वि० के लगभग वर्त्तमान, राजा जुगलकिशोर के आश्रित। यह रचना नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज में मिली है।[5] ग्रन्थकार की

---

१. दे० हस्तलिखित-हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, दूसरा भाग (काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा), पृ० सं० २६। ना० प्र० स० का०, खो० वि० १९०४ सं० ३७।

२. दे० ना० प्र० स० का०, खो० वि० १९२३-२५, ग्र० सं० २३१।

३. दे० ना० प्र० स० का०, खो० वि० १९२६—२८, ग्र० सं० २५४ ए०, बी०।

४. दे० त्रैमासिक 'साहित्य' (वर्ष ६, अंक ७) कवि कुशलसिंघ-कृत 'रामरत्नगीता' शीर्षक लेख, पृ० सं० ६२।

५. दे० ना० प्र० स० का०, खो० वि० १९००, ग्र० सं० ३६, ७५, १९०६-८, ग्र० सं० २३७।

अन्य रचनाएँ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली हैं। दे० ना० प्र० स०, का०, खो० वि० १६३२—३४, ग्र० सं० २०४ ए० बी० सी०। 'आभास-दोहा' नामक इनकी एक रचना श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय (गया. बिहार) में सुरक्षित है। ग्रन्थकार श्रीभट्ट के सम्बन्ध में अन्य खोज-विवरणों में भी सूचनाएँ हैं। शिवसिंह सरोज के ग्रन्थकार और ग्रियर्सन ने इनका जन्म १६०१ वि० माना है। 'राग-सागरोद्भव' में भी कवि की चर्चा हुई है। 'रागकल्पद्रुम' में निमादित्य के शिष्य केशवभट्ट को ही श्रीभट्ट कहा गया है। किन्तु, किशोरीलाल गुप्त के मतानुसार "श्रीभट्ट और केशव भट्ट एक ही व्यक्ति नहीं हैं, अपितु वे केशवभट्ट के शिष्य हैं और १६०१ वि० कवि का जन्म-समय नहीं, प्रत्युत उपस्थिति-काल है। आचार्य शुक्ल ने तथा 'ब्रजमाधुरीसार' के लेखक वियोगी हरि ने कवि का जन्मकाल १५९५ वि० ठहराया है। केवल कश्मीरी के शिष्य-रूप में श्रीभट्टजी को स्वीकार करने पर भक्तमाल में हुए उल्लेख के आधार पर ये चैतन्य महाप्रभु के समसामयिक माने जायेंगे और इनका रचनाकाल १५९५ वि० मानना उचित होगा। कवि श्रीभट्ट, किशोरीलाल गुप्त के मत से हरिव्यासदेवाचार्य एवं हरिदास के गुरु थे। गुप्तजी के मत में इनका जन्मकाल १५५० वि० के आसपास है।"[1]

मुगल बादशाह औरंगजेब के समकालीन और इलाहाबाद के नवाब सैयद हिम्मतखाँ के आश्रित, 'हिम्मतप्रकाश' (१८९८ वि० में लिपिकृत) के रचयिता भी एक श्री (पति) भट्ट हो चुके हैं, जो इनसे भिन्न हैं।

२८. सन्त सूरजदास (१६ क)—'रामजन्म' (कथा) के रचयिता; बिहार-निवासी कवि; 'रामजन्म' के आठ हस्तलेख परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित हैं। इनकी एक और रचना 'एकादशीमाहात्म्य' नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली है।[2] परिषद्-संग्रहालय में 'रामजन्म' के आठ हस्तलेख संगृहीत हैं।

इस रचना के सम्बन्ध में डॉ० मुरलीधर श्रीवास्तव (हिन्दी-विभागाध्यक्ष, राजेन्द्र कालेज, छपरा, बिहार-विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर) के द्वारा 'परिषद्-पत्रिका' के वर्ष ७, अंक ३ की पृ० सं० १०१ पर 'बिहार में हिन्दी-शिक्षा की आरम्भिक स्थिति' शीर्षक

---

१. दे० 'सरोज-सर्वेक्षण' पृ० सं० ७१७।

२. दे० न० प्र० स० का०, खो० वि० १९२३–२५, ग्र० सं० ४१७; १९३६-३८, ग्र० सं० ४७३।

निबन्ध में सन् १८३५-१८३६ और १८३७ ई० में बिहार की शिक्षा की स्थिति पर 'विलियम एडम' द्वारा सम्पादित सर्वे के अनुसार प्राप्त रिपोर्ट के आधार पर बिहार के बिहार जिले (वर्त्तमान पटना और गया) और तिरहुत जिले में पाठ्यक्रम में 'रामजन्म' का उल्लेख किया है। साथ ही, पूर्णिया की भी तत्कालीन पाठ्य-पुस्तकों में इस पोथी को पढ़ाई होती थी।

अब यह ग्रन्थ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से प्रकाशित हो गया है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी खोज में इनके हस्तलेख मिले हैं। सभा के खो० वि० १९२३-२५, ग्रन्थ-संख्या ४१७ ; खो० वि० १९२६-२८, ग्रन्थ-संख्या ४७३ बी० द्रष्टव्य हैं। ग्रन्थकार की 'एकादशी माहातम' नामक एक अन्य रचना नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज म मिली है। द्रष्टव्य खो० वि० १९२६—२८।

'शिवसिंह-सरोज' के ग्रन्थकार ने कवि-सं० ९४९ के अन्तर्गत सूरजदास का उल्लेख किया है। किशोरीलाल गुप्त के अनुसार सूरजदास का उल्लेख सूदन ने किया है, अतः इनका रचनाकाल सं० १८१० वि० के पूर्व या आसपास होना चाहिए। श्रीगुप्त के सरोज-सर्वेक्षण के अनुसार ये सम्भवतः स्वामी प्राणनाथ के शिष्य थे। प्राणनाथजी छत्रसाल (शासनकाल १७२२—८८ वि०) के समकालीन थे, अत सूरजदास १८१० वि० के पूर्ववर्त्ती हैं। राजस्थान की खोज में भी अट्ठारहवीं शताब्दी में वर्त्तमान एक ग्रन्थकार 'सूरज' का उल्लेख हुआ है। दे०, राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थ-सूची, भाग १ की पृ० सं० ४५, क्रमांक ९०३, ९०४ और ग्रन्थांक ३५४६ (१३) तथा ४४५२ (२२) ; 'राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज' (तृतीय भाग) में पृ० सं० १८ पर उदयपुर के धोली बावड़ी-स्थित रामद्वारा-संग्रहालय के गुटका-सं० २६ में कवि-सं० ८० और इसी खोज-ग्रन्थ के चतुर्थ भाग की पृ० सं० २७-२८ पर अनूप संस्कृत-पुस्तकालय में संगृहीत, ग्रन्थ-संख्या ८।

२९. सन्तकवि दरियासाहब—(१७, ३५, ४४, ४५ क, ४५ ख, ४५ ग, ४५ घ, ४५ ङ, ४५ च, ४५ छ, ४५ ज, ४६, ४७, क, ४७ ख, ४८, ४९, ५० क, ५० ख, ५० ग, ५१ क, ५१ ख, ५१ ग, ५२ क, ५२ ख, ५२ ग, ५२ घ, ५२ ङ, ५२ च, ५२ छ, ५३ क, ५३ ख, ५२ ग, ५४, ५५, ५६, ५७ क, ५७ ख, ५७ ग, ५७ घ, ५८, ५९, ६० क, ६० ख, ६० ग, ६० घ, ६१ क, ६१ ख, ६२ क, ६२ ख, ६२ ग, ६३, ६४, ६५ क, ६५ ख, ६५ ग,

६५ घ) बिहार-प्रान्तस्थ शाहाबाद जिलान्तर्गत धरकन्धा-निवासी, जन्म सं० १७३१ वि० और मृत्यु सं० १८३७ वि० पीरन शाह के पुत्र ; दरियापन्थ के प्रवर्त्तक ।[1] नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी इनकी रचनाएँ खोज में मिली हैं। इस विवरण में इनके ग्रन्थों की सत्तावन पाण्डुलिपियाँ हैं। इनके पूर्वज उज्जैन-निवासी क्षत्रिय थे, जो बिहार में आकर बस गये थे। दरियापन्थी साधु दलदास ने इनका जन्म १६३४ ई० माना है। बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद से सन् १९१० ई० में प्रकाशित 'दरियासागर' के सम्पादक ने सन् १६७४ ई० में इनका जन्म ठहराया है। 'दरिया-ग्रन्थावली' के सम्पादक स्वर्गीय डॉ० शास्त्री ने इनका जन्मकाल सन् १७३४ ई० निश्चित किया है। कहा जाता है, नवाब मीरकासिम ने इनको १०१ बीघा जमीन प्रदान की थी। इनके अनुयायी इन्हें कबीर का अवतार मानते हैं। सन्त शिवनारायण का इनपर पर्याप्त प्रभाव है। दरियाग्रन्थावली प्रकाशन-माला के प्रथम ग्रन्थ के रूप में स्वर्गीय डॉ० शास्त्री द्वारा लिखित 'सन्त कवि दरिया : एक अनुशीलन' बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद् से प्रकाशित हो गया है। उनके द्वारा ही सम्पादित होकर ग्रन्थावली का दूसरा ग्रन्थ, जिसमें दरिया की छह रचनाएँ—(१) दरियासागर, (२) ग्यानरतन, (३) ग्यानसरोदै, (४) भक्तिहेतु, (५) ब्रह्मविवेक और (६) ग्यानमूल—सम्मिलित हैं, प्रकाशित हुआ है।

३०. **सूरदास** (४३)—हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि ; वल्लभ-सम्प्रदाय के वैष्णव भक्त और अष्टछाप के कवियों में प्रमुख ; व्रजवासी ; सं० १५४० वि० से १६२० वि० तक वर्त्तमान। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी), (लि० का० सं० १८९२, सं० १८७३, सं० १८६६ और सं० १८५३) और मन्नूलाल पुस्तकालय गया (लि० का० सं०

---

१. दे० सन्त कवि दरिया : एक अनुशीलन; डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री ; प्रकाशक : बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-४।

१८६७ और १६२४) के संग्रहालयस्थ हस्तलेख से यह पाण्डुलिपि प्राचीन है। इसका लिपिकाल सं० १८२५ वि० है। सूरदास के सम्बन्ध में विशद विवरण के लिए 'ह० लि० पो० का विवरण', खण्ड २ द्रष्टव्य है।

३१. हरिदास (८७)—'रासलीला' के नवोपलब्ध ग्रन्थकार ; 'हरिदासस्वामी की बानी' नामक ग्रन्थ के रचयिता, हरिदास से भिन्न[1] ; सं० १७२७ वि० के लगभग वर्त्तमान।

सरोज-सर्वेक्षण के लेखक श्रीकिशोरीलाल गुप्त ने सरोज मे उल्लिखित (कवि-सं० ९६०, ९६१, ९६२ और ९६३) 'हरिदास' के नाम के चार ग्रन्थकारों की चर्चा की है। 'हरिदास' के सम्बन्ध में 'हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग २, की पृ० सं० ६३७ में डॉ० विजयेन्द्र स्नातक (दिल्ली वि० वि०) ने पर्याप्त प्रकाश डाला है। डॉ० ग्रियर्सन ने भी दो हरिदास का उल्लेख किया है। दोनों का जन्म-समय १८४४ और १८३४ ई० माना है।

हरिदास नाम के पाँच ग्रन्थकारों का विवरण काशी-नागरी प्रचारिणी सभा के भी विवरण में आया है। दे०—१. खो० वि० १९०२, ग्रन्थ सं० ६४, खो० वि० १९०५ ग्रन्थ-सं० ४७; ये निरंजनी पन्थ के संस्थापक तथा पीताम्बरदास के गुरु थे। २. खो० वि० १९००, ग्र० सं० २९ ६७, ३७; खो० वि० १९०१, ग्र० सं० १२; खो० वि० १९०२, ग्रन्थ सं० १७१ में १६१७ वि० में वर्त्तमान, अकबर बादशाह के समकालीन, टट्टी-सम्प्रदाय के संस्थापक और तानसेन का गुरु बताया गया है। ३. खो० वि० १९०१ ग्रन्थ सं० ५५, ७२; खो० वि० १९०६-१९०८, ग्रन्थ सं० २५६; खो० वि० १९०९-११, ग्रन्थ सं० ११० । ४. खो० वि० १९०६-८, ग्रन्थ सं० ४६ ए०, बी०, सी० । ५. खो० वि० १९०६-८, गण्थ सं० ४७ ।

राजस्थान की खोज में, श्रीअगरचन्द नाहटा के निजी संग्रहालय अभय जैन ग्रन्थालय में संकलित 'अमरबत्तीसी' ग्रन्थ के रचयिता, १७०१ वि० में वर्त्तमान 'हरिदास' का विवरण आया है।[3] राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थ-सूची, भाग १ की पृ० स० १३ में एक दूसरे ग्रन्थकार 'हरिदास' द्वारा १८१६ वि० में लिखित 'एकादशी-कथा' का उल्लेख हुआ है। इसी ग्रन्थ-सूची के भाग २ की पृ० सं० २३१ तथा २४१ पर क्रमश अट्ठारहवीं-उन्नीसवीं सदी में स्थित हरिदास की रचनाएँ (सत्यनारायण व्रतकथा एवं भक्तामर बालबोध टीका) मिली हैं।

---

१. दे० ना० प्र० स० का०, खो० वि० १९०५ ग्र० सं० ६७ खो० वि० १९०९-११ ग्र० सं० १०९ बी।
२. दे० सरोज-सर्वेक्षण की पृ० सं० ७९७—८०२ और १०००।
३. दे० 'राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज', द्वितीय भाग १, पृ० सं० ६२।

संस्कृत-पोथियों के ग्रन्थकार

१. **अनुभूतिस्वरूपाचार्य**—(५, १२, ३४) ईसा की पाँचवीं शताब्दी में वर्त्तमान, काशी-निवासी, दक्षिणात्य-प्रचलित किंवदन्ती के अनुसार बालकों के अनायास बोध के लिए इन्होंने व्याकरण की रचना की।[1] एक दूसरी जनश्रुति के अनुसार विद्वन्मण्डल में प्रयुक्त 'पुङ्क्षु' प्रयोग को शुद्ध सिद्ध करने के लिए अनुभूतिस्वरूपाचार्य ने काशी में सरस्वती का ध्यान किया। इनके तप से तुष्टा सरस्वती ने इन्हें अभीप्सित वर दिया और अपने कण्ठ से सात सौ सूत्र दिये। उन सूत्रों के आधार पर रचित व्याकरण का नाम ग्रन्थकार ने 'सारस्वतप्रक्रिया' रखा।[2] एक दूसरे मत से इस ग्रन्थ के रचयिता नरेन्द्राचार्य भी माने जाते हैं। क्षेमेन्द्र ने इस ग्रन्थ की टीका लिखते हुए ''इति श्रीनरेन्द्राचार्य सारस्वते क्षेमेन्द्र-कृत टिप्पणयाम् ....'' लिखा है। अमृतभारती टीका में भी तथा विट्ठल-रचित 'प्रक्रियाकौमुदी' टीका में भी इसे नरेन्द्र से रचित बताया गया है। इस व्याकरण के फैलानेवालों में गयासुद्दीन खिलजी और जहाँगीर का नाम लिया जाता है।

'सारस्वतप्रक्रिया' की पाण्डुलिपियों का उल्लेख आमेरशास्त्र-भण्डार, जैन-ग्रन्थ-सूची, कन्नड़-प्रान्तीय ताड़पत्रीय ग्रन्थसूची और जैन सिद्धान्त-भवन, आरा की ग्रन्थसूची में हुआ है।

इसपर मुख्यत: चन्द्रकीर्त्ति, वासुदेवभट्ट, माधव, जगन्नाथ, काशीनाथ, रमाकान्त, मेघरत्न, हंसविजय और रामभट्ट-कृत टीकाएँ मिलती हैं। इन टीका-ग्रन्थों में अन्य अनेक टीकाकारों के उल्लेख हुए हैं, किन्तु टीकाएँ प्राय. अनुपलब्ध हैं। रघुनाथनामाभिधेय भट्टोजि-दीक्षित के शिष्य ने इस ग्रन्थ पर एक लघुभाष्य की रचना की है, जिसमें वोपदेव और भट्टो-दीक्षित के मत का खण्डन किया है।[3]

'हिन्दी-विश्वकोश' ने—सरस्वती-प्रक्रिया, आख्यात-प्रक्रिया और धातुपाठ नामक ग्रन्थ

---

१. सं० १९९१ में चौखम्बा संस्कृत-सीरीज से प्रकाशित 'सारस्वतव्याकरणम्' की भूमिका, पृ० सं० ४। और स० १९९६ वि० में बम्बई के वेंकटेश्वर प्रेस से खेमराज श्रीकृष्णदास द्वारा प्रकाशित 'सारस्वतम्' की प्रस्तावना तथा पृ० १ पर टीका की व्याख्या का अंश।

२. उपर्युक्त, पृ० सं० ३।

३. उपर्युक्त, पृ० सं० ४।

के प्रणेता अनुभूतिस्वरूप यति को 'न्यायदीपावली' नामक वेदान्त-ग्रन्थ और आनन्दबोध-प्रणीत 'प्रमाणरत्नमाला' निबन्ध की टीका का रचयिता के रूप में इनकी चर्चा की है।[१]

२. जयदेव कवि—(४, २०, ३८) ईसा की बारहवीं सदी में वर्त्तमान संयोगशृंगार के कवि। संस्कृतकाव्य में 'मुक्तक' कविता के प्रमुख रचनाकार। आर्यासप्तशती के रचयिता गोवर्द्धन, पवनदूत के ग्रन्थकार धोयी और 'पारिजातहरण' के प्रणेता उमापति के समकालीन। 'प्रसन्नराघव' के ग्रन्थकार जयदेव से भिन्न भोजदेव और राधादेवी के पुत्र।[२] सेनवंश के अन्तिम सम्राट् लक्ष्मणसेन के राजकवि। श्रीहर्ष के समसामयिक। संस्कृत-काव्यधारा में पद-विन्यास और संगीतात्मकता के प्रथम तथा मधुर कोमल कान्त पदावली-निर्माण-रसिक, अभिनव कवि। इनका जन्म 'किन्दुबिल्व' नामक स्थान में हुआ था, जिसे कुछ लोग बंगाल में और कुछ उड़िसा में बतलाते हैं।

३. दैवराम (१)—अनन्तदैवज्ञ के सुत, अकबर बादशाह के सभापण्डित और दैवज्ञ नीलकण्ठ के अनुज, १६५७ वि० (१५२२ शकाब्द १६०० ई०) में वर्त्तमान, जयपुर-महाराजा रामदास की प्रसन्नता के लिए 'रामविनोद' नामक करण-ग्रन्थ के भी रचयिता।

४. दैवज्ञ ढुण्ढिराज (५१)—दैवज्ञ ज्ञानराज (सिद्धान्त-सुन्दर' नामक करण-ग्रन्थ के रचयिता) के शिष्य, १५६० वि० (१४२५ शक ; १५०३ ई०) के लगभग वर्त्तमान, ज्ञानराजपुत्र दैवज्ञ सूर्यप्रकाश के समकालीन। दैवज्ञ ढुण्ढिराज ने 'जातकाभरण' के अतिरिक्त अनन्तदैवज्ञ-रचित 'सुधारस' की टीका तो लिखी ही है, 'ग्रहलाघवोदाहरण' 'ग्रहफलोत्पत्ति', 'पंचांगफल' और 'कुण्डकल्पलता' नामक ग्रन्थों की भी रचना की है।

५. पाणिनि मुनि (४०)—अष्टाध्यायी (चार हजार सूत्रों का ग्रन्थ) के प्रणेता, ईसा के ६०० वर्ष पूर्व वर्त्तमान, यास्क से दो सौ वर्ष (यास्क का काल ८०० ई० पू० था) उत्तरकालीन शाकल्य, शाकटायन और स्फोटायन के उत्तरवर्त्ती वैयाकरण। डॉ० गोल्डस्टकर और डॉ० भण्डारकर के मत से ये ईसा के सात सौ वर्ष पूर्व विद्यमान थे। कुछ सस्कृत-साहित्येतिहासिकों का मत है, पाणिनि ने 'जाम्बवती-परिणय' और 'पातालविजय' नामक दो काव्य ग्रन्थ भी लिखे थे। आधुनिक अटक के निकट स्थित शालातुर-ग्रामवासी,

---

१. हिन्दी-विश्वकोश, भाग १, पृ० ४७३।

२. "श्रीभोजदेवप्रभवस्य राधादेवीसुतश्रीजयदेवकस्य।
पाराशरादिप्रियवर्गकण्ठे श्रीगीतगोविन्दकवित्वमस्तु॥"

पाणिनि ने अपने ग्राम का नाम शाकटागंज और चन्द्रगोड़ी भी बताया है। 'गणरत्नमहोदधि' में शालातुर ग्राम की चर्चा हुई है और चीनी-यात्री हुएनसंग ने शालातुर (गान्धार) ग्राम का उल्लेख किया है। कनिंघम ने शालातुर ग्राम को वर्त्तमान 'लाहौर' बताया है। भाष्यकार इनकी माता का नाम ग्यारहवीं शताब्दी में सोमदेव-रचित 'कथासरित्सागर' के अनुसार व्याडि और इन्द्र इनके समकालीन थे। तदक्षिला-विश्वविद्यालय में पाणिनि के विद्याभ्यास की तथा पाटलिपुत्र (पटना) के 'वर्ष' नामक विद्वान् से विद्याभ्यास की चर्चा मिलती है। शब्दशास्त्र के आचार्य पणिनि मुनि ने काव्य-कौशल भी पाया था। उदाहरणस्वरूप ये दो श्लोक—

"गतेऽर्धरात्रे परिमन्दमन्दं गर्जन्ति यत् प्रावृषि कालमेघाः।
अपश्यती वत्समिवेन्दुविम्बं तच्छर्वरी गौरिव हुङ्करोति॥
ऐन्द्रं धनुः पाण्डुपयोधरेण शरद्दधानाद्रं नखक्षताभम्।
विनोदयन्ती सकलङ्कमिन्दुं तापं रवेरभ्यधिकं चकार॥"

इस प्रकार, प्रसिद्ध महावैयाकरण पाणिनि ने काव्य-निर्माण में भी पथ-प्रदर्शन किया। राजशेखर ने अपने ग्रन्थ 'काव्यमीमांसा' के प्रारम्भ में पाणिनि को नमस्कार किया है—

नमः पाणिनये तस्मै येन रुद्रप्रसादतः।
आदौ व्याकरणं प्रोक्तमनु जाम्बवतीजयम्॥"

भट्टसोमेश्वर और राजशेखर ने भी अपनी रचना में पाणिनि का सादर स्मरण किया है।

६. **भर्तृहरि (१६)**—६७२ वि० (६१५ ई०) के पूर्व वर्त्तमान। कुछ ऐतिहासकों के मत से 'वाक्यपदीय' के ग्रन्थकार तथा शतकत्रय (नीतिशतक, शृंगारशतक और वैराग्यशतक) के रचयिता भिन्न हैं और 'भर्तृहरि' तथा 'भट्टि' एक ही हैं। कुछ किंवदन्तियों के अनुसार इन्हें विक्रमादित्य का भाई भी बताया जाता है। सिद्ध-परम्परा में भी एक भर्तृहरि हुए हैं, जिनका रचनाकाल ग्यारहवीं शताब्दी है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के मत से 'वैराग्यशतक' के कई श्लोकों का रूपान्तर (भ्रष्ट रूप में) 'नाथ सिद्धों की बानियाँ' में पाया जाता है।[1]

७ **रामाश्रमाचार्य (३१, ३२, ३३)**—सारस्वत-चन्द्रिका के लेखक रामाश्रमाचार्य नृसिंहाश्रम के शिष्य थे और इन्होंने अमरकोश-टीका, तत्त्वचन्द्रिका, ब्रह्मसूत्रवृत्ति, दुर्गामाहात्म्य-टीका, दुर्जनमुखचपेटिका और प्रभाकर-परिच्छेद नामक ग्रन्थों की रचना की थी।[2]

---

१. दे० हिन्दी-साहित्यकोश, भाग २, पृ० सं० ३७६।
२. हिन्दी-विश्वकोश, १६वाँ भाग, पृ० ५१०।

८. हर्षकवि (२९)—ईसा की बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध (सन् ११५६-११६३ ई०) के कवि; 'नषधचरित' की दाधिमथी टीका के प्रणेता पं० शिवदत्तजी के मतानुसार काव्यकुब्जेश्वर विजयचन्द्र तथा उनके पुत्र जयन्तचन्द्र के सभापण्डित; 'पृथ्वीराजविजय महाकाव्य के प्रणेता जयानक के समकालीन ; काव्यकुब्जेश्वर से दो बीड़ा पान प्राप्त करनेवाले श्रीहर्ष कवि 'हीर' तथा 'मामल्लदेवी' के पुत्र थे।[1] इनके द्वारा रचित सात ग्रन्थों—(१) नैषधचरित, (२) खण्डनखण्डखाद्य, (३) स्थैर्यविचार-प्रकरण, (४) विजयप्रशस्ति, (५) गौडोर्वीशकुलप्रशस्ति (६) नवसाहसांक-चरितचम्पू और (७) शिवशक्तिसिद्धि—मे प्रथम दो ग्रन्थ ही उपलब्ध हैं। 'नैषधीयचरित' महाकाव्य २२ सर्गों और २८३० श्लोकों में समाप्त हुआ है। इनके द्वारा रचित (१) अर्णव-वर्णन और (२) छन्दःप्रशस्ति नामक दो अन्य ग्रन्थ भी खोज में मिले हैं।

१. (क) 'ताम्बूलद्वयमासनञ्च लभते यः काव्यकुब्जेश्वरात् ॥'—२२ । १५३ ।
(ख) "श्रीहर्षं कविराजराजिमुकुटालङ्कारहीरः सुतम् ।
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम् ॥"—१।१४५ ।

हस्तलिखित हिन्दी-पोथियों का विवरण

१. श्रीमद्भागवत (हरिचरित्र)—ग्रन्थकार—लालचदास। लिपिकार ×। अवस्था—अत्यन्त प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—१८७। प्रति पृष्ठ पंक्तियाँ लगभग ४०। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल—संवत् १८५८ वि०, आषाढ़ सुदी ७, रविवार।

प्रारम्भ—"पुत्रीवधेजुअति नहीआही वर अपने सूतदेहु वीवाही
वीनतीकीन्हसीस भुइनाई। देहुप्रसाद मोही कोस्न गोसाई"

अन्त—"ऐसे जगदीस्वरजोहै तेहीसेवहुनरनाह॥
चरनसरन जन लालच, हरीसुमरहू मनमाह
इतिश्रीहरीचरीत्रे दसम सकंधे श्री भागवते महापुराने कीस्न वैकुंठ सीधारननोनाम ऐकानवैमो अध्याऐ।"

विषय—भागवत महापुराण अध्याय ५ से अध्याय ९१ तक। दोहे और चौपाइयों में रचना की गई है।

टि०—(१) यह ग्रन्थ अत्यन्त प्राचीन है। ग्रन्थ के प्रत्येक पृष्ठ पर पृष्ठ-संख्या के साथ 'लालच' लिखा हुआ है, जो ग्रन्थकर्त्ता के नाम का सूचक है। ग्रन्थ के अनेक स्थलों में और अध्यायों के अन्तिम दोहों में, यह नाम आया है। यथा पृष्ठ ४६ पर—

'जनलालच' के ठाकुर सोक वेद पर वान।
वैरी रूप जो श्रावै पावै पद नीरवान।"

(२) ग्रन्थ के लिपिकार ने आदि या अन्त में अपना परिचय नहीं दिया है। ग्रन्थ की लिखावट ठीक नहीं है। भाषा 'रामचरित-मानस' की-सी है।

(३) ग्रन्थ की लिखावट में ब के लिए 'व' और 'व' के लिए 'व़' लिखा है; 'य' में नीचे बिन्दी देकर 'य़' लिखा गया है।

(४) यह ग्रन्थ श्रीरामेश्वरप्रसाद गुप्त, मन्त्री—वैदिक पुस्तकालय, पुनपुन, (पटना) के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

२. सम्पूर्ण रामायण—ग्रन्थकार—गोस्वामी तुलसीदास। लिपिकार—गयादत्त पाण्डे। अवस्था—अच्छी। पोथी सचित्र। पृष्ठ-संख्या—५३। प्र० पृ० पं० लगभग ६०। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लेखनकाल सं० १९२२, आश्विन कृष्ण सप्तमी, तारीख ११।

प्रा०—"जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि।
वंदो सबके पदकमल सदा जोरि जुग पानि।
देव दनुज नर नाग षग प्रेत पितर गंधर्व।
वंदो किन्नर रजनिचर कृपा करहु अब सर्वं ।।७।।"

अन्त—"यह सुभ शंभु उमा संवादा सुष संपादन समन विषादा
भव भंजन गंजन संदेहा जन रंजन सज्जन प्रिय एहा।"

विषय—भगवान् रामचन्द्र की जीवन-कथा।

टि०-(१) यह ग्रन्थ लीथो किया हुआ है। इसमें कथा से सम्बन्ध रखनेवाले चित्र भी दिये हुए हैं।

(२) ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—"यह ग्रन्थ संवत् १६२२ आश्विन कृष्ण सप्तमी, ता० ११ को अनन्तराम अग्रवाल के यहाँ श्रीगयादत्त पाण्डे के द्वारा आनन्दवन छापाखाने में छपा। स्थान श्री काशी विश्वनाथपुरी, मुहल्ले शिवालयघाट में।" छापाखाने का अभिप्राय लीथो छापाखाने से है।

(३) यह ग्रन्थ श्री विष्णुदेव शर्मा (ग्राम-खोरमपुर, डा० छितरौर, बेगूसराय, जि० मुँगेर) से प्राप्त हुआ है।

३. रामायण—ग्रन्थकार-गो० तुलसीदास। लिपिकार-×। अवस्था—अत्यन्त प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—१७७। प्र० पृ० पं० लगभग ४२। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लेखनकाल—सं० १८४७, फागुन सुदी पंचमी, बुधवार।

प्रारम्भ— (चौपाई)

"चहुजुगतीनीकालतीहूलोका भयेनामजपीजीववीसोका
स्रुतिपुरानसंतमतऐहू सकलसुक्रीतफलसकल सनेहू
ध्यानप्रथमयुगमखदुजपुजी दयापर परितोखनपरीपुजो
कलीकेवलमलमूलमलीना पापवोनीधीजनमनमीना"

अन्त— (सोरठा)

"सीअरघुवीरवीवाहजसप्रेमगावहीसुनही
तीन्हकहूपरमउछाहु: मंगलाएतन रामजस
इतिश्रीरामचरित्रे मानशेशकलकलीकलुखवीधसीनोनाम
अपीरसोभग्तीवीग्याननोनामप्रथमपानशमापत बालकांडसंपूरन
पंडीतजनसोवीनतीमोरी छूटलवाढ़लपरहव सवजोरी सीभमस्तु"

विषय—श्रीरामचन्द्रजी की कथा। केवल बालकाण्ड है।

टि०-(१) 'रामचरित-मानस' की प्रकाशित अन्य प्रतियों से इसमें पाठभेद है। यथा— प्रारम्भ के 'चहु जुग' में, प्रकाशित प्रतियों में, 'वेद पुरान-

संत-मत एहू' के स्थान पर 'स्रुतिपुरान' और 'ध्यान प्रथम-जुग मख-विधि दूजे' के स्थान पर 'मख दुज पुजी' लिखा है। अन्त के सोरठा में—'सियरघुवीर विवाह जो सप्रेम गावहि सुनहिं' के स्थान पर रघुवीर विवाह जस-प्रेम गावही' है। इसी प्रकार, अन्य कई स्थानों पर 'सीतानाथ' के लिए 'जानकीनाथ' शब्द आया है।

(२) ग्रन्थ में मात्राओं का, ह्रस्व-दीर्घ का, कोई विचार नहीं है।
(३) ग्रन्थ में दोहे-चौपाइयों की संख्या नहीं दी गई है।
(४) ग्रन्थ के प्रारम्भ के ९ पृष्ठ नहीं हैं। प्रारम्भ दोहा-सं० ४२ के बाद चौपाई से हुआ है।
(५) यह ग्रन्थ श्रीरामेश्वरप्रसाद गुप्त (मन्त्री, वैदिक पुस्तकालय, पुनपुन, पटना) से प्राप्त हुआ है।

४. रामायण—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार— × । अवस्था—अत्यन्त प्राचीन, देशी कागज। पृ० सं० ६०। प्र० पृ० पं० लगभग ४०। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—सं० १४८८; आषाढ बदी षष्ठी, मंगलवार।

प्रारम्भ—"श्रीगनेसाऐन्म्ह श्रीभगवानजी सहाऐ श्रीगंगाजी सहाऐ श्रीहनुमानजी-सहाऐ श्रीपोथअजोध्याकांड क्रीततुलशीदासजीका—

(इश्लोक)— वामांकेचत्रीभातीभुधरशूतादेवापगामस्तके:
भालेवालावीधुगूग्लेच-रले अस्त्रोरसी व्यालरटं:
सवीगेएवीमुतीभूखनवरं सर्वाधीपं सरवद:
सोयऐसर्वगतसीवससीनीभंग स्री शंकर पातुमा: ।।१।।
प्रसनतामास्वोगताभीखेकंस्थानं... वनवास दुहखोतानंद:
मुखावुंजं श्ररघुनन्दनसबसदासुमजुलमंगलप्रदा: ।।२।।
नीलांवुजंस्यामलकोमलंसीतास्वाम्वुपीत: वामभागं
पानो महासाऐकं चारुचापं नमामीरामंरघुवंसनाथं
(दो०)—श्रीगुरुचरनशरोज रज: नीजमनमुकुरसुधार
वरनौरघुवरवीमलजस: जोदाऐकफलचारी"

अन्त— (सोरठा)
"भरतचरीत्रकरनेम: तुलसीजेशादरकहहीं
सोयारामपदप्रेम: अवसीहोऐहरीपदवीरती"

विषय—श्रीरामचन्द्रजी की कथा। अयोध्याकाण्ड-मात्र।

टि०—(१) अन्य प्रकाशित प्रतियों से पाठभेद है। यथा—अन्त की पंक्ति में (प्रकाशित प्रति में)—तुलसी जो सादर सुनहिं' है, और इसमें 'तुलसी जे शादर कहहीं' है। अन्तिम चरण में 'अवसि होइ भवरस

बिरति' है। इस ग्रन्थ में –'अवसि होऐ हरि-पदवीरती' है। इसी प्रकार अन्य स्थलों पर भी पाठभेद है।

(२) ग्रन्थ-संख्या ३ और ४ के लिपिकार एक ही व्यक्ति प्रतीत होते हैं; क्योंकि दोनों की लिपि और लेखनशैली एक-सी है। ग्रन्थ सं० ३ को सं० १८४७, फागुन सुदी पंचमी को समाप्त करने के बाद, ३ मास ६ दिन में, ग्र० सं० ४ (अयोध्याकाण्ड) को १८४८ संवत् में आषाढ़ बदी षष्ठी को समाप्त किया है।

(३) इन दोनों ग्रन्थों का लिपिकार ही भागवतमहापुराण (ग्रन्थ-सं० १) का भी लिपिकार है। इन दोनों के लिखने के बाद संवत् १८५८ में उसे लिखा है।

(४) बालकाण्ड के समान ही इसमें भी दोहों और चौपाइयों में संख्या नहीं दी हुई है।

(५) यह ग्रन्थ श्रीरामेश्वरप्रसाद गुप्त (मन्त्री, वैदिक पुस्तकालय पुनपुन पटना) से प्राप्त हुआ है।

५. सम्पूर्णरामायण – ग्रन्थकार— गो० तुलसीदास। लिपिकार— चुन्नीलाल। अवस्था — प्राचीन, देशी कागज। पृ० सं० २१७। प्र० पृ० पं० लगभग — ४४। लिपि—नागरी। रचनाकाल— प्रसिद्ध। लेखनकाल— सं० १८५६, वैशाख सुदी २, मंगलवार।

प्रारम्भ— (चौपाई)

''वीधूवदनी सवभांतीसवारी सोहन वसन वीनावरनारी।
सवगुनरहीतकुकवीक्रीत वानी रामनाम जस अंकीतखानी।।''

अन्त— (दोहा)

''मोसमदीननदीनहीत : तुम्हसमानरघुवीर।
असवीचारी रघुवंसमनी : हरहुवीखम भौभीर
कामीहीनारीपीआरीजीमी : लोभीहीप्रीयजीमीदाम
तीमीरघुनाथनीरंतर : प्रीअलागहुमोहीराम।। संपूरन
इति रामचरीत्रेमानसेसकलकलीकलुखवीधंशनो वीमलवीआनसंवादीनो नाम सप्तसोपानउतरकांडसमापतह सीधीरस्तु सुभमस्तु।।
इति श्री पोथी रामायेनशातोकांड क्रीततुलशीदाशकथासंपुरनजथादरस तथा लीखते ममदोषनदीजेते पंडीतजन शो वीनती मोरी छूटल अछर पठवशजोरी।।''
दसषत दासनके दाससेवक चुनीलाल काएथकान वाशीदेरानीपुर कशवा:।। शंवत् १८५६ शाल मीती वैशाषसुदी २ रोज मंगल को पोथी तैयार हुआ पोथी के मालीक षुशीहालशाहु जौनपुरी शुत हुकम-शाहु के वींददीहु शाहु वाशीदे रानीपुर कशवा—शुवे धीहार।''

विषय—श्रीरामचन्द्र-कथा।

टि०—(१) लिपि प्राचीन तथा अस्पष्ट। मात्रा, ह्रस्व, दीर्घ आदि का भेद नहीं। प्राय: सभी स्थानों में ह्रस्व इकार के लिए दीर्घ ईकार का प्रयोग किया गया है।

(२) यह ग्रन्थ स्पष्ट करता है कि लिपिकार यद्यपि जौनपुर के किन्हीं शाहजी के यहाँ रहते थे, तथापि उनका निवास-स्थान 'बिहार'-प्रान्त था।

(३) यह ग्रन्थ श्रीरामहरि प्रसाद (मन्त्री, आर्य-वैदिक पुस्तकालय खुशरूपुर, पटना) के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

६. नन्दकोष (नाममाला प्रथम खण्ड) - ग्रन्थकार— नन्ददास। लिपिकार—×। अवस्था-प्राचीन, अव्यवस्थित। पृष्ठ-सं० २४। प्र० पृ० पं० लगभग—१०। लिपि—नागरी। रचनाकाल - प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रा०—"।लतानाम। व्रतती विसतीवल्लरी विसनीलतावीतान।
अमरवेलि जीमिमूलवनीतीमितुअदेषौमान।।१११।।
प्रितम नाम।। इष्टदयितवल्लभसषाप्रीतम परम सुजान।।।
पिय प्यारे........।"

अन्त—"।।जुगल नाम।। जमल जुगल जुग उभयपुनिमैथुनवीवीवीय।।
जुगलकिशोर वशो सदा नंदलाल के हीय। २७१।।

इति श्री नाम माला प्रथम षंड नंदकोष नंदलालदास्यकृत भाषाभनित समाप्तम्।। सिद्धिरस्तु शुभमस्तु।"

वि०—हिन्दी-भाषा के शब्दों के पर्याय।

टि०—ग्रन्थ के अन्त में नाम का पर्याय देकर २७१ सं० से स्पष्ट होता है कि ग्रन्थ बड़ा होगा। प्रारम्भ में ११० नामों के पृष्ठ नहीं हैं। ग्रन्थ फटी हुई अवस्था में प्राप्त हुआ है।। पृष्ठ १० तक नहीं हैं। यह ग्रन्थ कविराज श्रीनरेन्द्रनाथ वैद्य, प्रधान, आर्यसमाज भागलपुरनगर (मुहल्ला—जोगसर, भागलपुर) के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

७. (क) सतनाम—(भगत महातम कथा) - ग्रन्थकार—×। लिपिकार गोधनलाल। अवस्था—ठीक नहीं है। ग्रन्थ जीर्ण-शीर्ण है। पृष्ठ-सं० ५३। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार-प्रकार—८"×७"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लेखनकाल सं० १२७८, वैशाख शुदी, पंचमी, रविवार।

प्रा०—"भगती करै यात्री क कोन इं।। आन नारी पर चीत न डोलाई।।
व्रसै सावोन भादव मासा।। स्वाती वुंद वान्ह मरै पीआसा।।
तैसे राम भगति को आही।। दोसरी सेवा करवै नाही।।

अन्त— (दोहा)

"संतन्ही के प्रसंग ते ।। पापी उती को पाऐ ।।
जे सो चन्दन क साथ में ।। औरो काठ बसाऐ ।।
संत की संगती जो करै ।। पावै अन्त सुख वास ।।
भगती प्रतीग्या देखी कै ।। जम को भऐ जो त्रास ।।"
इति श्री भगती महातम दुखहरन जमत्रास नेवारन सकल सासत्रसार जमराए दुत संम्वादे नारद मंन दीठा वो नो औ संसार भरमायो नो नाम द्वादसमो अध्याय ।।१२।। संपूरन ।
इति श्री भगत महातम कथ सम्पूरन समापतह । जो देखा सो लीखा मम दोख नहीं अंत सकल संत सौ वीनती मोरी छुटल अछर मात्रा पठत्र सब जोरी पोथीक मालीक श्री श्री श्री स्वामी गोपालदासजी मोकाम शा० तेघरा प्रग० मलकी पुश शुदी तीन तीश्रा रोज ऐतिवार को अढ़ाई पहर दीन उठते तैंआर भेल दसखत........"

वि०—भक्ति, सत्संगति और मोक्ष के आधार पर नारद के साथ राजा का संवाद दोहे और चौपाइयों में ।

टि०— ग्रन्थ के प्रारम्भ के पाँच पृष्ठ नहीं हैं । इस ग्रन्थ के साथ ही दो ग्रन्थ और भी सम्बद्ध हैं, जिसका विवरण अधोलिखित है। यह ग्रन्थ कबीर-मठ, रोसड़ा (दरभंगा) के महन्त श्रीअवधदास साहब के सौजन्य से प्राप्त हुआ है ।

७. (ख) भौपालबोध --(भूपालबोध)—ग्रन्थकार— × । लिपिकार—गोन्दरलाल । अवस्था— प्राचीन, देशी कागज, विपर्यस्त पृष्ठ सं० ९ । प्र० पृ० पं० लगभग— ४० । आकार-प्रकार—८" × ७" । भाषा -- हिन्दी । लिपि —नागरी । रचना-काल— × । लेखनकाल- सं० १२७८ आषाढ़ सुदी चतुर्दशी, शनिवार ।

प्रा० —"चौपाई ।। धर्मदासो वचनं ।।
धर्मदास कहे वन्दी छोरा । कैसे जीवन भारत थोरा ।।"

अन्त— (सोरठा)

"सोहं साईं महोऐ ।। सबद सार तासो कहो ।।
ऐतो श्री ग्रन्थ भोपालबोध संमपूरंन समापतह जो देषा सोलीषा मम दोष नेही अंते सकल संत सौ वीनती मोरी छुटल अछर मंत्रा पठव सब जोरो मीती आषाढ़ सुदी चतुरसो रोज सनीचर कं डेढ़ पहर दीन उठते ग्रन्थ तंआर भेल ग्रन्थ के मालीक श्री गोसाईं गोपालदास साकीन तेघरा प्रगंने मलकी द: अधीन संत गोन्दरलाल साकीन त्रोनी प्रगंने मलकी ता० २९ असाढ़ रोज शनीचर सं० १२७८ साल ।।"

वि०—धर्मराज, ज्ञानी और भूपाल के परस्पर वार्तालाप द्वारा जीवन, ज्ञान, मोक्ष और जीव के सम्बन्ध में विवेचन । साखी, दोहा, सोरठा और चौपाइयों में रचना ।

टि०—इस ग्रन्थ के साथ दो पृष्ठों का नेहादास-लिखित 'अमरमूल' भी है। 'क' और 'ख' दोनों ग्रन्थ एक जिल्द में एक साथ ही हैं। यह ग्रन्थ श्रीमहन्त अवधदास साहब, रोसड़ा (दरभंगा), कबीरमठ के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

८. असज्जनमुखचपेटिका—ग्रन्थकार—रामाश्रमाचार्य। लिपिकार—भीष्मदास। अवस्था—अच्छी। ग्रन्थ अपूर्ण। पृ० सं० ६। प्र० पृ० पं० लगभग—२४। आकार-प्रकार—१४" × ५१/४"। भाषा—हिन्दी लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—संवत् १९१०।

प्रा०—"श्रीमतेरामानुज्जाय नमः श्रीमद्भागवत नौमि यस्यैं कस्स्य प्रसादतः अज्ञातानपि जानाति सर्व. सर्वागमानपि १
रामाश्रमाचार्यकृता सज्जनमुखचपेटिका तामहंतु मीमांस्ये मां श्रीमद्भागवतद्विषां २
तदर्थं भाषायाः कुर्व्वे दुर्ज्जनानां हरिद्विषां मुखचपेटिकां सर्वे महांतो हृदिधीयतां ३

कवित्त—वेद औ पुराण सूत्र सकल सराहै जाहि
ताहि को बतावै वोपदेव कृत भडुआ
शंकर सराहै मधुसूदन सराहै जाहि
श्रीधरो सराहै ताहि मानो नहि गडुआ
वीर एहै जांहि धवचक्रवर्ति गौड को प्रमाण सव
नागोजी तिलक कियौ द्युतिआर्क कडुआ
भट्टोजी प्रमाण कियो विदित जहान माहि
कैसे कै वुझावौं सारे वयल कह अडुआ १"

अन्त—"कहि कहि थकि गयो वेद औ पुराण मुनि
जानत जहान सब लोग भकआए हैं।
भूलि है पुराण राह गहि है गवार वांह ता
ते कविता इकरि हमहु बताए है॥
नीक लागै सोई करो चुल्हा भार सोइ परो
तुम शो तो हम नाहि कवो कछु पाए है।
दीन देषि सकल भरोसे दाम चामही के
मैं तो सधुआइ वश कछु कलपाए है॥४२॥
हाथ जोरि माथ नाइ व्यासजी के लाड़िला के
चरग कमल रज मेरो धन ऐही है
नाम शुकदेव जो वषाने एह भागवत
भागवत आप कृस्नचन्द्र के सनेही है॥
जासु रीति भाति सूत सकल सराहि गए

ताहि को भाव कहवैया कौन देही है।
तहा मेरो जीभि तो गवाही देत सकुचत
हारि मानि रहत न जात कहि मेहीं है ॥४३॥
यदि गाल्या भवेदोर्षा परलोक हितात्मन: ।
भवद्भिश्च तथा सद्भिर्दीयतां मयम् सर्वश: ॥४४॥
नोचे करुणया प्रोक्ता मंगीकारतया शुभां ।
गृह्णीत सुधियो गालीं भवंतो हि सु साधव ॥४५॥
श्रुतिस्मृतिसमाचारविरोध.वेशरोषत: ।
कृते यम सता मर्वाक वाण्या मुख चपेटिका ॥४६॥
इति श्रीमज्जानकी प्रशादकृता सज्जनमुख चपेटि समाप्ता संवत्
नुर्नसेदस लिष्यतं भीष्मदास वैरागी कबीर पंथी ।।"

वि०—इस ग्रन्थ में लोक-प्रचलित अवतारवाद, पुराण आदि-सम्मत सिद्धान्तों की आलोचना की गई है।

टि०—कबीर-मत से सम्बद्ध विचार। ईश्वर के सम्बन्ध में भी विवेचन। वेद, पुराण, उपनिषद्, भागवत आदि पर लेखक के अपने विचार। कबीरदास की जैसी तीखी भाषा का प्रयोग। यह ग्रन्थ, महन्त श्रीअवधदास साहबजी, कबीरमठ (रोसड़ा, दरभंगा) के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

९. भक्तमाल — ग्रन्थकार — नाभास्वामी (नाभादास)। लिपिकार—भीष्मदास। अवस्था — प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० ३५४। प्र० पृ० पं० लगभग — ३३। आकार-प्रकार—१४" × ६½"। भाषा—हिन्दी। लिपि-नागरी। रचनाकाल — प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् १९०७ फाल्गुन शुक्ल एकादशी, रविवार॥

प्रा०— 'श्रीकबीरसाहिवाय नम: ॥ श्री हरिगुरुवैस्नवभ्यो नम: ॥ अथ श्री भक्तमाल टीकासहित लिख्यते । तहा अर्थ भक्तमाल मै लिख्यो है ॥
भक्त भक्ति भगवतंरु सो व्यारिस रूप लिख्ये है॥
तहाँ हरि को सरूपन लिख्यो जाय। क्योंकि कठिन है कवित्त॥
रूप की अवधि ऐसी औरन बनाई विधि जाके लिपवे को लाल
देवता मनाइवो ताकि सोभालपिवेको बैठत।
गरब करि अनंत हि मन होत घूमि घन नाइबो।
ऐसी भाँति आप आप कूर कहिवाय गये चतुर।
चितेरे तिन्हें कहाँ लों गिनवाइवो। कृस्न प्रान प्यारे वह चित्रनि
विचित्र गति कान्ह पैन बनै वाके चित्र को वनाइवो॥१॥
लिखन वैठी जाकि छवि गहि गहि गरव गरूर।
भये न केते जगत के चतुर चितेरे कूर॥

चतुर चितेरे जो लिखे रचि पचि मूरति वाल।
वह चितवनि वह मुरिचलनि कैसे लिखै जमा॥
कठिन लिखन अतिसय महा कैसे कै लिखि जाय।
यशुदा सुत के वरन वपु कहो मोहि समुझाय॥
नुत्तर मन गति अति सैं रोकि कै हितचित मति करि एक॥
लिखै मधुर मूरति विसद जीवन गुरुपद टेक॥३॥

कवित्त

अन्त—"समर में लह्यो जाय गिरिहू गिरयौ जाय
गगन में फिरयौ जाय पावक में दहियो
कानन में रह्यौ जाय विरह हू सह्यौ जाय
पाल कर गह्यो जाय और कहा कहिवो।
हलाहल पियो जाय करतब कियो जाय
सर्व सुनियो जाय सखि को कहिवो।
और दुख पाहू से दुसह कठिन ऐसो
जैसो कान्ह कर संग एक क्षिण रहिवो॥"

विषय—श्रीकृष्ण-जीवन-सम्बन्धी प्रसिद्ध पोथी।

टि०—इस ग्रन्थ में एक साथ ही कई टीकाकारों की टीका प्रतीत होती है। लेखन-शैली प्राचीन है। टीकाकार प्रियदास हैं। दूसरे टीकाकार नारायणदास हैं। ज्ञात होता है, नारायणदास ने मूल की टीका की है और प्रियदास ने उस टीका की भी टीका की है। ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—

"अस्तुति श्री मूलकार नारायणदास जू की। छप्पै॥
नमो नमो महाराज नमो श्री नाभा स्वामी
गुण निधान सब जानकाल नृप अंतर जामी
भक्त माल सुख जाल भक्तिरस अमृत बानी
भगतुसिंधु को तरन धर्म नौका यह कीन्ही
भागोत धर्म सव सुकथन को चतुर्वेद प्रगट्यौ मही
जन लालदास कै आस यह चरण सरण राषो सही॥१॥

दोहा—वार वार वंदन करौ नाभा आभा अैन
काठनौगा भा वेद को श्री भक्तमाल सुख देन॥"

अथ लिखके प्रार्थना (सम्भवतः इसका अभिप्राय है—लेखक की पाठकों के प्रति अभ्यर्थना)—

"नाभा स्वामी मूल कृत तिलक प्रियाभृतु कीन्ह
वैसनव पुनि पर्याय करि लाल अनुग लिखी लीन्ह १
जो टिप्पन पूरव किये वैस्नवदास प्रमाण
ता सम मथन मीन कृत क्षेम दास गुरु जाण २

पुनि छै टिप्पन समुझि हित ठौर ठौर जौन
कीन्ह दास दास के दास कृत लाल दास मतहीन ३"

इससे ज्ञात होता है कि प्रारम्भ में 'तिलकप्रिया' टीका किसी ने की थी। बाद में 'वैस्नवदास', 'क्षेमदास' और 'नारायणदास' तथा 'प्रियादास' ने व्याख्या की है।

टीकाकार ने गीता के अतिरिक्त बिहारी और सूर के भी उद्धरण दिये हैं। ग्रन्थ के अन्त में लिपिकार ने अपने विषय में लिखा है—

"श्रोता वकता जुगल सो वीनै करो कर जोरि
लघु वीशाल अक्षर परयौ सो सब वाँचिय जोरि
नाभा कृत जो मूल है टीका कृत प्रियादास
पुनि वैस्नव टिप्पन कीयो भक्तमाल सुख रास ।।
फागुन माह के पक्ष में शुकल पक्ष के बीच
तिथी एकादशी जानिये मध्याह्न के बीच
सम्मत सतनूनैस क माह एगारह जान
भीष्मदास पुस्तक लिषी रवीवार परमान ।।३।।
वहल गाव के दक्षिन पकरवला स्थान
तथा बैठि पूरण कीये गुरु पद करिहीये ध्यान ।।७।।"

इस ग्रन्थ के अनुसन्धान से सम्भावना है, कुछ महत्त्व की सामग्री प्राप्त हो। यह ग्रन्थ अवधदास साहब महन्त (कबीरमठ, रोसड़ा, दरभंगा) के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

१०. भक्तमाल—ग्रन्थकार—नाभाजी (नाभादास)। लिपिकार—भीष्मदास। अवस्था—अच्छी। प्राचीन, हाथ का बना, देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—९३। प्र० पृ० पं० लगभग—२६। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—कार्त्तिक, शुक्ल तृतीया, सं० १९३४ (सन् १८७७), गुरुवार।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः ।। अथ श्री भक्तमालटीका सहीत लिष्यते ।। टीका करता को मंगलाचरण ।।"

कवित्त ।।

"महाप्रभु कृस्नचैतन्यमनहरन जू के
चरण को ध्यान मेरे नाम मुख गाईये ।।
ताही समै नाभाजू मै आग्या दई लई
धारि टीका विस्तार भक्तमाल को सुनाईये ।।
कीजिये कवित्तवंध छंद अति प्यारो लगै
जगै जगमाही कहवानी विरमाईये ।।
जानौ निज मति अँपै सुन्यो भागवत
शकदृ मुनि प्रवेस कियो अैसै ही कहाईये ।।

अथ टीका को नाम स्वरूपवरनन ।।
रचि कविताई सुषदाई लगै निपट सुहाई
औ सचाई पुनिरुक्त लै मिटाई है ।।
अक्षर मधुरताई अनुप्रास जमुकाई अति
छवि छाई मोद भरी सी लगाई है ।।
काव्य की वड़ाई निज मुषन भलाई होत
नाभाजु कहाई ताते पोटिक सुनाइ है ।।
हृदय सरसाइ जो पै सुनिलैं सदाइ यह
भक्तिरस बोधनी सुनाम टीका गाइ है ।।''

अन्त— ''स्वारथ के साधवे कौ आनके अराधवे कौ
दीननिके वाधिवे कौ दौरत नुमाय कौ ।।
कोमल कृपा लहइ संतनिकी सदाचार
दुर्जननुदारता सोवै वेरौ अलसाय कै ।।
आलसी आलाम सुषधाम रामचंद्र भूल्यो
उल्यो भवसिंधमाहि फूल्यो धन पाय कै ।।
करमी कुचाल लाल मालाहून तिलक भाल
ऐसे भक्त मालहि कीजै कहलाय कै ।।६३२।।''
नाभा स्वामी जू की अस्तुति ।।

छप्पै ।। ''नमो नमो महाराज नमो श्री नाभा स्वामी
गुन निधान सब जान काल त्रिये अंतरजामी
भक्तमाल सुष जालभक्ति रस अमृत भीनी
जक्त सिंधु कौ तरन परम नोका इह कीनी
भागोत धर्म सब कथन कौ चतुर वेद प्रगट्यौ मही ।।
जन लालदास के आस यह चरन सरन रोपी सही ।।६३३।।

दोहा— वार बार वंदन करूनाभा आभा अंन ।।
कह्यो गाभा वेद को भक्त माल सुष दंन ।।१।।''
इति श्री भक्तमाल मूल टीका सहित सम्पूर्ण समाप्त ।।१।।

विषय—भक्तिकाव्य ।

टि०-(१) यह 'भक्तमाल' सटीक है । टीका की शैली प्राचीन है । यद्यपि पोथी के प्रारम्भ या अन्त में टीकाकार के नाम का स्पष्ट संकेत नहीं है । ग्रन्थ के अन्त में 'जनलालदास कै आस' नाम से संकेत हो रहा है किसी लालदास का, जो सम्भवतः टीकाकार हो सकते हैं । इनके अन्य ग्रन्थों में भी नाम के लिए ये शब्द आये हैं ।

(२) पोथी की लिपि प्राचीन है। लिपि पुरानी होने के कारण ही अस्पष्ट है। लिपिकार ने अपने सम्बन्ध में लिखा है—'ग्रन्थ लिपि समाप्त कीया भीष्मदास स्वयं पठनार्थे। १।। पछि देशहरिया नाहजहा रोट के पान दिल्लिसर के अग्र हैवषाना ग्राम सो जान कोसपोरस सोहे प्रमानतामधि वैठिकै ग्रन्थ पूरा कीया भीष्म गुरुपदधरि ध्यान।।१।। नप सीष षष्ट ग्राम को लिपत भवो अति कष्ट। मूरष हाथ न दिजीयो सप्त लिषो सप्त अष्ट।।१।। संसतसो विनती मोरी छुटल अछर लेव सब जोरी।।'

इससे लिपिकार के स्थान आदि का संकेत मिलता है।

यह ग्रन्थ कबीरपन्थी मठ (तेघड़ा, मुंगेर) के प्रमुख साधु के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

११. भक्तमाल—ग्रन्थकार—नाभास्वामी (नाभादास)। लिपिकार – ×। अवस्था—अच्छी। हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—१६। प्र० पृ० पं० लगभग—३०। लिपि–नागरी। रचनाकाल–प्रसिद्ध। लिपिकाल— ×।

प्रारम्भ—"श्री सद्गुरु कबीर साहिवायनम।। वंदेहं श्रीगुरो श्रीयुत् पदकमलं श्री गुरुवैष्णवदास।

श्री रूपसाग्रजातंसहगणरघुनाथन्विदमतम्।। तं सजीवं साहेतं सावधूतं परिजनसहितं कृस्नचैतन्य देवं श्री राधाकृस्नपादनर सहगणललितान् श्री विसाखाचिताश्नम्।।१।।

चेतोमृगैर्जनानां सततनगता श्री प्रियादासटीका गंधद्रव्यादिलेपाहारि-भकैर्व्यंजनी समन्तात्। सानदासर्वशास्त्र अवलिवकुलमोद्यानलता श्री नाभामालाकारेण कृपाचरतिहरिहृदि श्रीमतीर्भक्तिमाला।।२।।

व्रह्म।। वंदोभक्त सुमाल लालिलाबिलो मतनहरण।।
भेटत कठिन कराल भाल अंकवद्गुजन्मके।।
वंदोतवधूरिगुण सागरनागरमह।।
कृपा सजीवनिमूरिव्याधिहरण करुणा भवन।।१।।
रसिकनलोगभूपजोरिपान वितनिकरत।।
महाराजसुखस्वरूप भक्तमालहि विधि कहयो।।"

पद।।

अन्त—"मीठेमोठेचाषिवेरल्याईभीलनी।।
कौनसी अचार वरतीनही रंगरुप
रतीजाति हू मैं कुलहीनी बड़ी है कुचीलनी।
जूठे फल पाये राम सकुचे न भाव जानि
तुमतो प्रभु ऐसो कीनी रस की रसीलनी
कौनसी तुपस्या कीनी वैकुंठ पदई दीनी

विमान मंचठीजात अंसी है सुसीलनी ।।
सांची प्रीतिकरै कोई दासमीरानुधरै सोई प्रीति
ही सोतरि गई गोकुल की अहीरनी ।।१।।

एकादशे ।। भक्तयाहमेकया ग्राह्य शुद्धयात्मा प्रियस्थितां ।।
भवितं पुनातिमन्निष्टा स्वपाकानपि संभवान् ।।१।।''

विषय— भक्तिकाव्य। दार्शनिक और साहित्यिक।

टि०–(१) इस ग्रन्थ में गीता, पुराण आदि के श्लोकों के उल्लेख द्वारा टीकाकार ने ग्रन्थ के विषय की पुष्टि की है। ग्रन्थ के मूल और टीका को प्रारम्भ करने के पूर्व टीकाकार ने विभिन्न विषयों पर अपने मत दिये हैं। आत्मा के सम्बन्ध में पृ० सं० ४ में–।। गीतायां ।। नैनं छिंदति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः न चैनं क्लेदयंत्यापो न शोषयति मारुतः ।१। सो जीव नित्य है ।। पूरव अध्यासचल्यौआवै है इंद्रयादिकन कोलय-विक्षेप है परन्तु जीव को नहीं ।। त्रयकालत्रयावस्थाविषैअपरिछिन्न है याते ध्यान ।।''

टीकाकार ने अपने विषय में पृ० सं० ३ में लिखा है—
"श्री अग्रनरायनदास प्रियाप्रियप्रगटी जीवन रसिकरसाल प्रभु ब्रह्मा पुनिविस्नुप्रभुसवंज्ञ-महेस रविशशिवरुण कुवेर शेष गणेश सुरेस ।।१।।
जाकी सत्ता पाय के सभही होत समर्थ
अपने अरने दास के सकल समारत अर्थ
जब जब राक्षस देत दुष काहूकीनवसाय ।।
व्याकुल फिरत विहाल अति महाकष्ट को पाय ।।''

पोथी के टीकाकार प्रियादास हैं। ग्रन्थ अपूर्ण है। टीका के पूर्व भूमिका विस्तृत है। पोथी की भाषा अवधी और व्रज से मिलती-जुलती है।

(२) पोथी के लिपिकार का नाम प्रारम्भ या अन्त में नहीं है। लिपि की शैली प्राचीन और अस्पष्ट है। लिपिकार कोई कबीरपन्थी वैष्णव साधु प्रतीत होते हैं। प्रारम्भ में 'सद्गुरु कबीर' का नाम लिया गया है। टीका अच्छी है। 'मा० लो०' यह संकेत मूल ग्रन्थ के लिए है। ग्रन्थ में उद्धरण, गीता, वामनपुराण और पद्मपुराण से दिये गये हैं। ग्रन्थ की पृष्ठ-सं० ४ में 'हनुमन्नाटक' से भी उद्धरण दिया गया है। ग्रन्थ अनुसन्धेय हैं।

(३) यह ग्रन्थ कबीरस्थान, (तेघड़ा, मुँगेर) से प्राप्त हुआ।

१२. सतनाम—ग्रन्थकार— ×। लिपिकार – ×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ सं० १८। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। लिपि—नागरी। रचनाकाल— ×। लिपिकाल— ×।

प्रारम्भ—(पतले अक्षरों में)

"झनकार है जगत को भावी भुतव्रत तीनों अक्षर ते न्यारो न हिशहीये
ही वात यी प्रवान वेद मत को
ताहिते कहत है कवीर तीन अंक जोर मोर और कहैगते अगत को। २

(मोटे अक्षरों में) क ब्रह्म अमीनामेषु ।। विद्यमाणं विशिष्यते रमंते श्रवभुतानं यत
कवोरस्य उच्यते ।३

पतले अ०) टीका ।। जल में कवीर यौर थल में कवीर
पांच तत्त में बसे कवीर तीनि गुन में कवीर है ।
विद्यमाण जान यौ बिसेसना है
भन हेके से निसु दिन ज्यौ हगन में नीर हैं
थावर औ जंगम जत जीव जगत मो है
रह्यौ भरपुर जैसे जटित जंजीर है
ताहिते कहत है कवीर तीनि यंक जोरि
मोरि मोरि और हिलगावै ते अधीर है।।३।

(मोटे अ०) मूल ।। कः सुख सागोरो दाता। बीज ज्ञान तथैव च
रहितोआदि यंतेण। यत कवीरस्य उच्यते ।।४।।

(पतले अ०) टीका। कहत ककार सुष सागर दातार यहै
ध्यान को शयासागुर ज्ञान वीज वानी है
रटत रकार सीर हित आदि अंत मध्य
कहत चहत जाकी अकथ कहानी है
गूगैं कै सो गुर जोई पाये सोई स्वाद जानै
चुपचाप होईक कक्ष वात न वपानी है।
ताहिते कहत है कवीर तीनी यंक जोरि
मोरि मोरि और ही कहैगे ते अज्ञान है ।।४।।"

अन्त—मूल ।। (मोटे अक्षरों में) कपटहरा पटं क्षेत्रा ।। विचारो परमार्थकः
रागद्वेष विनासश्च।। यत कवीरस्य उच्यते ।।२६।।
(पतले अक्षरों में) टीका।—कपट प्रछेदा ।।
"सवते सिरे है पर सुन्य पर कर्न काज करना ।।
ककार सब जगणि शतार यह ।।
कहत बकार सो विचार करो ।।
वार वार जन जग माह जानो मानो सार शार यह ।।
राम राम रटवहै आठो जाम काम सोई सोई निजा
नाम धाम धाम है रकार यह ।।
ताही ते कहत है कवीर तीणि अंक जोरि मोरि मापै ।।
और नकं निरधार यह ।।३४।।

(मोटे अक्षरों में) मूल ।। कमुदनीय जथा भावो ।। विमला चक्षु क्षियागती ।।
धारना सुभ लोकानां । यत कवीरस्य उच्यते ।।३५।।"

विषय—कबीरपन्थ का दार्शनिक साहित्य ।

टि०–(१) यह पुस्तिका अपूर्ण है । प्रारम्भ और अन्त के पृष्ठ फटे होने के कारण, ग्रन्थ का नाम, ग्रन्थकर्त्ता, लिपिकार, काल आदि के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं होता है । अन्त के कुछ पृष्ठों पर 'सतनाम' लिखा है। यह नाम ग्रन्थ के लिए उपयुक्त प्रतीत नहीं होता । इसमें 'क' आदि वर्णों के आधार पर कबीर की स्तुति दार्शनिक पद्धति से की गई है । मूल ग्रन्थ संस्कृत श्लोक में है और उसकी टीका हिन्दी-पद्य में । मूल श्लोक के प्रत्येक के पदान्त में 'यत् कबीरस्य उच्यते' और हिन्दी-पद्य के प्रत्येक के अन्त में 'तीनी अंक जोरि' आदि हैं । सभी ४५ पद हैं, किन्तु पृष्ठ-सं० २ से आरम्भ होकर पृष्ठ-सं० १७ तक लगातार हैं । बाद के दो पृष्ठ नहीं हैं । २० वें पृष्ठ में दो पंक्तियाँ मात्र हैं ।

(२) पुस्तिका की लिपि स्पष्ट और सुन्दर है । लिपि-शैली, यद्यपि प्राचीन है, तथापि 'व' 'औ' 'ब' क्रमशः अपने स्वरूप में ही लिखे गये हैं । 'ख' के लिए 'ष' औ 'ज' के लिए 'य' तथा 'य' के लिए 'य' के नीचे बिन्दु देकर 'य़' लिखा गया है । किन्तु, य यहाँ अपने शुद्ध रूप में ही लिखा गया है ।

(३) यह पुस्तिका कवीरपन्थी मठ, (तेघरा, मुँगेर) के एक साधु के सौजन्य से प्राप्त हुआ ।

१३. ....ग्रन्थकार—×। लिपिकार—प्रेमदास । अवस्था - अच्छी, बीच बीच में फटा है। पृष्ठ-सं०१५० । प्र० पृ० पं० लगभग—२८ । आकार — × । लिपि —नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"।। मंगल ।।

दिनन कहो दयाल भक्ति की पन करो ।।
सारण आपकी लाज गई साहिब जिन करो ।।१।।
नउ द्वार विकार धारनो का वर्ग ।।
मेरी सुरति नहीं ठहराय लगन कैसे लगै ।।२।।
पाँच तत्व गुन तीन का सावर सा जीया ।।
जम राषै मिल माय तो फंदन फांदिया ।।३।।
त्रिगुण फांसि फंदी आप माया मद जाल में ।।
भो सागर के बीच महा जंजाल में ।।४।।
मोछ मुक्ति जब होय दया जन पै करो ।।
मेरो काटो कर्म विकार दास अपनो करो ।।५।।

साबेब कबीरबंदि छोर अरज एक मानिय ।।
हमसे पतीत उधारि सरन साहिब आनिये ।।६।।

अन्त—"।।टेक।।
मन करि घीत कायाकरि थाली ब्रह्म ज्ञान करि बाती
पंच तत ले दीप गजोया वल अषय दिन राती ।।१।।
चित चंदन ओ ध्यान सुगंधन अनहद घंट बजाई
अजपाधुनि भाव धरि भोजन मन सा भोग लगाई ।।२।।
चवर सुन अपख्यान गावना नावक पाट लगाई
भीतर हरि पुजि पर मे सुर अत्म पुहुप चढ़ाई ।।३।।
संख मृदंग गंग हर धुनि उपजै अनहर वाजै वीन
ब्रह्मा विस्न महेस नारद सकल साध लोलीन ।।४।।
काल निकंदन सुर नर वंदन संतन पुरन अधार
कहैं कबीर भक्ति येक मागो आवागमन निवारि ।।५।।"

विषय— कबीर-साहित्य । दार्शनिक ।

टि०–(१) पोथी के प्रारम्भ या अन्त में पोथी का नाम नहीं दिया हुआ है । प्रतीत होता है—कबीरदास के अनेक ग्रन्थों का इसमें लघुकाय, संक्षिप्त संग्रह है । इसमें साखी, रमैनी, मगला, मंगलाविलास और सेहरा तथा होरी आदि हैं । रचना सुन्दर, हृद्य और दार्शनिक है । स्थान-स्थान पर निर्गुण, रहस्यवादी भावना का बड़ा ही गम्भीर पुट है । यों तो प्रायः प्रत्येक पद्य के अन्त में 'कहै कबीर' ऐसा लिखा है; किन्तु पृष्ठ-संख्या ३५ और ३६ में श्रीधर्मदासजी का नाम आया है, जो श्रीसन्त कबीर साहब की ही शिष्य-परम्परा में से कोई सम्भव हों । 'सतगुरु' की सर्वत्र चर्चा है । ग्रन्थ अनुसन्धेय है ।

(२) पोथी की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है । प्रारम्भ के सात पृष्ठ फटे हुए हैं और आठ से प्रारम्भ होने पर भी दो पृष्ठ जीर्ण हैं । अन्त में भी पोथी अपूर्ण है । पृष्ठ-सं० १०१ तक दी गई है, बाद के ४६ पृष्ठों में सं० नहीं दी गई है ।

(३) यह पोथी श्रीकबीरमठ, (तेघड़ा, मुंगेर) से प्राप्त किया ।

१४. युगलस्तोत्र—ग्रन्थकार—श्रीभट्ट । लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी । प्राचीन देशी कागज । पृष्ठ-सं० १० । प्र० पृ० पं० लगभग—२८ । लिपि—नागरी । रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"रागविभास—
उठत भोर लालजू के संगतें कुंजकी कसत राधिकाप्यारी
खिसी खिसी परत नीलपट सिरतें सशीवदनी नव यौवनवारी
मनभावती लाल गिरिधरजू की रचिहैं विधाता सुहथ संवारी

जै श्री भटसुरति रंग भीनें प्रीय सहित देखे निकुंज बिहारी ७
प्रात मुदित मिलि मंगल गावैं लाल लडंती को सखी लडावैं
रहसिकेलिकहिहीयें भाई राधामाधव अधिक हिताई
प्रेम संभ्रमकें वचन सुनावैं सुन्दरी हरिमुख दर्शन पावैं
भाल विशाल कमलदलनैंनी स्यामास्याम परम सुखबैंनी
जै जै शुरकरताल बजावैं गीतवाद्य सुचाल मिलावैं
हीयेंहाव भावलियें थाराराति घृतज्योतिवात विहारा
तनमनमुक्ता चौक पुरावैं आरति श्री भट अमिट परचावैं ८"

अन्त—"रागकेदारी—

फूली कुमुदनी सरद सुहाई
जमुनातीर धीर दोऊ विहरत कमल नील कट भाई
नील वरन स्यामा रुच कीनी अरुन वरन ता हरिमन भाई
श्री भट लपटी रहैं अंसनकर मानौ मरकतमीन कनक जाराई १०२
स्यामा स्यामपदपावै सोईगुरु संतति अति रीत जो होई नंद
सुवन वृषभानु सुतापद भजै तजै मन अति जोई
श्री भट अटकि रहैं स्वामिपन आनकं हे मनि सव छाई १०३

दोहा—श्री भट प्रगटित जुगलसत पढै कंठत्रिकाल
जुगलकेलि अवलोंकसें मिटै विषैजंजाल १०४"

इति श्री युगल सत संपूर्णः ।

विषय—कृष्णभक्ति-काव्य ।

टि०—(१) इस ग्रन्थ में कविवर भट्ट ने राधा और कृष्ण के प्रेम का बड़ा ही आकर्षक और मनोरंजक वर्णन किया है। इसकी भाषा व्रजभाषा-साहित्य से मिलती-जुलती है। व्रजभाषा के कवियों के समान ही, बिभिन्न रागों में रचना की गई है । एक राग के बाद दोहा का समावेश है। वर्णन बड़ा ही रोचक और हृद्य है । शैली सुन्दर है और भाषा प्रभावकारी । ग्रन्थ अनुसन्धेय है । ग्रन्थ के प्रारम्भ के दो पृष्ठ फटे हैं।

(२) ग्रन्थ की लिपि पुरानी और अस्पष्ट है ।

(३) यह ग्रन्थ श्रीकबीरमठ, सोनपुर के महन्तजी के सौजन्य से प्राप्त किया ।

१५. सतनाम विहंगम—(गुरुग्रन्थ साहब के जपुजी साहब का भाग)—ग्रन्थकार—गुरुनानक साहब । लिपिकार—× । अवस्था—अच्छी, प्राचीन देशी कागज । पृष्ठ-सं० १६३ । प्र० पृ० पं० लगभग—३० । आकार -- × । लिपि—गुरुमुखी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"साखी ॥ हुक्म रजाईचलनानानकलिखियानालकिसकापरमारथतवअसाकहया सिधुजीमिलनरहनाआवनजाननांगभूखवक्षमारसबइसनोहुकुमपरमेश्वरदेवीचहै ॥"

अन्त—"वाहेगुरुनिर्माणहैजापयाहोमपुनीत तिसेपरापतनानकातराबिहंगम चीद,

पौड़ी—बोबैबसकरलेततसजीया अमृतनामहोतहिवीया
हहैहटासूधकरिराखैपी अमृतएहोमनतनतिरापै
जगे ग्यान किया मनमांहोजोचीनैसो भरमैनाही
रारेरांगबहुत अनकार नानक जबजब उतरे पार
इतीबिहंगमसंपूरन भुलाचुकावक्षणअक्खरलागकनासोध पढ़ावा।
बोले भाई बाहेगुरुजी, सतगुरुजी, धन्य गुरुजी, बाहेगुरुजी।
एकओंकार सतगुरुप्रसाद ॥"

विषय—जपुजी साहब (गुरुजी की प्रथम वाणी)।

टि०—(१) गुरुनानक साहब के जीवन की एक कथा है—"गुरुनानक साहब सुमेरु पर्वत पर गये, वहाँ गुरुगोरखनाथ और मछेन्द्रनाथ उपस्थित थे। उनके साथ उस समय उनके शिष्य भाई मरदानजी (मुसलमान) और भाई बालाजी (हिन्दू) थे। वहाँ उन लोगों की गोष्ठी हुई। उस स्थान पर श्रीगुरुनानकजी ने जो कुछ कहा, वह 'श्रीजपुजी साहब' नाम से प्रसिद्ध है।" यह ग्रन्थ-साहब का एक गुटका है।

(२) इस ग्रन्थ में 'जपुजी साहब' के अतिरिक्त 'सुखमणी साहब' भी हैं। 'सुखमणी साहब' पाँचवें गुरु अर्जुनदेव का लिखा है। इसमें उक्त दोनों ग्रन्थों की टीका है। टीकाकार ने मूल ग्रन्थ की टीका के अतिरिक्त अपने भी विचार दिये हैं। ग्रन्थ में, वाणी, साखी और शब्द का प्रयोग हुआ है। वाणी' सवैया और चौपाई को कहते हैं। यह एक छन्द है। 'साखी' वाणी की व्याख्या है। वाणी को ही 'शब्द' भी कहते हैं।

(३) इसमें बहुत-सी वाणियाँ ऐसी हैं, जो प्रकाशित और उपलब्ध 'गुरुग्रन्थ साहब' और 'सुखमणी साहब जपुजी साहब' में नहीं हैं। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। यह ग्रन्थ (टीका) अप्रकाशित है।

(४) ग्रन्थ के लिपिकार कोई उदासीन-सम्प्रदाय (सिक्ख-सम्प्रदाय की एक शाखा) के साधु हैं। मूल ग्रन्थ और टीका के अतिरिक्त लिपिकार ने अपनी ओर से भी कहीं-कहीं कुछ लिखा है। लिपिकार ने अपने को 'विहंगम' कहा है। विहंगम का अर्थ होता है—अहन्ता एवं अभिमान से रहित। गुरुमुखी में, सिक्खों की भाषा में, 'साधु' को विहंगम कहते हैं। 'अतिथि' के लिए भी इस शब्द का प्रयोग होता है। लिपिकार ने ग्रन्थ की समाप्ति के बाद ग्रन्थ के लिए भी इसी शब्द का प्रयोग किया है। 'इती बिहंगम संपूरन' और 'तिसे परापत नाननका तरा बिहंगम चीद' में दो बार 'बिहंगम' शब्द आया है। ग्रन्थ में अनेक

स्थलों पर यह शब्द दुहराया गया है। इससे प्रतीत होता है कि लिपिकार कोई साधु सिक्ख है या इस नाम का कोई अन्य व्यक्ति।

(५) ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर लिपि में थोड़ा अन्तर है, जिससे ज्ञात होता है कि या तो भिन्न-भिन्न लिपिकारो ने मिलकर लिखा है, या लेखनी भिन्न होने के कारण ऐसी भिन्नता है। ग्रन्थ को समाप्त करने के बाद पुनः लिखा है—

"राग तेलंग किवाड़ : अगम अगोचर अलख है रूप न लखा जाय। जोति की है दीदार दिया खै को अलार" आदि। दो पृष्ठ और लिखा है। लिपिकार ने ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार की ओर संकेत नहीं किया है। अनुमान है, यह दो सौ साल पूर्व की पोथी है। इसकी लिपि अत्यन्त प्राचीन और अस्पष्ट है। पोथी में कई स्थलों पर उदासीन-सम्प्रदाय के सिद्धान्त की भी समीक्षा है। यह ग्रन्थ श्रीगुरुनानक साहब का है। प्रारम्भ के कुछ पृष्ठ फटे हैं।

यह ग्रन्थ 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्' के संग्रहालय में सुरक्षित है। गुरुप्रसादजी, एम्० ए०, सोहसराय, बिहार शरीफ (पटना) के सौजन्य से प्राप्त।

१६. **(क) रामजन्म**—ग्रन्थकार—श्रीसन्त सूरजदासजी। लिपिकार—श्रीजगेश्वर लाल। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना कागज। पृ० सं० ६०। प्र० पृ० पं० लगभग—२६। आकार-प्रकार—×। भाषा—हिन्दी। लिपि-नागरी रचनाकाल—×। लिपिकाल—वैशाख-शुक्ल १४, रविवार, सन् १२८७ साल, सं० १९३७ वि०, १८८० ई०।

प्रारम्भ—"श्री गनेसजीसहाऐ श्री गंगाजी सदा सहाऐ श्री कालीजी सदा सहाऐ श्री सरोसतीजी सदा सहाऐ श्री पोथी रामजन्म ॥

दोहा ॥ श्री श्री गुरुचरनसरोज रजनीजमनमुकुरसुधार
बरनोंरघुवरवीमलजस जोदाऐकफलचारी
ऐकभरोसाऐकवल ऐकआसबीसवास
एकभरोसारामपर जापहीतुलसीदास

सुमीरीनी—कीरीपाकरोसीवनंदन पगुवंदोकरजोरी गौरीसंकरकंठेबसौ सरोसतीहीरदेमहेस
तोहरेचरनमनोरथ सीधीकरोप्रभुमोर भुलाअछर परगासहु गौरीके पुत्र गनेस

चौपाई—बरनोगनपतीवीरवीनीवीनासा रामरूपतुमपुरवहुआसा
बरनोसरोसतीअम्रीतबानी रामरूपतुमभलीगतीजानी
बरनो बसुधा धरैजोभारा रामरूपभऐ जगत्रप्रतीपाला
बरनोचादसुजकीजोती रामरूपजसनीरमलीमोती"

अन्त— ॥ दोहा ॥

"सभ रानी असबोलही बेटा कहो तो पाप
सीता सभकी माता राम सभको बाप

चौपाई—रामजन्मकथाजोनरपढइवढै धरमपापछैजाइ
सुनीके ग्यानजोनरकरइ रामजन्मकथाअनुसरइ

दोहा—पाशरहावहुतदीननके मेटीसकतनाकोऐ,
लोखनीवालावावरादासगुरुकेहोऐ

दोहा—सात सरग अपव्रग सुख धरीअ तुलाऐकसंग
तुलैनाताहीसकलमीली जोसुखलहै सतसंग

दोहा—नामपहलु देवसनीसी ध्यानतुमहारकपाट
लोचनपदनीगत्रीका परानजाहीकेहीवाट
ऐतोश्रीपोथीरामजन्मसमपुरनस्मापतजोपत्रीमोदेखासोलीखाममदोषनादीअते
पंडीतजनसोमांनतीमोरीछुटलअछरलेवसजोरीदसखतजगेस्त्रलाल''

विषय - भगवान् श्रीरामचन्द्र के जीवन से सम्बद्ध काव्य ।

टि० (१) यह पोथी सन्त सूरजदास की लिखी है। भाषा कुछ अवधी, भोजपुरी और कुछ-कुछ मागधी से मिलती-जुलती है । इस सन्त के नाम और रचनाओं का उल्लेख अबतक के किसी भी 'हिन्दी-साहित्य के इतिहास' में नहीं हुआ है । ग्रन्थकार सन्त-श्रेणी के कवि प्रतीत होते हैं; क्योंकि स्थान-स्थान पर जीवन-चरित्र से हटकर इन्होंने दार्शनिक विवेचन भी किया है। कथा का आधार 'रामचरितमानस' है। कथा संक्षेप में कही गई है। केवल दोहों और चौपाइयों में रचना है। कुछ स्थानों पर अन्य रागों का भी मिश्रण है । इस रचना पर भक्तिकाल का प्रभाव प्रतीत होता है। ग्रन्थ सुपाठ्य और विवेच्य है ।

(२) लिपिकार ने पोथी के अन्त में अपना परिचय देते हुए लिखा है—"दसखतजगेस्त्रलाल जीलागोरखपुरहाल परस्हरकलकत्ता महलै टंडइल-वगान सनबाइसै ८७ सालमहीनावैसाखसुदी १४ दीन अतवार के तईआर हुआ।" इससे ज्ञात होता है कि यह पोथी कलकत्ता में लिखी गई है। लिपि पुरानी और स्पष्ट है ।

(३) यह पोथी शहीद-द्वारका-पुस्तकालय, खुशरूपुर (पटना) के पं० वासुदेवजी साहित्याचार्य के सौजन्य से, प्राप्त हुई है ।

१६. (ख) रामरतनगीता—ग्रन्थकार—श्रीनन्दलाल कवि । लिपिकार--श्री जुगेश्वरलाल । अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज । पृ० सं० ६४ । प्र० पृ० पं० लगभग—३२ । आकार-प्रकार—× । भाषा—हिन्दी । लिपि-नागरी । रचनाकाल --× । लिपिकाल—पौष कृष्ण ९, शनिवार सन् १२८७ साल, सं० १९३७ वि० १८८० ई० ।

प्रारम्भ—"श्री गनेसजी सहाऐ श्री महादेवजी सहाऐ श्री सरोसतीजी सहाः श्री गंगाजी सहाऐ श्री पोथीरामरतनगीता ।

दोहा—पहीलेगुरकेगाइऐजीन्हगुररचाजहान
पानीसोपीडज भयौ अलखपुरुखनीरवान
अलखपुरुखनीरवानहै उन्हकेलखेनाकोऐ
उन्हकोतोवाहीलखैजोवाहीघरकाहोऐ
चौपाई—सीरीगुरवीसनकेचरनमनावों जेहीपरसादगोवीदगुनगावों
सीरीकीरीसनरसअम्रीतबानी गुरपरसादकछुकहोवखानी
ऐकसमैसीरीजदुराई आरजुनसंग भऐ ऐक ठाइ
धूपदीपलेआरतीकीन्हा चरनोदक ले माथे दीन्हा
हाथजोरोअरजुनभौठाठे तुमकेमाआमोहकस बाढै
दोहा— तीनीलोककेठाकुरप्रभु भाखौ वचन.......।
बीनतीकरो अधीनहोऐ दीनबंधु नंदलाल
चौपाई—संसैऐकपरभुआहैचीतमोरेकहतहौनाथदुनोकरजोरै
स्रीकीरीसनबोलेवीहसाइ आरजुनकहैसुनोजदुराई
दोहा—रामरतनगीताकर अरजुनकीन्ह अनुसार
सकलसीरीस्टी सुनैचीतदेइ मुकतीहोऐसंसार"

अन्त— ॥ चौपाई ॥

"देवनकेपाठै एहेगीतामनुखपढै सोहाएनीरचीता
गीत पढै सुनैचीतलाइ दुखदारीद्रसभजाऐपराइ
आपुत्रोजोपरानीहोइगीत सुनैपुत्रफलहोइ
बरम्हग्यानमंत्रएहआही परमतंतुकरी आरजुनराखा
तीनोंलोकजोभरीपुरीराखा
सीरीमुखगीतास्मपुरनभेउआरजुनकैसंसैछुठीगऐउ
दोहा—सीरीकीरीसन आरजुनमीलै गुष्ठकीन्हऐकठाव
से भगवंतहीतभाखेउ कुसल सीघपएहान समारन"

विषय—'राम-नाम'-महिमा का दार्शनिक विवेचन।

टि०—(१) ग्रन्थकार का नाम ग्रन्थ के आदि या अन्त में नहीं है। प्रारम्भ के पद्यों में एक स्थान पर "वीनती करो अधीन होऐ दीनबन्धु नंदलाल" पद आया है। 'नंदलाल' भगवान् श्रीकृष्ण के लिए आया है; क्योंकि इस पद के पूर्व श्रीकृष्ण का प्रसंग है। यदि 'दीनबन्धु' से श्रीकृष्ण का बोध हो सकता है, तो यह ('नंदलाल') ग्रन्थकार के नाम की ओर संकेत कर रहा है।

(२) पोथी की भाषा अवधी और पच्छिमी भोजपुरी से मिलती-जुलती-सी है।

(३) इस पोथी में राम-नाम की महिमा के साथ-साथ दार्शनिक विचार भी हैं, जैसे—

"आरजुनसुनौक्रीसनकहही रामभजन ते सबसुखअहही
महीमामोरजोपावैकोईताकरदीस्टीसुरअैसनहोइ

महीमामोरोजोपावैंमोहीसमाहोएसोए
सभमीली......................।
बचनमोरसुनोजदुराइ नाम के महीमा कहतना आइ
एहेसामीकोईकहतना आवैं नामके महीमाकहतन आवै
आरजुनउठीकैंअस्तुतीलाइ जोगजीवनकहाबुझाइ
तेहोतेसकलपापवहीजाइ नेमधरममोहीचीतदेइ
जहीबीधीमोरहोएउधारा मोही सेभाखोनंदकुमारा"
६१ पृष्ठ के इन पदों में नाम, योग, धर्म आदि के सम्बन्ध में संकेत है। पूरे ग्रन्थ में इसी प्रकार कृष्ण अर्जुन के परस्पर संवाद के रूप में विषय का विवेचन किया गया है।

(४) ग्रन्थ में 'ए' के लिए 'ऐ' का और 'ऐ' के लिए 'एय' का प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार 'ष' के स्थान पर 'ख' और 'ख' के स्थान पर 'ख' के नीचे बिन्दु देकर प्रयोग हुआ है।

(५) ग्रन्थ विवेच्य और सुपाठ्य है।
(क) और (ख) दोनों पोथियाँ एक ही जिल्द में हैं तथा दोनों के लिपिकार भी एक ही हैं। ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और शैली भी पुरानी होने के कारण अस्पष्ट है।

(६) यह पोथी शहीद-द्वारका-पुस्तकालय से पं० वासुदेवजी साहित्याचार्य, प्रधानाध्यापक, डी० ए० वी० मिड्ल स्कूल, खुशरूपुर (पटना) के सौजन्य से प्राप्त हुई।

१७. ज्ञानदीपक—ग्रन्थकार—सन्त दरिया साहब। लिपिकार--बुधनदास फकीर। अवस्था--अच्छी, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ सं० १८७। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार—९"×१०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल---भाद्र, कृष्ण, १८९५, बुधवार।

प्रारम्भ—"वाहा साहब जींदा जाग्रीत हंस उवारन सुक्रीत दरीआ साहब सतगुरु ग्रंथ भाखल ग्यान दीपक साखी प्रेमजुक्ती नीजुमूल है गुरगंभीकरो सूयां दा आ दीपक जवही वरे दरसननामश्रया प्रथम ही सतगुरु सतकरमा उ दा आ से उकर दरसन पाउ नीसून घरी जवही गुरु मीले उ आनंद-मंगल ललीत लोभए उ भौतेरनी गुरग्यान अनूपा सो मम ही दैव से उ सरूपा प्रगटकरो फीरि राखु समोइ जेन फनी मनी नाही जात वीगोइ पत्र माव ऊंमी अंक नीखा पोवै प्रेम वीरला कोई संता ग्यान अंकुर रत राहा जो समिता चला प्रवाह प्रेम रश रमिता तामे सत सुंघट भव तरनी अति सुस्तृष साग्राजात नावरनी पठे संत सुष जानि पुनिता भव-शाग्र नाही होहिअनीता जठ जनता मे देषि भुलाना लहरी उतंग सम ग्यान छपाना लहरी फिरंग फिरता रहै मदमयिता के मूल परे भवन मे मरभि कैं भऐ वो कठीन तन सुल

सुधर शंत मनि मुक्ता जैशे शामा शोभित बूधि जनतैं श
निज-निज ऊरथ गथै गुण ग्याना ॥''

अन्त—''भए वो सपुरन ग्यान सतगुरु पद पावन करो उवरे वसंत सूजान जीन्हि गंयीकी वो वीवेक ऐह संमत अठारह सैं सैंतीस भादौ पौथी अभार सावा जां भजन वरइनी गौ द री आ गवन वो चार भादौ वदीवार सुक गवन कीवो छपलोक जो जन सब्द वीवेकी आ मेटे सकल सभ सोक ॥ संमत १८९५ ग्रन्थ ग्यान दीपक सपुरन भइल वार बुध के सरकार साहाबाद भोजपुर प्रगने दनवारी तपेवीसी मौक्षे धरकंधा तप्त पौराथैं प्रवाना समुद्दीलेना दरीआ साहव का अस्थान है ग्रंथ ग्यान दीपक मरमत कीआ बुधनगास फकीर दरीआ पंथी ।''

विषय—सन्त-परम्परा की निर्गुण-धारा का दार्शनिक विवेचन ।

टि०—(१) पोथी के पढ़ने से ज्ञात होता है कि दरिया साहब की यह अन्तिम कृति है । इस पोथी का अन्तिम पद ''संमत अठारह सैंतीस भादो पोथी अंभार....भादौ वदो वार सुक गवन कीवो छपलोक'' में स्पष्ट संकेत है कि उनके देहान्त के बाद उनके इन विचारों का संग्रह किया गया है ।

(२) दरिया साहब विहार-प्रान्त के आरा (शाहाबाद) जिले के 'धरकन्धा' ग्राम के निवासी थे । इनके विचार अधिकतर सन्त कबीर के विचारों से मिलते हैं । इन्होंने निर्गुण-विचारधारा को परिपुष्ट करते हुए दर्जनों ग्रन्थ लिखे हैं ।

(३) इस महान् सन्त-सम्बन्धी अन्वेषण और इनकी कृतियों के प्रकाशन से जहाँ हिन्दी-साहित्य की श्रीवृद्धि होगी, वहाँ बिहार-प्रदेश का भी गौरव बढ़ेगा । यह पोथी पटनासिटी के दीवान मुहल्ला-निवासी श्रीमोतीलाल 'आर्य' के सौजन्य से प्राप्त हुई ।

१८. रामचरितमानस—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास । लिपिकार—श्रीरामसहाय सिंह । अवस्था—अच्छी, कागज—हाथ का बना देशी । पृष्ठ सं० २९६ । प्र० पृ० लगभग—४२ । आकार— १०''×७½'' । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—पौष शुक्ल सप्तमी, मंगलवार, सं० १८६४ वि० ।

प्रारम्भ—''जेही शुमीरत शीधी होए गननाऐक करीवर वदन
करहु अनुग्रह शोए बुधी राशी शुभ गुन शदन :
मुक होऐ वाचाल पंगु चढे गीरीवर गहन :''

अन्त—''इति श्रीरामचरीत्र मानशे शकल कलीकलुक वीशंगनो नाम उत्रकांड रामाऐन क्रीततुलशीदाशशंपुन्य पथा दरश्ते तथा लीक्यते म्मदोष नदीअते पंडितजनश ोवीनती मोरी : टुटल अछरलेवशव जोरी श्री

शंवत १८६४ शाल पुश शुदी रोज संगल को पोथी तैरा भऐल नु तैयार हुआ................। स्त्री: रामशहाऐ शीघ काऐथ शा: मौ जरुहे प्रगने हाजीपुर............।"

विषय—राम-जीवन-सम्बन्धी काव्य ।

टि०—इस पोथी की लिपि प्रचलित, प्राचीन कैथी-लिपि से मिलती-जुलती है। पोथी में कई स्थानों पर प्रचलित प्रतियों से पाठभेद है। पोथी के लिपिकार ने, प्रतीत होता है, इसके अतिरिक्त अन्य पोथियों की भी प्रतिलिपियाँ की हैं । यह पोथी 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्' के दफ्तरी श्रीशत्रुघ्नप्रसाद सिंह से प्राप्त हुई ।

१६. वैद्यरत्नार्णव—ग्रन्थकार—रामाप्रसाद शुक्ल । लिपिकार—× । अवस्था—साधारण, हाथ का बना कागज । पृष्ठ-सं० ८७ । प्र० पृ० पं० लगभग—६६ । आकार—९"×८" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—चैत्र शुक्ल १३,१२७७ साल, बृहस्पतिवार । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"अथ अमलपित्त रोग प्रनारिकेल लवनलिषिहय ॥२६॥ नारिकेलजलतोला ४ सिघानोनतोला ४ षोरासानिवचतोला ४ तिनो दवा को नारिकेल जलमाहिषलरिनारिकेल के भित्र भरिक पति नोद्र को तिल पादकपठ मृतिकादेक गज पुठमांहि कुक देना सित सहोपत काठमासा ४ यस्य जललेषायतो दिन १४ माहि अम संचित जाय अगर भूसि के साथ षायतो भूष अधिक लावय ॥२॥४०॥३०॥ अथ दवावायु ४॥८४॥ खौरिस वायु का लिषिहय ॥३०॥ आठ किसिम के वायु कि गोलि ॥ ३० ॥ मूलक । जावत्रि लवंग ।"

अन्त—"मोदक शताघ्रका ववासिरदम्माषांसिरोग ॥ कुसंजम १ कयाय विजरदारचिनि ३ चौसाइ का बिज ४ गात्र बिज ५ जायफल ६ जावतृ ७ पिप्रसो ८ चतरा ९ केशर १० रुमिमस्तक ११ अंशगनागोरि १२ चिरिचिरि का बिज १३ पत्रज १४ अक्करा १५ चरकसि १६ धनिया १७ रेनका १८ काकोलि १६ तालमषासा २० पोस्ते का दाना २१ अंजवाइन २२ अकिम २३ कमलगठा २४ कुकाडिबिज १५ इन्द्रजव २६ भृग २७ सहिनाबिज २८ लौंग २६ सवद्र भस्मभारोचूर्न के श्मसहित मिलाय माशा ६ प्रमानमोदक बनाय शाथ षायतो दिन २१ माहि निश्चय रोग का नाश ॥ इति श्री रामप्रसादशुकुलपोशतक वैद्यरतनार्नवस्त्रीचिकित्सावासक रोगचिकित्सानानारोग चिकित्सा अस्टमोनाम अध्याए समाप्ततिथि १३ सूकलपछचैत्रमास वार वृहसपति सन् १२७७ साल ।"

विषय—आयुर्वेदीय चिकित्सा ।

विषय—यह पोथी प्राचीन है और आयुर्वेद की जिन औषधियों का वर्णन किया गया है, उस दृष्टि से महत्त्व की है। इसमें अनेक रोगों, उपरोगों तथा उनके निराकरण की आयुर्वेदीय दवाइयाँ तथा उनकी उपयोग-पद्धति आदि को विस्तार के साथ आठ अध्यायों में समझाया गया है। पोथी के साथ ही उर्दू-लिपि में छोटी पुस्तिका है, जिसमें यूनानी पद्धति के साथ सम्भवतः समन्वय किया गया है। ग्रन्थ में चिकित्सा-सम्बन्धी अनेक मन्तव्यों का संग्रह है। आयुर्वेद और यूनानी पद्धति का समन्वयात्मक विश्लेषण हिन्दी में किया गया है। ग्रन्थ ज्ञेय है। प्रारम्भ के २८ पृष्ठ नहीं हैं। प्रारम्भ में जो पृष्ठ हैं भी, वे बीच-बीच में फटे हैं। यह पोथी बिहार आयुर्वेद-भवन, जोगसर, भागलपुर के कविराज श्रीनरेन्द्रनाथजी के सौजन्य से प्राप्त हुई।

२०. **चित्तौरोद्धार**—ग्रन्थकार--अवधकिशोरसहाय वर्मा। लिपिकार--वंशीप्रसाद सुधाकर। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-संख्या—८८। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार—१०"×१६"। भाषा--हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—भाद्र कृष्ण १४, सं० १९६४ वि०।

प्रारम्भ—"बंदना (डमरु) सजल-जलद तन, अगम-निगम मन,
दुख सब बिदरत, भगत-सकल-कर।
ब्रज-रज भरमत जन-मन विचरत,
अति-सुख बरसत, कमल-नयन-वर॥
वन-वन विरमत, तन-मन विसरत,
लखत चरण-रत, बनत जगत नर।
कहत अधम नर, चरण-शरण-धर,
युगपति जगवर, विधिन अखिल हर॥१॥
प्रथम सर्ग (मन्दाक्रान्ता)
शोभावारी अमित रुचिरा काम की है कली-सी।
बिंदीभूता भरत-भुवि के भाल में है भली-सी॥
आशाबेली, नवल-लतिका लोल लावण्य-शीला।
नाना भावों सहित दिखती अप्सरा प्रेम-लीला॥२॥
जो है प्यारा भरत-सर तो, पद्मिनी-सी खिली है।
न्यारे प्यारे नभ-जगत में चाँदनी आ मिली है॥
भावों रम्या परम-सुखदा स्वर्ग की भूमि न्यारी।
देवों पूरी वसति अलका अप्सरा-भूमि प्यारी॥३॥"

अन्त—"भेदों त्यागे सकल मन से बैर सारे मिटा दें
राजें दोनों निज-निज धरा सौख्य लेके डरा दें

वार्ता ऐसी सुखद करते देश के प्रेम बोयें
प्यारी श्रद्धा मधुर-सरिता बीच में खायें गोते

(६१)

ऐ कान्हा जी भरत-भुवि में फेर हम्मीर होवें
ऊँचा हो जो रत-सकल हो लाड़ले देश जोवें
एका प्यारी यह विमल-सी युग्म के बीच होवें
दोनों हिन्दू यवन यक हों फूट की मीच होवें
इत्यलम् हरिः ऊँ तत्सत् ॥

विषय—चित्तौर की लड़ाई और राजपूती इतिहास से सम्बद्ध वीरकाव्य।

टि०—बिहार-प्रान्त के पलामू जिले के डालटेनगंज के आसपास कंचनपुर ग्राम-वासी प्रसिद्ध कवि और साहित्यवाचस्पति अवधकिशोर सहाय वर्मा की यह सत्रह सर्गों की रचना है। यह रचना हरिऔधजी की शैली तथा 'संस्कृतछन्द-चुनाव' से प्रभावित है। इसमें अनेक स्थलों पर साहित्य-सम्बन्धी तथा कविता, छन्द और अलंकार के नियमों की त्रुटि रह गई है, जिसे स्वयं कवि ने ग्रन्थ के प्रारम्भ की भूमिका में स्वीकार किया है। कई स्थानों पर शब्दों के चुनाव में भी अस्वाभाविकता है। वर्णन में कहीं-कहीं प्रसंग-दोष भी स्पष्ट है। ग्रन्थ की समाप्ति तथा मध्य में भी यत्र-तत्र हिन्दू-मुस्लिम एकता का नारा बुलन्द किया गया है। रचना में देशभक्ति कूट-कूटकर भरी है। इसका यह भी कारण हो सकता है कि इसकी रचना का समय भी वही था, जब देशभक्ति और असहयोग से भारत गुजर रहा था। ग्रन्थ का प्रकाशन होना चाहिए। इससे (हरिऔधजी की शैली के कारण) बिहार का गौरव बढ़ेगा।

२१. शिवपुराण-रत्न—ग्रन्थकार—कुंजनदास। लिपिकार—× । अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं० ६७२। प्र० पृ० पं० लगभग—३०। आकार—९"×११"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"दोहा। ब्रण शंकर उर दंभ अति, जाति ऊँच निज जान।
निज-पतिवंचक नारि जग, पर पति के मन-मान॥

चौपाई॥

बालक मातु पिता नहिं मानी। गुरु मत खंड बिबाद गुमानी॥८९॥
विद्या हीन लोग संसारी। अपर देश जा विरति बिचारी॥९०॥
जो कदापि कोउ मिलहि सहाई। मातु पिता कह निन्द सुनाई॥९१॥
अघकरनी ते दुख जग माही। जप पूजा माला तेहि नाही॥९२॥
इच्छा नारि प्रसंग सदाई। चिन्ह जनेऊ ते विप्र बड़ाई॥९३॥
छलि तपशी कलि करि अशनाना। पुत्र विचार करिहें धरि ध्याना॥९४॥

केस सवारन सुन्दरताई। दान सुकीरति नाम बड़ाई ॥६५॥
कारज उत्तम उद्र के भरना। ज्ञान सुभग कुल पालन करना ॥६६॥
दोहा—छली छुद्र के वारता, कहहीं सुचतुर सुजान।
तीरथ अटन कली मँह, सबते अधिक प्रमान ॥२४॥"

अन्त—"मणि भावे जिमि व्याल कह, मीन नीर रहे टेक।
तिमि कुंजन मन गौरि शिव, उपजे प्रेम विवेक ॥१६॥
कोटिन जन्म के चूक मेरो, रोम-रोम भरे पाप
अब कुंजन पर करहु कृपा, हरहु सकल भव ताप ॥१७॥
जत अशरण जग में रहे, दिये शरण तुम नाथ,
अब कुंजन एक तोहि तजी, काहि नबावें माथ ॥१८॥
तुम ठाकुर तिहुँ लोक के, हेरहु शिव निज ओर
कुंजन ही अपनावो प्रभु, समुझि बिरद वर जोर ॥१९॥
कहाँ लौ कहौं तेहि नाथजी, जानहु सब तुम आप,
कुंजन निज है करहु कृपा, छूट जाय संताप ॥२०॥"

विषय—शिव को आराध्य मानकर, शिवपुराण के आधार पर रचित सगुण-भक्ति का काव्य।

टि०—(१) ग्रन्थकार सन्त कुंजनदास आरा जिले के 'पँवार' नामक स्थान के निवासी थे। ऐसा निर्देश ग्रन्थकार ने ग्रन्थ में किया है। बिहार-प्रदेश के निवासी इस सन्त ने इस महाकाव्य की रचना करते हुए जीवन की कई उपयोगी समस्याओं का समाधान किया है। पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दो भागों में विभाजित तथा अनेक खण्डों में वर्णित यह पोथी पठनीय और विवेच्य है। प्रत्येक अध्याय के अन्त में कवि ने अपने नाम और शिव के प्रति आत्मार्पण का भाव प्रकट किया है।

(२) पोथी यत्र-तत्र फटी हुई है। प्रारम्भ में चार पृष्ठ नहीं हैं। ग्रन्थ के अन्त में भी पृ० सं० ६७२ के बाद के पृष्ठ नहीं है। ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार के नाम का निर्देश नहीं है।

(३) ऐसा प्रतीत होता है कि कवि किसी 'दीनबन्धु दयाल' नामक राजा के आश्रित थे और इनके एक 'कुंजबिहारी' नामक मित्र थे, जिनसे अधिकतर शिवभक्ति-सम्बन्धी विचारों का परस्पर आदान-प्रदान होता था। इनका मत या 'पन्थ' मुंगेर जिले तक प्रचलित था। यथा ग्रन्थान्त में—

"अति सुगम पंथ कलेश बिनु बर द्रुलभ फल कर पावहू ॥२॥
कर जोरि विनवों भवानि शंकर चरित रत मोहि दीजिये।
प्रभु दीनबंधु दयाल दानी दास आपन कीजिये ॥३॥
यह कहत सुनत कलेश छूटे भक्ति प्रेम दिढ़ावहीं।
बिश्वास कुंजनदास उर बसे...........................।

कथा समस्त श्रवण करि, पाई हृदय विश्राम ।
गावत शिव गुण हर्ष अति, गवन कीन्ह मुनिधाम ।।१०।।
जिले मुंगेर में मालदह, अहै रजौरा ग्राम ।
मोर नाम के मित्र एक, कुंज बिहारी नाम ।।११।।
लेखक कवित्त प्रबंध शिव, सेवक सुमति नवीन
गाइ लिखी शिव यश विमल, पायउ परम प्रवीन ।।१२।।"

ज्ञात होता है कि कविवर कुंजनदास गाते या रचना लिखाते थे और उनके मित्र कुंजविहारी उसे लिखते थे। राजा 'दीनबन्धुदयाल' का नाम भी पोथी के अनेक स्थलों में आया है। पोथी में शिवपुराण की कथा का आश्रय लिया गया है। प्रारम्भ के पृष्ठ फटे होने तथा पाँचवें पृष्ठ के बीच के अक्षरों के फट जाने के कारण इस विवरण में प्रारम्भ की पंक्तियाँ छठे पृष्ठ की हैं। यह पोथी मुद्रित है, किन्तु दुर्लभ है। इस पोथी के आधार पर यदि कुंजनदास की अन्य रचनाओं की खोज की जाय, तो हिन्दी-साहित्य के इतिहास के लिए बहुत बड़ी सामग्री मिल सकती है।

२२. **हितोपदेश**—ग्रन्थकार—पदुमनदास । लिपिकार—मिश्रीलाल । अवस्था – अच्छी । प्राचीन देशी कागज । पृष्ठ-सं० ८७ । प्र• पृ० पं० लगभग—४२ । आकार—८"×४$\frac{५}{८}$"। भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—फाल्गुन शुक्ल पंचमी, बुधवार, सं० १७२८ वि० । लिपिकाल—फाल्गुन शुक्ल एकादशी, सं० १६१६ वि० ।

सोरठा ।।

प्रारम्भ—"सिद्धि दे उसे देव ।। सदा साधु के काम में ।।
गंग फेनले—सेव ।। जासु सीस ससि के कला ।।१८।।

दोहा ।।

जे हित उपदेशहि सुनै, संसकार पटु होय ।।
जामे बचन विचित्र सभ, नीति सुप्रद हैं सोय ।।१६।।

सोरठा ।।

अमर जानि है काय, विद्या धन चिंतत चतुर ।।
केस गहे जमराय, धर्म करत अनुमानि है ।।२०।।

दोहा ।।

सर्व दर्वते दर्व अति, विद्या दर्व अनूप ।।
धन देती षरचत अछै ।। अरचत जाते भूप । २१ ।
विद्या मिलवै भूपतिहि ।। सलिता सिंधु समान ।।
तापर अपनी भागफल । भोग करै मतिमान ।।२२।।
विद्या विनय हि देति है ।। विनय ष्याति अनुकूल ।।
ष्याति भए धन धर्म सुष ।। ताते विद्या मूल ।।२३।।

शस्त्र शास्त्र विद्यानि के ।। इतना अन्तर ताहिं ।।
बाबा ले वूढे हँसै ।। लसै तीनि पन माहि ।।२४।।
जैसे काँचे कलश में ।। कुंभकार कृतरेष ।।
मिटै न त्यौं अभ्यास शिशु ।। नीति कथानि विशेष ।।२५।।
मित्र लाभ हित भेद पुनि ।। विग्रह संधि वषानि ।।
पंचतंत्र अनुग्रन्थ मत ।। लिख्यो कथा क्रम आनि ।।२६।।"

सोरठा ।।

अन्त—"चित्र वर्न नरनाह ।। सदल सचिबजुत मुदितचित ।।
गए विंध्य गठ माह ।। संधि कथा पूरन भई ।।२५५।।

दोहा ।।

विप्र विष्णु सर्मा दयो ।। आशिष राजकुमार ।।
चारि कथा पूरन भई ।। सुभद होउ सब बार ।२५६

वत्थुआछंद ।।

इत श्री पदुमनदास वरनिपरिपूरन कीन्हो ।।
रुद्र सिंह जुवराज जिऔ जिन्ह हित करि लीन्हों ।।
जदपि आपु गुन सिंधु थाह गुनिअन्हि नहिपावा ।।
तदपि दान सनुमान दास पदुमनहिं बढ़ावा ।।२५७।।"

विषय—नीतिकाव्य । प्रसिद्ध संस्कृत-हितोपदेश का हिन्दी-पद्यानुवाद ।

टि०—(१) ग्रन्थकार पदुमनदास बिहार-प्रान्त के कर्ण कायस्थ-परिवार के दामोदरलाल के सुपुत्र थे। ये रामगढ़-राज्य के आश्रित कवि थे। इन्होंने राजा दलेलसिंह की आज्ञा से हितोपदेश का हिन्दी-पद्यानुवाद किया। अपने और अपने राजा का परिचय देते हुए ग्रन्थ की प्रस्तावना में लिखते हैं—

"श्री गणेशायनमः ।। अथ हितोपदेश पदुमनदास कृत लिख्यते ।

।। अथ दोहा ।।

गुरुगिरीश गिरजा गिरा ।। ग्रह नायक गण ईश ।।
पदुमन विष्णु प्रणाम करि । जाचो ईहय असीश ।।१।।
होउ सुफल प्रारम्भ मम । कोउ करैं जनिहास ।।
स्रोता भनिता को सदा ।। मुदमंगल परगास ।।२।।
विप्र विष्णु सर्म्मा भनित ।। हित उपदेश विचित्र ।।
सुनत चाव प्रस्तावमय । भूपति नीति पवित्र ।।३।।
सुरभाषा पटुहीनते ।। कहैं चहैं प्रस्ताव ।।
सिंघदलेल मही पतिहिं ।। हेतु कियो चितचाव ।।४।।
कायथ पदुमनदास को प्रेम सहित सनुमानि ।।
रचन कह्यो सब दोहरा ।। बचन सुधामय जानि ।।५।।
तब गुरु द्विज पग बंदि तिन्ह ।। कवि जन को सिर नाई ।।
कविता पथ दुर्गमतदपि ।। नृप अज्ञा जनि जाइ ।।६।।

सेवक संकट हूँ चलैं ।। प्रधु अनुसासन पाय ।।
कवि जन सिष आशिष सुअन ।। इन्हहीं पाय सुहाय ।।७।।
प्रथम भूप कूल नाम कहि ।। कहौं कथा इतिहास ।।
सुवरन वलित सुहावनी ।। भाषत पदुमन दास ।।८।।
षैरा पूर्वं निवास ते षैरवार भई ख्याति ।।
वेनु वंश विष्यात जग ।। जानै छत्री जाति ।।९।।

छप्पय ।।

बाघदेव भूपाल भूमि भुजबल जिन्ह लीन्हे ।।
कीर्तिसिंहतसुतनय सिंह विक्रम जिन्ह कीन्हो ।।
रामसिंह तपनिष्ठ कुष्ठ उच्छीष्ठ गयो द्विज ।।
माधो सिंह महीप भयो तसुनंद महाभुज ।।
तसुनंदन जगत जहाज नृप हेमन्त सिंह तसुधर्मधुर ।।
स्री राम सिंह सुत तासु पुनि नीति निपुन जसु बचन फुर ।।१०।।

दोहा ।।

कुँअर करेरो बन्धु पितु ।। कृष्ण सिंह मति मान ।।
प्रेम सिंह दलेल को ।। जिन्ह के सरिस न आन ।।११।।
सरस पितामहुँ ते पिता ।। राम सिंह रणधीर ।
तिन्ह के पुत्र पवित्र भुवि ।। सिंह दलेल गम्भीर ।।१२।।
करनी सिंह दलेल के ।। वरनी जात न काहु ।।
धरनी तल में धन्य तम ।। गुन गन सिंधु अगाह ।।१३।।
तिन्ह श्री पदुमन दास को ।। दीन्हो वहु विधि दान ।।
साधनि अवर सिहात हैं । निरषि जासु सनुमान ।।१४।।"

(२) कवि ने ग्रन्थ के अन्त में महाराज दलेल सिंह के पुत्र, जिनके लिए राजा ने ग्रन्थ का अनुवाद कराया था, की ओर भी संकेत किया है—

"भूपति सिंह दवेल के ।। रुद्र सिंह जुवराज ।।
जिऔ जलगुजल गंग अरु ।। शंभु शीश शीश छाज ।।२५८।।"

(३) निम्नलिखित पदों से कवि और उसके वंश तथा रचनाकाल का पता चलता है—

"दामोदर कायथ करन ।। जिन्ह के धर्म प्रगास ।।
चारि पुत्र तिन्ह के भयो ।। जेठे संकर दास ।।१५।।
मध्यम पदुमन गुन गरुअ ।। तथा लाज मनि जान ।।
अनुज कृष्ण मनि गुन-निते ।। अग्रज इव अभिमान ।।१६।।
सत्रह सै अड़तीस जब संवत विक्रम राय ।।
सित पांचे मधु बुध दिवस ।। रच्यो गनेस मनाइ ।।१७।।
(ग्रन्थसमाप्ति-काल) सत्रह सै छयासठि कै ।।
पूष पंचमी सेत ।। पदुमन लिखि पूरन कियो रुद्र सिंह के हेत ।।२५९।।

(४) ग्रन्थ की समाप्ति पर लिपिकार ने अपना परिचय देते हुए लिखा है—

"अंक धरानिधि विधु सहित ।। संवत विक्रम भूप ।।

फाल्गुन सुक्ल यकादसी ॥ रविवासर सु अनूप ॥१॥
मिसरी लाल विचार करि ॥ हित उपदेश विचित्र ॥
लिख्यो चाव सो भाव करि ॥ है यह चरित पवित्र ॥२॥१९१९॥
श्री सीतारामाय नमः ॥"

(५) इसमें कोई सन्देह नहीं कि पदुमनदास एक महान् कवि थे। इतने बड़े पद्य-गद्य ग्रन्थ का हिन्दी-पद्यानुवाद करना साधारण बात नहीं है। इन्होंने पद्यानुवाद करते हुए पोथी की मौलिकता को समाप्त नहीं किया है, अपितु उसमें और भी प्राण डाल दिये हैं। रचना अच्छी और सुपाठ्य है। इसमें कई नवीन एवं अप्रचलित छन्दों का भी प्रयोग किया गया है। ग्रन्थ के प्रकाशन से बिहार का गौरव बढ़ेगा।

(६) ग्रन्थ की लिपि अच्छी और स्पष्ट है। यह पोथी मन्नूलाल पुस्तकालय में भी है। वहाँ की प्रति से यह मिलती-जुलती है। मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) के संस्थापक और संचालक श्रीसूरजप्रसाद महाजन की कृपा से प्राप्त।

२३. (क) **हनुमान बोध**—ग्रन्थकार—कबीरदास। लिपिकार—ग्यानदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० २२। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार—६"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—फाल्गुन कृष्ण पंचमी, रविवार, सन् १२७८ साल।

प्रारम्भ—"सतसुम्मीत आप अदली अजर अमीत पुरुषमुनिदर करुना मै कब र सुरत जोग संतारेन धनी प्रेमदास ॥
मुक्तामनी नाम चुरामनी नाम ॥ सुदरसन नाम कुल पत्तनाप्रबोध गुरवाला...पीरु (अस्पष्ट है; पृष्ठ के कुछ अंश फटे हैं)
(३ पृष्ठों के बाद) साषी। सुनोमुनीद्र मोर गति ॥ राम नाम है आही।
सो दसरथ घर अबतरे ॥ जीनकी मता अगाध
॥मुनींद्रवाच ॥
कहै मुनींद्र वचन हमारी ॥ साधु भाव तुम सुनही जामी ॥
राम राम सम जगत कहाई ॥ कहै साधु इन नाहीं भाई ॥
राम नाम हम नीक कै जाना ॥ तुम का हमसे करहु वषाना ॥
रमीता राम वसे सब माही ॥ ताही राम तुम जानत नाही ॥
ऐ तो राम है अवतारा ॥ जीन लंकापती रावन मारा ॥"

अन्त—"जोती सरूप वस्तु है भूपा ॥ नीरंजन है काआ माही ॥
माआ करी के है छाही ॥ रराकार गरजे ब्रहमंडा ॥ सपतदीप प्रगटे नवषंडा ॥ प्रथम........॥ असथीर वसत वसे घरवारा ॥ ताही को कोई चीन्हत नाहीं ॥ ताते सभ जग रहै भ्रमाई ॥.......।"

विषय—कबीर-साहित्य।

टि०—यह ग्रन्थ अपूर्ण है इसमें राम और हनुमान् के जीवन-चरित्र के आधार पर कबीर के दार्शनिक विचारों का प्रतिपादन किया गया है। यद्यपि ग्रन्थकार का नाम स्पष्ट नहीं है, तथापि कई स्थानों पर पदों में 'कबीर' का नाम आने से उनकी ही रचना प्रतीत होती है। कहीं-कहीं 'मुनींद्र' नाम भी आया है। हो सकता है, इसी नाम के कोई ग्रन्थकार या कबीरपन्थी हों, जिनके साथ कबीर ने वार्त्तालाप के द्वारा विचार व्यक्त किये हों। इस पोथी में 'काया' शरीर को 'माया' तथा शरीरस्थ आत्मा या परमात्मा को 'निरंजन' कहकर निर्गुन ब्रह्म की विवेचना स्थान-स्थान पर की गई है, जिससे कबीर के सिद्धान्तों की पुष्टि होती है। यह भी सम्भव है कि 'मुनींद्र' से सनकादि मुनियों की ओर संकेत हो; क्योंकि ग्रन्थ के प्रारम्भ में सनकादि मुनियों की अवतारणा की गई है। प्रारम्भ के तीन पृष्ठ फटे होने के कारण कुछ अंश ठीक से नहीं पढ़े जाते हैं। यह पोथी अखौरी गुरुदयाल प्रकाश तथा अखौरी गुरुशरण प्रकाश (स्व० अखौरी भानुप्रकाश द्वारा संगृहीत) अनीसाबाद, गर्दनीबाग (पटना) के पास सुरक्षित है परिषद मेंइस ग्रन्थ का यथादर्श चित्र (माइक्रोफिल्म) है।

२३. (ख) गोरखगोष्ठी—ग्रन्थकार—धर्मदास। लिपिकार—ज्ञानदास। अवस्था—अच्छी। हाथ का बना देशी कागज। प्र० पृ० पं० लगभग—४०। आकार—६"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—फाल्गुन कृष्ण पंचमी, रविवार, सन् १२७८ साल।

प्रारंभ—"सतनाम सत सुक्रीत आद अदली ॥ अजर अमीत पुरस मुनीदर करुनामय कबीर ॥ सुरत जोग संतारेन ॥ धनी ध्रमदास पारगुरु वंस आसीस की दया सो लीषते गरंथ गोरष गुस्टी ॥

कवीरोवाच। साषी ॥ सतसत सत सब कोई कहै ॥ सत ना चीन्हे कोए ॥
सत सरूप चीन्हे वीना ॥जीव सब जाही वीगारे ॥
चौपाई ॥ सत बचन सुष अम्रीत वानी ॥ सतही चीन्हावै सो गुरु ग्यानी ॥"

अन्त—"साषी ॥ सुवीगोरष सत मानी आ ॥ छूटीं गए भ्रमफंद ॥
गुरु कबीर समुझाई आ ॥ मेटेवो सकल दुष दंड ॥
नवो नाथ चौरासी सीध्या ॥ ईन्हको अनहद ज्ञान ॥
असथीर कर है कवीर को ॥ ऐह गती वीरले जान ॥
अछरमे नीह अछर ॥ नीट्ट अछर मे नीजनान ॥
तीनी अछर जो परषै ॥ पावै पद नीरवान ॥
संत कबीर की साषी ॥ आदी पुरुष को ध्यान ॥
नीसा भई गोरष की ॥ पा आपद नीरवान ॥

ऐती स्त्री गोरषनाथ की ।। गुस्टी संपुरन ।।
जो देखा सो लिखा मम वोष ना दते ।।
सकल संत महंत को वंदगी मोरी छुटल अक्षर पठव सब जोरी ।।
दसव ध्यान दास दासन के दास ।।
शामक सुदावामो तैयार हुआ ।। अषरहा को हरापुर मो ।।
सन् ।। १२।।७८।। साल ।। फागुन वदी ।। पंचमी ।। रोज ।। रवीवार ।।"

वि०— कबीर-सहित्य । धर्मदास और गोरखनाथ के बीच होनेवाले प्रश्नोत्तर के रूप में ।

टि०— यह पोथी धर्मदास के साथ गोरखनाथ या किसी अन्य गोरखपन्थी सन्त के साथ हुए वार्त्तालाप के रूप में लिखित हैं । ग्रन्थ के नाम से ही स्पष्ट हो जाता है कि इसमें कबीरपन्थ और गोरखपन्थ की तुलना की गई है। इसमें चौरासी सिद्धियों तथा अनहद नाद के ऊपर भी प्रकाश डाला गया है । ग्रन्थ विवेच्य एवं पठनीय है । ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है । पृष्ठ यत्र-तत्र फटे हैं । यह पोथी अखौरी गुरुशरण प्रकाश, अनीसाबाद, गर्दनीबाग, (पटना) के पास है । परिषद् में इस का यथादर्श चित्र सुरक्षित है ।

२३. (ग)—गरुड़बोध—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—वैरागीलाल दास । अवस्था—प्राचीन, देशी कागज । पृष्ठ-सं० २३ । प्र० पृ० पं० लगभग—४२ । आकार—६"×५" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल —× । लिपिकाल—माघ कृष्ण तृतीया, बुधवार, सं० १६३२ वि० ।।

प्रा०—"चौपाई ।। तवही गरुड़ जो वोलही वानी ।। कवन देश बसता हैं ज्ञाना ।।
हम वाहन है क्रीसन के भई । तीन की गति कीन उनही पाई ।।
तीन लोक के ठाकुर आही ।। ....।।"

अन्त—"साखी ।। कहही कबीर धरमदास सो ।। ऐही वीधी भव वीसतार ।।
गरुड़ ग्यान जब कीना ।। हरखे बहुत भुआल ।।
धजा फरके फरकै सुन भे ।। वाजै अनहद तुर ।।
....
अचल ध्यान कबीर का ।। गहो रेगरा नीसान ।।
हील।ऐ हीले नहीं ।। लागै सकल जहान ।।
ऐती स्त्री गरथ गरुरवोध ।। संपुरन ।। जो देखा सो लिखा मम दोष न दीअते ।। सकल साधु की वंदगी मोरी ।। टुटल बढ़ल अछरपठीहो सब जोरी ।। समत १६३२ के साल ।। महीना माघ ।। रोज बुध ।। तीथी तीज ।।"

वि०— कबीर-साहित्य ।

टि०—(१) ग्रन्थ प्राचीन है । इसकी लिपि अस्पष्ट है । पोथी में कबीर के सिद्धान्तों की विशद विवेचना हुई है, ऐसा प्रतीत होता है ।

(२) ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में ग्रन्थकार के नाम का उल्लेख नहीं है। प्रतीत होता है कि ग्रन्थ से सन्त घमंदास का सम्बन्ध है। ग्रन्थ में यत्र-तत्र इनका नाम आया है।

(३) ग्रन्थ के लिपिकार ने अपने विषय में और अपने निवास-स्थान के विषय में ये शब्द लिखे हैं—"जीला मसुदाबाद ॥ छावनी वरमपुर ॥ असथान चुटकी—डागा अखाड़ा ॥ महंत मंगलदास के वैरागी लालदास के दसखत गरंथ लीखा सो सेवक सुन्दरदास को दीआ सो सही ॥" लिपिकार मुर्शिदाबाद जिले के ब्रह्मपुर छावनी के किसी अखाड़े में (साधुओं के स्थान) रहते थे और ग्रन्थ लिखकर अपने शिष्य सुन्दरदासजी को दिया। यह ग्रन्थ अखोरी गुरुशरण प्रकाश, अनीसाबाद, गर्दनीबाग (पटना) के पास सुरक्षित है। परिषद् में इसका यथादर्श चित्र संगृहीत है।

२३ (घ)—सुमीरन-दानलीला—ग्रन्थकार-×। लिपिकार-वैरागी लालदास। अवस्था—प्राचोन, देशी कागज। पृष्ठ-सं० ४। प्र० पृ० पं० लगभग-४१। आकार—६"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकार—×।

प्रारम्भ— "क—लीखते सुमिरन ॥ दया सागर ग्यान आगर ॥ सवदवुधीसतगुरुं ॥ तासुवचनसरोजवंदो ॥ सुखदाऐक सुखसागरं ॥ जोगजीतअजीतऊभर ॥ भाखतेसतसुकरीतं ॥

ख—स्रीगनेसाऐनमह ॥ स्रीसरोसतीजी सहाऐनमह ॥ स्रीसुरुजदेवताजी सहाऐनमह ॥ स्रीजगधरतीजीसहाऐनमह ॥ स्रीकीशनाऐनमह ॥

चौपाई ॥—प्रभुपुरनब्रम्ह अखंडा ॥ जाकेरोमकोटीब्रह्मंडा ॥ जबसतगुरब्रह्मकहाऐ ॥ मथुराते बीरदावन आएँ ॥ तहादेवलोगसभजेते ॥"

अन्त—"क—धरमदास तत खोली देखो। वतु मैनीहततु है ॥ कहै कबीर नीहतत् दरसै ॥ आवागवन नेवारिऐ ॥

ख—कीस्न घंटा बजाऐ आरती ॥ जोती वंदन सेवककरै ॥ गीरजा प्रसाद पावै ॥ जनम जनम को दुख हरै ॥

जो नर गावही दानलीला ॥ सुनैमवचीतलाऐ कै ॥ कोटीजगफल तवही पावे ॥ वीस्नलोक सीधावही ॥ चौपाई ॥ ऐती स्रीपोथी दानलीला ॥ संपुरन ॥"

२३. (ङ)—ज्ञानप्रकाश—ग्रन्थकार—घमंदास। लिपिकार—वैरागी लालदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० ४८। प्र० पृ० पं० लगभग—४१। आकार—६"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—फाल्गुनकृष्ण चतुर्थी, रविवार, संवत् १६३२ वि०।

प्रारम्भ—"संतनामसतसुक्रीत ।। आद अदली । अजर अमीत । पुरुष मुनीदर ।। कउनमँकवीर सुरतजोगसंताएन ।।
धनोध्रमदास ।। चुरामनी नाम ।। सुदरसन नाम ।। कुलपति नाम ।। परमोधगुरुवालापीर ।। कवलनाम ।। अनीलना ।। सुरतसनेही नाम ।। इकनाम । पाकनाम । प्रगटनाम ।। साहेब चारोगुरुवंसखासीसकौदआसो-लिखते ।। श्रीगरंथ ग्यान प्रगास ।।

।। चौपाई ।।

सतगुरुसतपुरुषसंतानाम । सतपुरुषसंतनसुखधाम । सतसुक्रीत लोकनेवासी । दुखनासी.... ।"

अन्त—"साखी । साधु अैसा चाहीऐ । अंककाहु है । अँगुन पर जो गुन करै । तोकुल चाहु सुनै ।।
गुरतो अैसा चाहिऐ । जौसीकली गर होऐ ।। जन्म जन्म की मुरचा । गुरचरन भोडारँवोऐ ।।
चौपाई । ऐतौ स्री गरंथ ग्यान प्रगास ।। ध्रमदास संबोधकथा । संपुरम । समापत । जो देखा सो लेखा ।। ममदोस न दीअते । टुटलबढलअछर-पठीहौ सबजोरी । सकलसंतमहंत-सोवंदगी मोरी ।। संमत ।।१६३२।। के साल महीना फागुन । क्रीस्न पछ तीथी चौथी । रोज आइतवार ।।"

वि०— कबीर-साहित्य ।

टि०—(१) इस पोथी में सोरठा, चौपाई, दोहा और छन्दों में कबीरपन्थ के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। इसमें कबीर, सद्गुरु और धर्मदास के साथ कहीं 'उवाच' और कहीं वचनम्' कहकर लिखा गया है। प्रतीत होता है कि कबीर-परम्परा के सन्त साधु धर्मदास-कृत यह पोथी है।

(२) इसकी लिपि अस्पष्ट तथा प्राचीन है। लिपिकार ने अपना पूरा पता निम्नलिखित शब्दों में दिया है—

"जीला मसुदाबाद । असथान चुटकीडेगा महंत मंगलदास के अखाड़मो । वैरागी लालदास । गरंथलीखीतेआरकीया । सेवक सुन्दरदासकोदीआ-सोसही ।।" इससे स्पष्ट होता है कि लिपिकार जिला मुर्शिदाबाद (ढाका के निकट) किसी अखाड़े के साधु थे। लालदास लिपिकार ने इस पोथी को लिखकर सुन्दरदास को सौंपा। यह पोथी विवेच्य और अनुसन्धान के योग्य है। विस्तृत-विवेचना के पश्चात् सम्भव है कबीर-साहित्य की श्रीवृद्धि हो। यह पोथी अखोरी गुरुशरण प्रकाश, अनीसाबाद गर्दनीबाग, (पटना) के पास सुरक्षित है। परिषद् में इसका यथादर्श चित्र संगृहीत है।

२४. दुर्गाप्रेमतरंगिनी—ग्रन्थकार—नगनारायण सिंह। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृष्ठ-सं० १०८। प्र० पृ० पं० लगभग—३०। आकार—$10\frac{1}{4}'' \times 8\frac{1}{3}$। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी (कहीं-कहीं उर्दू)। रचनाकाल—संवत् १९४७ वि०। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"१—तरङ्ग। अथ श्री पोथी "दुर्गा प्रेमतरंगिनी लिख्यते १। श्री गणेशायनमः॥ आरती। श्री दुर्गा जी की।

करत आरती दुर्गा जी की॥ संकट तिमिर हरत सबहीं की॥
प्रथम आरती कृष्णमुरारी॥ रासमंडल गोलोक सवारी॥
सब सखियन मिलि आरति कीन्हा। जग प्रतिपाल करन वर लीन्हा॥१॥
द्वितीय आरति ब्रह्म संवारे। मधुकैटभ से जब लड़न प्रचारे।
तजि निद्रा श्रीपति तेहि मारेव। मधुकैटभ से प्रान उबारेव॥२॥
त्रितीय आरति शंकर साजेव। त्रिपुरासुर जवरन ये गाजेव।
चौथी आरति सुरपति कीन्हा। वृत्रासुर बध को वर लीन्हा॥३॥"

अन्त—"गीत-देवी पद।

देषु सखि हिमवन दिशनदिशनधन राजे गिरिनन्दिनी सखीन संग वन में॥
चन्दसी वदन सारो रवि दुति छवि वारी भूषन वसन सब सखनिके संगमें॥१॥
वनमांह डोलति सो बोलति मधुर वानी गावती बजावती मृदंगचंग छन मे।
चुनतीकुसुमवेली चंपाचीन वो चमेली। गुथी हारडारे गिरिनन्दिनीके तनमें॥२॥
ल्याइके वैठाई रचि सुमन हिंड़ोले सुचि सोहेवर वसन तडित जिमि घनमें।
हृदोका हूलावती सुगावती मधुर राग लषि अनुराग ते मगन नग मनमें॥३॥
इति ३ तरङ्ग॥

वि०—दुर्गा-सम्बन्धी भक्तिकाव्य।

टि०—(१) सम्पूर्ण पोथी १६६ पृष्ठों में है। किन्तु, 'दुर्गाप्रेमतरंगिनि' की पृ० सं० १०८ है। इस ग्रन्थ के अतिरिक्त नगनारायण सिंह एवं अन्य कवियों की रचित रचनाएँ भी हैं।

(२) नगनारायण सिंह की निम्नलिखित अन्य कृतियाँ भी इसमें हैं—

क. दुर्गाष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र पृ० १ से ७ तक।
ख. शतनाम स्तोत्र - पृ० ७ से १२ तक।
ग. दुर्गा नाम माहात्म्य—पृ० १३ से १६ तक।
घ. दुर्गा गकारादिस्तोत्र—पृ० १६ से २० तक।
ङ. दुर्गा निवार स्तोत्र—पृ० २० से २२ तक।
च दुर्गास्तोत्र—पृ० २२ से २४ तक।
छ दुर्गानाम मालाष्टक—पृ० २४ से २६ तक।
ज. दुर्गास्तव—पृ० २७ से २८ तक। इसमें 'कमल-बन्ध' है।
झ. शिवपंचाक्षर स्तोत्र—पृ० २८ से २९ तक।

ञ. रामषडक्षर स्तोत्र—पृ० २९वाँ मात्र।

ट. द्वादशाक्षर स्तोत्र—पृ० ३० से ३१ तक।

ठ. दुर्गा स्तोत्र (कष्टहरणं नाम)—पृ० ३१ से ३३ तक।

(उपर्युक्त सभी रचनाएँ संस्कृत मे हैं।)

ड. दुर्गानामार्थं दोहावली --पृ० ३४ से ३५ तक—इसके अन्त में लिखा है "दुर्गा को नामार्थं नग किंचित कियो प्रकाश। भैरव वेदहि ग्रह सभी सम्वत माघहि मास ॥२८॥" अर्थात् सभी रचनाएँ (पोथियाँ) सं० १९४८ वि० में या इसके पूर्व लिखी गई हैं। इसके अतिरिक्त इनकी निम्नलिखित अन्य रचनाएँ भी इस जिल्द में हैं—

ढ. छप्पै (मध्याक्षरी) यह रचना अच्छी है। उदाहरण—"तजन मनुष केहि कहत रंग कैसो पन्ना को। वैदेही पितु कवन भूमि-सूत कहिअत काको॥ दाडिम को का कहत कवन वाहन विधि मोहै॥ को गिरजा को मातु-धातु पति कहिअत को है॥ आदि अन्त दुई परिहरो मध्यवरन मैं नाम है। कायस्थ वंश में है निपुन वसत पटेही गाम है --॥१॥' उपर्युक्त पदों में रेखांकित शब्दों का क्रमश; अर्थ या भाव है—'जवान', 'सब्रुज', 'जनक', 'मंगल', 'अनार', 'मराल', 'मयना' और 'कनक'॥ इन शब्दों के मध्य वर्ण को मिलाने से बाबू नगनारायण होता है, जो ग्रन्थकार का नाम है। यह अंश पोथी के पृष्ठ-सं० ४४ में है।

ण. दोहावली—(१) इसमें दोहा, कवित्त, चित्र-काव्य के उदाहरण हैं। बीच में एक अध्याय ऐसी रचनाओं का है, जिसका शीर्षक है—(व्यवस्था-पत्र) लेक्चर। उसमें कायस्थ-वंश का इतिहास भी है। इस ग्रन्थ के प्रसंग में ही 'पत्रिका-दोहावली नाम की भी एक रचना है। उसमें लिखते हैं—

"स्वस्ति श्रीसवगुननिपुनसिन्धुशीलमजाद।
सकल काव्य कोविद चतुर बाबू महेन्द्रप्रसाद॥१॥
नारायण युतसिहजूगजनरिपुगजनूप।
रंजन सवशोभा जगतसजनशुभगस्वरूप॥२॥
यशतवचन्दमरीचिवत् गुनतव उदधिसमान।
अरिकुल दाहक अनल समतेज दिनेश प्रभाव॥३॥
नगनारायण इतलिषत अब रघुवीरप्रसाद।
करि प्रणाम बहुविनययुतकरिदुर्गा गुनवाद॥४॥
इहां कुशलवर्तंतसदा सवप्रकार सुख अैन।
चाहव तब मंगल कुशलपलपलक्षनदिनरैन॥५॥

आयो तब शुभपत्रिका फागुनयुत शनिवार।
पढ़त सुखद तन को भयो आनन्द वढ़ेव अपार ॥६॥
सरजु पावन ते विमल आयो मीन 'मशाह'।
किंचित वरनन किन्ह कवी याश्लोक मल्हार ॥७॥
'मीन कटि जल धोइऐ घाते अधिक पिआस।
तुलसी प्रीति सराहिए मुए मीत को आस ॥८॥
तेहि राषेव अति प्रेमतेसादर हर्षवढ़ाए।
लषि मूरत तव प्रीत को प्रेम हिये न समाए ॥६॥
जन्मपत्रिका तव सुभग निरषि परषिसबरीत।
लै सम्मत सम गणकसों लिषिभेजिहों तुमप्रीत ॥१०॥
मोपैं निसदिन राषिये कृपादृष्टि अनुकूल।
भेजत रहिये पत्रिका कुशल सुमंगल मूल ॥११॥"

इस 'पत्रिका' से जहाँ कवि की रचना-शैली का पता चलता है, वहाँ इनकी प्रतिभा तो परिलक्षित होती ही हैं, साथ ही यह भी प्रकट होता है कि इन्होंने जीवन के सभी क्षेत्र और व्यवहार में कविता को अधिक स्थान दिया था।

(३) यह पोथी तीस पृष्ठों में समाप्त है। दोहावली आरम्भ होने के पूर्व विषय-सूची और कविताओं की सूची भी दे दी गई है। प्रारम्भ में लिखा है—

"सारन में छपरा जिला वरइ परगन जान।
ग्राम पटे ही वसतु हौं गंगसमीप प्रधान ॥४॥
चित्रगुप्त के वंश में श्रीवास्तव्य सुकाम।
है कायस्थ सुवंश में 'नग नारायण' नाम ॥५॥
छन्द भंग अनमिल वरन व्यर्थ उपमा होय।
कवि-कोविद तेहि क्रिपा करि शुद्ध बनावहु सोय ॥६॥
सम्वत् सखि ग्रह ग्रह वेद दिन दिनकर मिथुना जान।
कृपा देवगण से भयो…………………………।"

(४) कवि की यह कृति सं० १६४७ वि० की है। इस ग्रन्थ में मुख केश, भृकुटी, नयन, नासाबुलाक, अधर, दशन हास्य, वाणी, भुजा, कटि, जंघ, चरन, पद-नख-शोभा, गति, तन, तन-सुगन्ध, भूषण, षोडश श्रृंगार, नख-सिख आदि के आधार पर भिन्न-भिन्न छन्दों में वर्णनात्मक रचना की गई है।

(५) पुस्तिका की पृष्ठ-सं० २३, २४ और २५ में चोपड़बन्ध, डमरूबन्ध, और वृक्षबन्ध की कविताएँ हैं। ग्रन्थ में दिये गये निर्देश से प्रतीत होता है कि इस प्रकार के चित्रात्मक बन्धपरक रचनाओं की कुल संख्या ५८ है।

(६) पृ०-सं० २६ से व्यवस्था-पत्र (लेक्चर) प्रारम्भ होता है। इसमें कायस्थ जाति और उसके विवाह, तिलक तथा अन्य सामाजिक कृत्यों के सम्बन्ध में व्यवस्था दी गई है। जैसे—

"श्लोक —अशुद्धः शुद्धतां याति शुद्धो भवति किल्विषी।
न च गंगा गया काशी जातिगंगा गरीयसी॥"

उल्था दोहा (उपर्युक्त श्लोक का अनुवाद)—
"होत अपावन पावनो पावन पापी जान।
नहि गंगा काशी गया गंगा-जाति प्रधान॥"

"दोहावली—यथा व्यवस्था—

प्रथम सुमिरि गणपति चरन गिरिजा पद धरि ध्यान।
समाचार मंगल कहों कायथ जाति प्रमान॥
भये पितामह काय ते चित्रगुप्त गुणषान।
द्वादश सुत तिन्हके भये जग मंह विदित प्रधान॥
श्रीवास्तव्य बसिष्ट पुनि माथुर अरु सकसेन।
कर्ण सूर्यध्वज गौड़ कहि अवर निगम सुख देन॥
अरिष्ठन अम्बष्ठ अरु भटनागर कुलश्रेष्ठ।
ऐ द्वादस कायस्थ हैं दुर्गापद तेति इष्ट॥
चतुर विचक्षण शास्त्रविद धर्मशील जयशील।
प्रगटे ब श्रीवास्तव्यकुल 'मुंशी प्यारेलाल।'
देषि दशा स्थान की मन में कियो विचार।
ब्याह हौसिला के जलधि बुड़े सब संसार॥
खान्दान स्थान के कैते वहुत कुलीन।
ब्याह समय अति खुर्च ते भये सकल धनहीन॥"

इसी प्रकार, इस व्यवस्था-पत्र में विवाह-समस्या-सम्बन्धी उपयोगी व्यवस्था दी गई है, जो पठनीय है। इसके अन्त में 'संवत् कार्त्तिक कृष्ण एकादशी, गुरुवार १९३०' लिखा है।

(१) 'दुर्गा प्रेम तरंगिनी' के प्रारम्भ होने के पूर्व 'प्रेम तरंगिनी' की व्याख्या के रूप में कुछ दोहे लिखे गये हैं, जो पृष्ठ-सं० १०१ में हैं। उक्त व्याख्या-भाग के अन्त में निम्नलिखित दोहा है, जिसके विषय में कहा जाता है कि इसे बाबू साहब ने मृत्यु के दो दिन पूर्व बनाया था—

"सम्बत् शशी ग्रह वेद निधि दिन कर मिथुना जान॥
कृपा देव गुरुते भयो शुभ समाप्त अनुमान॥२५॥"

इससे सिद्ध होता है कि इनका देहान्त १९४७ में मिथुन राशि के उपस्थित होने पर हुआ था। यह इनकी सबसे अन्तिम कृति प्रतीत होती है।

(२) इसमें कोई सन्देह नहीं कि बिहार के इस गौरवशाली कवि की प्रतिभा विचित्र थी। इन्होंने न केवल संस्कृत और हिन्दी में ही पद्य-रचना की है, अपितु इनकी फारसी की भी रचनाएँ इस पोथी में हैं। कई स्थानों पर तो विषय को ही तीनों भाषाओं में, बड़े सुन्दर शब्दों में व्यक्त किया गया है। यह ग्रन्थ पठनीय और प्रकाशनीय है। ग्रन्थकार के 'बन्धों' के आधार पर की गई रचनाएँ अधिक द्रष्टव्य हैं।

(३) पृष्ठ सं० ३२ में, इनके मथुरा जाने पर पण्डा की बही में लिखी गई रचना है। पृ० ३६ में तम्बाकू के ऊपर लिखी गई एक कविता है। मथुरा के पण्डे की बहीवाली कविता सं० १९२८ में लिखी गई थी, जिसमें कवि के साथ ही परिवार के अन्य व्यक्तियों की भी चर्चा की गई है।

(४) ग्रन्थ में कविवर नगनारायण सिंह के अतिरिक्त प्रान्त तथा विशेषत: छपरा जिले के कई अन्य कवियों की भी कविताएँ हैं, जिनमें ग्रन्थकर्त्ता की ही प्रशंसा की गई है। इससे प्रान्त के कतिपय कवियों, साहित्यसेवियों के नाम, स्थान आदि का पता मालूम हो जाता है—(१) वंशावली तथा प्रशस्ति में, पृष्ठ-सं० ३६—पं० प्रयागदत्त, (२) पृ० सं०–३७ नावापार घमवली के पण्डित के आशीर्वाद, (३) रीठ ग्राम के छठु पण्डित की रचना। पृ० सं० ३८, (४) पं० हृदयगुरु। इनकी रचना पृ० ३८ में है—

"सद्देशे सरकार सारणवरे जिल्लासुछपराह्वये।
परगन्ना वरई शुभा सुरसरित्सौम्ये हरित्कोशके।
तत्रास्ते नगरी वरा शिवकरी विद्वद्भिराकर्णिता।
कूजत्कोकिलकीरसारमधुपव्यूहै पटेही वृता ॥१॥
आस्ते तत्र सुधामयूषविलसत्कीर्तिश्रिया मण्डितो।
विद्यायां कुशलो विवेकदिनकृत्सौजन्यरत्नाकर ॥
कायस्थानन्वपुं जगुं जितमधु भ्रातैरलंवाग्रसो।
नीहाराद्रिसुतासरोजपदसंध्याता नगादिनृंप ॥२॥

(५) मझौल के पं० राजमणि–पृ० ४० में। (६) पं० तिलक त्रिपाठी—ग्राम नरौली, थाना दरौली। (७) पं० यशोदानन्दजी, ग्राम-शीतलपुर (सारन)। (८) पं० जनारदन जी, पटेहीपुरवासी। (९) पं० गणेशदत्त पाण्डेय, पण्डितपुरवासी। (१०) पं० रामचरित्र त्रिपाठी, तकीपुर। (११) श्रीबाबू अद्याशरणजी। (१२) श्रीबाबू अम्बिकाशरणजी। (इन दोनों ने बाबू साहब के देहान्त के बाद उनकी प्रशस्ति में रचना की है—पं० सं० ४३। (१३) बाबू रघुवीर दत्तजी। (१४) बाबू धनुषधारीप्रसाद सिंह। (१५) श्रीफुल्लेश्वर बाबू मोतीहारी (इन्होंने २१–७–१९२० को एक कुण्डलिया लिखी थी, जो पृ० सं० ५४ पर है।। (१६) श्रीसुरेश्वरीशरण सिंह, गोपालपुर, भागलपुर (इन्होंने अधिक ज्येष्ठशुक्ल पंचमी, रविवार सं० १९८० वि० को बाबू साहब की प्रशंसा में लिखा)। (१७) बाबू राजेन्द्रप्रसाद सिंह (ये सम्भवत: कविवर नगनारायण सिंहजी के पुत्र थे। इनकी रचना 'चित्रकाव्य' और 'दोहावली' के रूप में पृ० ५५ से ६० तक में है; जो ११-.१-१९१९ वि० की है। इन्होंने एक स्थान पर वर्णन करते हुए लिखा है—' गोरी नाइन पातरी लचकि

लंक गति मीन । नैनन चितको चोरती उरज उचकि भजि भौन ।।३।। अघर लाल कुंचित अलक दीरघ चख वरवाम । दसन दावि हँसि सैन कर चली जात निजधाम ।।४।।" इन्होंने 'परिसंख्या' अलंकार में छन्दों की रचना की है। जो पृ० सं० ५७ पर है। (१८) बाबू जानकी दास। (१९) बाबू वृन्दावनबिहारी। (२०) बाबू मुनेश्वर दत्त, (२१) बाबू रघुवीर नारायणसिंह। (२२) बाबू मंगलप्रसादसिंह। इस प्रकार, स्पष्ट ज्ञात होता है कि बाबू नगनारायणसिंह के साथ कवियों का एक विशाल परिवार रहता था, जो सदैव साहित्यिक चर्चा किया करता था।

श्रीबाबूराजेन्द्रप्रसाद सिंह भी हिन्दी, संस्कृत और उर्दू-फारसी में रचना करते थे—

(क) वनिता के ठुढी ल से छोटी तिल अभिराम।
मानो भँवरा कञ्ज भ्रम खटपट कियो विश्राम ।।१।। (हिन्दी में)

(ख) अन्दर जे नखंदाँ खाल दिलवर बा स्याही ज़ेबदार।
हम चो अन्दर नीलोफ़र ज़म्बूर ज़ेबद आबदार ।।२।। फारसी में)

(ग) सनम के ठुढि के भीतर सियाही तिल के यों झलके।।
कमल के वर्ग भीतर में भँवर रस लेन को ललके ।।३।।

पृ०-सं० ७२। (उर्दू में)।

(६) पृ० सं० ४७ से ४९ तक कवि की 'विरहिनी प्रश्नोत्तरी' नामक रचना दी हुई है, जिसमें बुलबुल, कबूतर आदि के माध्यम से कवि ने विरह-वर्णन किया है जो मनोरम, हृद्य तथा प्रभावशाली है।

(७) इस ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट है, किन्तु प्रतीत होता है कि लिपिकार ने भिन्न-भिन्न समय पर लिखा है, अत: लिपि तथा स्याही में भिन्नता है। ग्रन्थ में कवि की रचनाएँ—जीवनी, प्रशस्ति-काव्य तथा विभिन्न बन्ध-क्रमहीन और अस्त-व्यस्त रूप में हैं, अत: पुस्तकाकार मुद्रण के पूर्व क्रम आदि ठीक करना उपयुक्त होगा।

यदि इस पोथी के आधार पर (ग्रन्थ में आये विभिन्न व्यक्तियों तथा कवियों की रचनाओं की) खोज की जाय, तो साहित्य की तो बहुत बड़ी सामग्री मिलेगी ही, 'बिहार के साहित्यक इतिहास' के निर्माण में भी बहुत बड़ा सहयोग प्राप्त होगा और बिहार के छपरा जिले से सम्बद्ध इन कवियों की एक विशाल परम्परा का पता लग सकेगा।

यह पोथी 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्' के तत्कालीन मन्त्री आचार्य शिवपूजन सहायके द्वारा प्राप्त हुई है।

२५. शिवसागर—ग्रन्थकार—शिवनाथदास। लिपिकार—×। अवस्था- अच्छी। प्राचीन हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० २३०। प्र० पृ० पं० लगभग ४०। आकार—१०"×६"। भाषा-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—पौष शुक्ल पंचमी, सं० १८५०।

प्रारम्भ—"शतनाम ।। ग्रन्थ शीवसागर । भाखल....शीवनाथ दाश फकीरह ।
प्रथमं ही वंदो शत पुरुख पुराना । जाकर जाप करहो भगवाना ।'
तब पगु बंदो अलख जगदीशा । बीमल नाम मंनी पावो पदमूला ।।
ब्रमा विश्नु बंदा गौरी महेशा बंदो गनपति अवही गनेशा ।
वंदो राम क्रीशुन जगनाथा । भग्तवछल भग्ते ही शंनाथा ।।
ब्रनो श्रीशती जमुन सेंधु गंगा । ब्रनो अहीपती अंक पतगा ।।
बंदो माता आदि जोती कै प्रना । जाकें शुरनर मुनी ध्यान धरेशा ।"

अन्त—"पुत्र पुत्रो रहे मांतु पीतु भरोशे ।। गाफील रहे शदैव नैते हो पोशे ।।
दोशे हंमरन्ही रहीले आपुक आशे रही दुरंतरमू भ्रान्ति कट रहो पाशे ।
रहीहो चेत नीशती जुग्ती जो गहो दुमंती कुमंती रही जीभ्द्रो छेमंशना ।
तेलपा शेवका ऐक शनेही ताके नाउँ, राखे वो प्रेम वोर छोर प्रशेवो पाउ ।
ग्रन्थ शपुरनं प्रेमगतो भाखल जन शीवनाथ गहंता शुनंत कहंता पठे प्रेमशों
करीहे शाहव तेहो शतगुरु के हाथा.... ।
छं०.... ४५ भाखा पान ब्रंभ प्रमेंशर शें रीखि कुंभजे पूछा
कुंभ जोरिके शुजशंजनके भग्तौ महोमा ग्यान वीराग वीवेक षी
गुंन शदैव देत त्रिप नंरके ....जोग जुग्ती शंमांवो जगमें वीद्वा
वेदकितेव शास्त्र मंत्र तांहा शहारे ...। में जाके जांहा शीवत्रीथ व्रत मख
दान क्रीतो शेवाशंत.... जोगी मुंनी तांहा देंही ····।

सोरठा ।

फलचारी देंही क्रतार अरयधरमकांममोक्षशो
हंश उतरी भवपार कर गही हंश के लोक ले आवही'

विषय— दर्शन, निर्गुणधारा ।

टिप्पणी—(१) इस ग्रन्थ के निर्माता शिवनाथदास एक दरियापन्थी सन्त प्रतीत होते हैं । इन्होंने स्थान-स्थान पर सन्त दरियादास के नाम का स्मरण किया है तथा उनके प्रति श्रद्धापूर्ण विचार व्यक्त किये हैं—

'दरीया शाहबकर दाश मै दरीआ मोर शतगुरु'

यह पद प्रारम्भ की पहली साखी का है। पोथी के अन्त में भी कवि ने गुरु के सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार प्रकट किये हैं—

गरंथ शपुरंन पत्रचारीशै भाखा
ताहीके छोट छोट हुरुफ····।।
जो देखा लीखा शो भाखा कही दीन्हा ।।
गुनगंभी नाम दीपक हीरें कीन्हा ।।
अभीलाख शास्त्र के शो शाहवे पुरावा ।।

(२) ग्रन्थकार ने अपनी रचना में सन्त दरियासाहब के समान ही सतपुरुष, निरंजन आदि के द्वारा निर्गुण-साधना की स्थान-स्थान पर विवेचना की है । प्राय: इस

प्रकार का विवेचन कुम्भज और साहब के आपसी वार्त्तालाप के से दिया गया है। अतः, कई स्थानों पर जब किसी सैद्धान्तिक पक्ष की पुष्टि की गई है, तब वहाँ 'कुम्भजो वचनं' पश्चात् 'साहब वचनं' ऐसा लिखा है—
' शाहन के पारै का जोग कमावै: ।।
जोग जुगुतीनीजु शार है जोगवीनानाहींशीख
जोग वीनु कीमो मुकुतो है जोग वीनु रंकभौनीच
अश्टांगमंत जुगुती जोगशाधे . वोलाब्रह्मनिरंजनं
वीरंचोवीश्नुशीवनांरद शारदशेशगंनेशदवमुंनी जंनं
वंकालोमश गोरखनांथ नव शीखचोराशीशुरनरंन:
जोगशेंरीवंशघलोकमुंकुंशोशुक्षशंप्रदाजनघनं
सोरठा—
ममनाम गहेतेहीशाथ अमरलोक शो जनगए
शुनो कुंभज शीश दैं: भाव भग्तीजोगें: जगत रे''

इस प्रकार योग के साथ नाम-स्मरण की ओर संकेत करते हुए कवि ने लगभग बीस पंक्तियों में योग की महिमा गाई है। यह उद्धरण पृ० २३, २४ और २५ का है।

ग्रन्थ में साधु-सेवा, भिक्षाटन, प्रेम, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का विवेचन किया गया है। एक स्थान पर—
''शंतशुकीत बीनुमुंकुंतीनाहोई जम हाथें मुंनीपंडीतजगगहई
नीगुननीरंजन शगुनजोभग्ती : त्रीगुनध्यानों तीन देव
देवादेई व्रत त्रीथ दानं....।''

(३) ग्रन्थ की लिपि पुरानी और अस्पष्ट है। प्रतीत होता है, लिपिकार और ग्रन्थकार दोनों एक ही हैं। लिपिकार ने अन्त में लिखा है ''शंमत १८५० में ग्रन्थ शीवनाथ शागर भाखल लीखल भइल तेलपा के मठ में मांश पुश पंचमो।''

(४ ग्रन्थ में, भोजपुरी और सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग किया गया है। ग्रन्थकार का सम्बन्ध तेलपा मठ से था, जो सम्भवत सारन जिले में है। पोथी अनुसन्धेय है। विचार स्पष्ट है और सन्त श्रेणी की महत्त्वपूर्ण रचना प्रतीत होती है।

यह पोथी डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, उपनिर्देशक, शिक्षा-विभाग (बिहार) के सौजन्य से प्राप्त हुई।

२६. हंसमुक्तावली—ग्रन्थकार—सन्त धर्मदास। लिपिकार— खरगेदास। अवस्था—अच्छी। हाथ का बना, मोटा देशी कागज। पृ०सं० ५२। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—५½'' × ६''। भाषा – हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—प्रसिद्ध। लिपिकाल आश्विन कृष्ण द्वादशी, शनिवार। सं०१८५४ वि०।

प्रारम्भ—"साहव की दयां सो लिषते श्री ग्रन्थ हंसमुक्तावली ।। गीतका छंद ।।
धर्मदासो वचनं धर्मदास विनय कर ।। विहसि गुरुपंकज गहे ।
हो प्रभु होहु दयालं । दासचि अति देहु ।।
आदनाम सरूप सोभा । प्रगट भाष सुनाईए ।
कालदारुन अति भयंकर । क्रीट भ्रंग बताई ऐ ।।
शतगुरोवचनं ।। आदनाम निह अछर अषिलपतिकारनू ।।
सो प्रगटे गुरुरूप तो हंस उबारनू ।।
सतगुरुचरनसरोज जेजनमन ध्यावहीं । जुरामरन दुषनास्त अचलघरपावहीं
महाकाल अहिदारुननाम है षगपती । मायामोहतमपूज दहन रवि तें अती ।।
गरलसुभावसोमनकर ।। नाम पीउषनदुराधर्ष काम अमित विष ।।"

अन्त—'धर्मदासोवचनं ।। हे प्रभु संसैगत अव आसिकदीजीऐ ।।
निज किंकर यह जान दयामोहेकीजीऐ ।।
सतगुरोवचनं ।। दीन्हेंउं तोहे अभै पद संत समजनेउ ।।
ईछ्या संभव अतिहितअस अनुमानेउ ।।
छंद ।।३५।। अनुमानहित डिढ़आसिका ।। विविअग्रचालिससंभवा ।।
अपवर्गतेहे अविचलमई ।
भवभेद गयदुहुकरभवा ।। नाइसाषाअसंषजुथ ।। जेहि विघनसोभापावही ।।
गज गिरजोकुंभकजलजउपजै ।। अनतछविकंहपावही ।।
नदी विन जल पौंन विन वल ।। चंद विन जिमि जामिनि ।।
तिमि नाद विननहिवींर सोभित ।। समुझवमनि आमिनि ।।
ईछ्यामंभवअभिमनसुतजनकपुंगेवजावयउ ।।
ईमभक्तलीनअधनता बिन ।। परम पद नहीं पायउ ।।

छंद

तोंहे देषदीन अधीज धर्मनीता हेतैं मनराचेउ ।। नादवींद अधोनता जिन ।।
हंस सो फल चाखेउ ।। मानसरोवर हंस विहरत कमल जुथमिरनाल का ।।
चुगतमुक्तापरमजुक्ता दरसतेंहि अघघालका ।।
तिमिहंस प्रति मुक्तावली ।। सुनकै जो सादर गावहीं ।।
सतगुर क्रपा परसाद अविचल ।। अहै सुपघरपावहीं ।।
परसंन्न उतरतरनि दुहुतर ।। लौलनसुर्त्तजोराष हैं ।।
कामदिषलदलजीतकै अपवर्ग अर्मित सोचाष हैं ।।
धर्मदास समोधनारस ।। पर्म वित्त सुनायऊ ।।
वैरगुलुविधीरंकजिमी ।। भागंन परसमनपायऊ ।। जनमजन्म पातिकमिटै
गुरनाम विरद जोगाय है ।। कहैं कवीरपरचारतेहे ।। आराम आलै पायहै ।।
ऐते श्री ग्रन्थ हंसमुक्तावली ।। संपूर्ण ।। सुभमस्तु ।। समाप्तं ।।"

विषय—दर्शन, निगुंर्ण-साहित्य ।

टि०– (१) यह पुस्तिका कबीर साहब और धर्मदास के प्रश्नोत्तर के रूप में रची गई प्रतीत होती है। इसमें 'धर्मदासो वचनम्' से जीवन, मुक्तिनाद, बिन्दु, ध्यान, भक्ति-विधि आदि विषयों पर प्रश्न किये गये हैं और 'सत्गुरो वचनम्' से प्रश्न का समाधान किया गया है। ग्रन्थ सुपाठ्य और विवेच्य है।

(२) ग्रन्थ की लिपि-शैली प्राचीन है। लिपिकार एक कबीरपन्थी साधु हैं जिन्होंने 'सिंघौरी' मठ में श्री श्रुतस्नेही दासजी की आज्ञा से ग्रन्थ की लिपि की है। जैसा कि अन्त में–"ग्रन्थ हंसमुक्तावलीसंपूर्ण ॥ सुभमस्तु ॥ समाप्त ॥ संमत १८५४ ॥ के साल ॥ महीना ॥ कुवार ॥ क्रस्नपछ ॥ तिथ द्वादसो ॥ वार सनीचर ॥ अस्थान सिंघौरी ॥ गोसाईं सुर्त्त सनेही साहेब के हजूर मैं लिखा ॥ बैरागी षरगे दास ॥"—लिखा है।

(३) ग्रन्थ की समाप्ति के बाद 'पाताल पांजी' और 'वंशावली' नाम की पुस्तिका ६ पृष्ठों में है। इसमें कबीर के कुछ स्फुट पदों का संग्रह प्रतीत होता है। पुस्तिका, अनीसाबाद (गर्दनीबाग, पटना)–निवासी अखौरी गुरुशरण-प्रकाश के पास सुरक्षित है। इस ग्रन्थ का परिषद् में यथादर्श चित्र है।

२७. शब्द— ग्रन्थकार—कबीरदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-संख्या —१२२। प्र० पृ० पं० लगभग–२२। आकार—६ × ५⅓। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"प्रथम वचन रमेनी—अंतरजोती शब्द ऐक नारी ॥
हरि ब्रह्मा ताके त्रीपुरारी ॥
तेश्री ... अनंता ॥ काहुन जानल आदि आ अंता....ऐक बीधाता कीन्हा ॥"

अन्त—"हम कुसेवक तुम प्रभु आना ॥ दुइ मह दोस काही भगवाना ॥
हम चली अइली तोहरे सरना। वतहु ना देखो हरी के चरना ॥
हम चली अइली तोहरे पासा। दान कबीर भल कइल नीरासा ॥११३
सब्द संपुरन हुआ '

विषय—कबीर-साहित्य।

टि०–(१) इस पोथी में कबीरदास ने अपने सिद्धान्तों का विषय विवेचन किया है। ग्रन्थ पठनीय है।

(२) ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है।
यह ग्रन्थ, अनीसाबाद (गर्दनीबाग, पटना)–निवासी अखौरी गुरुशरण प्रकाश के पास सुरक्षित है। परिषद्-संग्रहालय में इसका यथादर्श चित्र संगृहीत है।

२८. श्रीरामार्णव—ग्रन्थकार—ज्ञानदास। लिपिकार—शिवबोध तिवारी। अवस्था—प्राचीन, जीर्ण-शीर्ण। पुराना देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—३१२।

प्र० पृ० पं० लगभग–३६। आकार १० × ६ । भाषा—हिन्दी। लिपि–नागरी। रचनाकाल– ×। लिपिकाल–वैशाख, शुक्ल तृतीया, सं० १९५३ वि०, बृहस्पतिवार।

प्रारम्भ—

दोहा ॥१॥ "तन ए बिहिन मलिन नृप जिमो सुमंत समुझाई॥
ऐहि तरंग सोई बर्णिहो रिषी आगमण उपाई॥

चौपाई॥

बपै अवध दसरथ मह्पिाला। बरनि सकै को बिभव बिसाला।
सरजु तिर अवधपुर सोहु द्वादस जोजन आपतजोहु
बिस्तर जो जणतिनि निहारो।
बसहि तहा निर्मल नरनारि। जहा अपुनि तन कोऊ निहारे।
नहि अवद बितबिविधि बिचारे।
नहि असुर बाहुज तहा कोई। दया बिना बैश्वन जोइ।
सेवा बिना सूद्र तहा नाही। कोस्य धर्म तजि पगुण धराही।
अंसपन नहिकोऊ तेही माही। धनपति लघुरुषितेन्ह रूब काही।
कोउ न असुन्दर तेहि पुर जोहे। सबही बिलोकि मारमण मोहे।

छंद॥

यण मोही मार निहारो सब कह रूप रासि प्रकाशि है।
असतीन तहातिय देषि तिन्हके रूप पररति हासि है।
गजबाजिबृंदबिलोकिसिधरहरिहयलाजही।
नहि गाई जातबिभूतिअवध अकृतिसुषमा साजही।

दोहा॥

मंत्र आठ महिप के इगितज्ञ सबकोई।
राजकाज समुझहि सदा सपनेहु अवरन जोई।"

अन्त—'निकसिनगरबाहरप्रभु आए। जनुघनतेबिधुउदददेपाए।
कोटिकलानिधिकेछबिछाजहि। बामभागपुनिरमाबिराजही।
रवेज सरोरुह सोहत हाथा। गमनकरत सोउरघुपति साथा।
शोण कुंजकरदक्षिणभागी। चलिभूमिदेविअनुरागि।
शस्त्र सहित बिधानधनुतीरा। चले संगधरि पुरुष शरीरा।
बेद बिबुधकरि द्विजबरदेहा। चले राम संगसहितसनेहा।
बेद मातुजुत प्रण बसि धाई। गवने सनकादिक रिषीराई।
महा भूमिधरधरेशरीरा। गवनहि राम संग धरिघोरा॥

दोहा॥

अंतहपुर नरनारी जो बालवृद्ध समुदाई।
भरत शत्रुहन सहित सब रघुपति संग सिधाई।

चौपाई ॥११॥

लघुबिशालपुर के नरनारी । सबकोउ रघुपतिसंगसिधारी ।
षुलेरामअपवर्गकेवारा । जड चेतनमनमुदित सिधारा ।
सुग्रिवहि देइ बानर भालू । चले संग सब सुषी बिशालू ।
अंतरहितपुर महजोकोऊ । रघुपति संग चले सबसोऊ ।
निसोचर निकर सिधावहि संगा । किहे राम पर प्रेम अभंगा ।
जीव चराचर अस नहि कोई । रहे अवध तजि रामहि जोई ।
सेत बसन परिधान अन्हाने । नहीं कोउ दीन दुषीदेषराने ।
नहिकोउजंतु अवधमहरहेउ । सबहि राम संगचित्तचहेऊ ॥

दोहा ॥

गवनेऊ जोजन अर्द्ध इमितहा लषिसरजुनीर ।
जग असेष निजहियनिरषी मुदित भएरघुबीर ।

चौपाई १२ ॥

तेहि अवसर चतुरानन आये । अमित बिमान गगन मह छाए ।
अति प्रकासमय भयउ अकाशा । बहु सुषदायक बहत बतासा ।
हरषि बिबुध प्रसुन झरि लावहि । करहि गान सुरनारीनचावही ।
सरजु जल पदपरशि उदारा । तबहि पितामहबिनय उचारा ।
कहत जोरीकर कृपानिधानहि । पुरुष पुराण प्रभुहि हम जानहि ।
आनद रुप एक अबिनासी । जगतपालपति बेदप्रकाशि ।
करिकृपाल ममबिनय । सदा भक्तहितत्रेदबषाना ।
करि सानुज निज देहप्रवेशा । प्रालहु अषिल भुवनअमरेशा ॥

दोहा ॥

एहिभाति बहु बिनय करि कीन्ह बिरंची प्रनाम ।
निज मन भवित करिउ प्रभु सदा सुजन सुषधाम ।
इति श्रीमद्रामचरित्रेरामार्णवेसकलपाप प्रशमने बिमलविग्यानानन्यभक्ति-प्रदायके उमामहेश्वर संवादेसममार्णवे रामप्रयाणवे २१ तरंग ।''

विषय—रामचरित्र-काव्य ।

टि०—(१) यह ग्रन्थ लगभग २०० वर्ष का प्राचीन है । ग्रन्थकार झामदास ने यद्यपि अपने विषय में कुछ भी नहीं लिखा है, प्रत्येक काण्ड के अन्त में केवल अपना नाम दे दिया है; तथापि ज्ञात होता है कि झामदास मिर्जापुर जिले के अकोढ़ी नामक ग्राम के निवासी थे । यह ग्राम पूर्वीय रेल-पथ के विन्ध्याचल स्टेशन से एक स्टेशन आगे अष्टभुजा के करीब 'विरोही' स्टेशन के सन्निकट है ।

(२) ग्रन्थ और ग्रन्थकार के विषय में निम्नलिखित बातों का भी पता चलाहै—झामदास की एक विधवा पौत्रवधू हैं । ग्रन्थ में अयोध्याकाण्ड और

सुन्दरकाण्ड नहीं है। दोनों काण्ड क्रमश: प० रामयज्ञ तिवारी और उसी ग्राम के एक साधु के पास है। ग्रन्थ और ग्रन्थकार के विषय में अन्य विशेष बातों का पता उसी ग्राम के एक जमीन्दार तथा पत्थर और कपड़े के व्यापारी ठाकुर राजधारी सिंह से चल सकता है।

(३) पोथी में—बाल, अरण्य, किष्किन्धा, लंका और उत्तर—ये पाँच काण्ड हैं। इन काण्डों की पृष्ठ-संख्या उसी पोथी में ही पृथक् दी हुई है; जो क्रमश ४८,३७, ४०, १२२ और ६५ है। लिपिकार ने इन काण्डों को भिन्न-भिन्न समय में लिखा है और सभी काण्डों के अन्त में लेखनकाल पृथक्-पृथक् दिया है, जो इस प्रकार है—

(क) बालकाण्ड—(कथावस्तु की समाप्ति के पश्चात् कवि ने अपने विषय में लिखा है)—

"छन्द ॥

निगमादि पाउनपार अति अधिकार जप जागृत महा।
संतत सुहावण पतित पावन जानी जन झामहु कहा।
एह सियराम बिबाह अति उत्साह मंगल करन हैं।
गावत सुनत नरनारी जो ताके अमगल हरन है॥

दोहा ॥

गावत सुनत सप्रेम जो नर निती नेम निहारी।
बसत सदा ताके निकट अविचल अवधबिहारी।१३।
कलिमल हरण सरिर अति नहि लषि अपर उपजाइ।
एह रघुपति गुन सिधुमरु मज्जत उज्जलताइ।१४।
वर्ण अलंकृत छंदरस कबित भेद बहु धाइ।
होनहि जानत एक उर सत्य राम गुन गाइ।१५।
अधम उधारण राम के गुण गावत श्रुति साधु।
झामदास तजि त्रासतेहि उर अंतर अवराधु।१६।
दिनबंधु रघुबिर के बानु सकल जग जानु।
झामदास उर आस यह नहि उपाय कछु आनु।१७।

इति श्री मद्रामचरित्रे रामार्णवे शकल पाप प्रसमने बिमल विज्ञानानन्य-भक्तिप्रदायके उमामहेस्वर संवादे प्रथमार्णवे अजोध्याभिनिबेशो नाम पंचत्रिसस्तरंग ३५ शोरठ १ दोहा १७ चोपाई १०४ छन्द ११ सब १३३ श्लोक ११ सोरठ ६६ दोहा ४२२ चोपाई ३५६८ छन्द १०० सब ४२०० श्री संमत १९५९ मीती माघ बदी ८ बार मंगर लिषा सीवबोध तेवारी गाव अक्रोधपुर।"

(ख) अरण्यकाण्ड (इसकी कथा 'शबरी' की वन्दना के साथ समाप्त होती है।

"दोहा ॥

करि एहि बिधि बिनति बिपुल जोग अगिनि तनुजार ।
शेवरीरघुपतिभजनबल रघुपतिसदनसिधाई ॥
अधम जातिहरिभजनबल पाइ मुक्ति जगजानु ।
जो उत्तम कुल भजतहो तो करिकहाबखानु ॥
राम चरण सुरधेनुसम सेवतसवकहसुषदानी ।
झामदास बिस्वासकरि सुमरिहुआनदखानी ॥

इति श्रीमद्रामचरित्रे रामार्णवे सकल पाप प्रशमने बिमल विज्ञानानन्यभक्ति प्रदायके उमामहेस्वर संवादे तृतीयार्णवे सेवरी मोछ पावनेनाम नवमहतरंग ९ इति संपुण ॥ श्री संमत १९६६ मीती फागुन वदो ६ लिखा सीउबोध तेवारी वार बुध, गाव अकोढो ॥ राम राम राम राम ॥"

(४) किष्किन्धाकाण्ड—"सोरठा । सकल संकभवबंक बहु कलंकनाना दुषद
महाबीर श्रुति अंक रसना रमत धिलास तब ।

दोहा ॥

एहकलिपारावारमह परोनपावतपार ।
झामराम गुन गानते बिनु प्रयास बिस्तार ।

इति श्री मद्रामचरित्रे रामार्णवे सकल पाप प्रशमने बिमल विज्ञानानन्य भक्ति प्रदायके उमामहेस्वर संवादे चतुर्थार्णवे समुद्रसंतरणे निचपानामैकादसमस्तरंग ॥ ११ दोहा ॥ २०६ चौपाई १५७६ छन्द २५ सोरठा २६ । इति श्री चतुर्थार्णवे बरननं समाप्तम शुभमस्तु संमत १९५३ मीती बेसाष सुदी ३ बार बृहफइ लिषा शिवबोध तेवारी साकीन अकोढी ।"

(५) लंकाकाण्ड—"पापपंकतनलसितअतिबिनुश्रमसकलनसाई ।
झाम रामचरितार्णव जीसहप्रेम अन्हाई ।
कलि कानन अघ आघ अति बिकटकुमृगन्हसमानु ।
हरि जस अनल लहं इतंग्यानबिरागकृपानु ।
झामराम सुमिरन बिना देहन आवै काम ।
इतै उतै कतहु नहि जयाकृपिन कर दाम ।
राम भजनते काम सब उभय लोक आनंद ।
ताते भजुमन मुढ अब छाड़ो सकलजगफंद ।

इति श्रीमद्रामचरित्र रामार्णवे सकलपापप्रशमने बिमलविज्ञानानन्य-भक्तिप्रदायके उमामहेस्वरसंवादे षष्ठार्णवे रामराज्योपालम्भनो नाम द्वात्रिंशस्तरंग ॥३२॥ सोरठा ४४ दोहा ५५१ ॥ चौपाई ४०६५ ॥ छन्द ११४ ॥ इति श्री षष्ठार्णवे बर्णनं समाप्तम् रामार्णव

शास्त्र आनंदरूपिनंम् । श्री संमत १९६४ लिखा शिवबोध तेवारी जिला मिरजापुर, थाना विन्ध्याचल, गाँव अकोढी, संमत १९६४ मिती कुआर बदी १ वार इतवार ।"

(६) उत्तरकाण्ड—(इस काण्ड की कुछ अन्तिम पंक्तियाँ प्रस्तुत ग्रन्थ के परिचय के प्रारम्भ में 'अन्त' शीर्षक अवतरण में लिखी जा चुकी हैं, उसके बाद की अन्य अन्तिम पंक्तियाँ इस प्रकार हैं)—

रामदास पदपाई झामदास मृगपतिसुषनस्यारहिकाई
कहाचंद्रमा गगन में कहा चकोर दोतीमाही ।
झाम जोहि से नेहरी तोहि तेइ निकट देषाही राम राम
सम्बत् १९५८ मिती माघ बदी ७ बार शुक्रबार लिषा शिवबोध तेवारी, गाँव अकोढ़ी में ।"

इस प्रकार, लिपिकार द्वारा सभी काण्डों के अन्त में दिये गये विवरण से कई बातों का संकेत मिलता है—

(क) किष्किन्धाकाण्ड के अन्त की—"महाबीर श्रुति अंक रसना विलास तव"—पंक्ति से ग्रन्थ-रचनाकाल का स्पष्ट संकेत नहीं मिलता है। प्रतीत होता है, १४१९ को संवत् है, जब इसकी रचना की गई है। इसके अतिरिक्त (ख) उत्तरकाण्ड के अन्त में 'रामदास पदपाई झामदास' पंक्ति से इनके गुरु का नाम 'रामदास' था, ऐसा बोध होता है। सभी काण्डों के अन्त में दी गई, दोहे, चौपाइयों, सोरठों और छन्दों की सूची भी विवेच्य है।

(४) ग्रन्थ की लिपि पुरानी, किन्तु स्पष्ट और सुन्दर है। लिपिकार का निवासस्थान ग्रन्थकार के ही ग्राम में था। यह ग्रन्थ हिन्दी-साहित्य के लिए गौरव की वस्तु है। इसमें श्रीगोस्वामी तुलसीदास के रामचरितमानस की शैली का अनुकरण किया गया है। कथनक भी प्रायः वैसा ही है। किन्तु, ग्रन्थकार ने इस कथानक के वर्णन को कहीं-कहीं विस्तृत भी कर दिया है। कई स्थानों में ग्रन्थकार की स्वतन्त्र सूझ, विशिष्ट कल्पना और बोझिल वर्णन-शैली के रहने से प्रस्तुत ग्रन्थ में विशेषता आ गई है। सम्भव है, इस पोथी के अनुसन्धान से हिन्दी-साहित्य को एक नई दिशा मिले। यह ग्रन्थ श्रीवागीश्वरी पुस्तकालय, उनवाँस, डाकघर—अन्दौर, शाहाबाद से प्राप्त हुआ। [उक्त पुस्तकालय को यह ग्रन्थ २६ मई, १९२९, रविवार को, श्री सर्वदानन्द सिंह (काशी) के सौजन्य से प्राप्त हुआ था। श्रीसिंह मोगलसराय से पूरब धीना रेलवे-स्टेशन के स्टेशन-मास्टर थे]।

२३. **श्रीब्रह्म-निरूपण**—(सटीक) ग्रन्थकार—सन्त धर्मदास। टीकाकार—भजनदास। लिपिकार—मंगलदास साधु। अवस्था -अच्छी, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं० २२५। प्र० पृ० पं० लगभग—२५। आकार--१२"×८"।

भाषा—संस्कृत और हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल— प्रसिद्ध । टीकाकाल—ज्येष्ठ, शुक्ल तृतीया, गुरुवार, सं० १९२३ । लिपिकाल—पौष, शुक्ल चतुर्दशी, सोमवार, सं० १९३२ ।

प्रारम्भ—(मूल) "सतनाम ॥

सतनाम सुक्रित आदली अज अचित पुर्स मुनि ॥
द्करुनामै कबीर सुर्तंजोग संतायन धनी धर्मदास ॥
मुक्ता मणि नाम ॥ सुदर्शन नाम कुलपति नाम ॥
प्रमोध गुरु बाला पीर ॥ कवल नाम ॥ अमोल नाम सुर्त सणेही नाम ॥
हक नाम पावक नाम ॥ प्रगट नाम ॥ साहेब चार गुरुवंस व्यास ॥
ब्रह्मनिरूपणं नाम ॥
॥ ऊँ नमाभ्यादि ब्रह्म सर्व्वं कारणं कर्णं तथा ॥ तद्रूपं ॥
सद्गुरुं बन्दे कर्मं रेषा प्रशांतये ॥१॥ छ ॥ छ ॥ छ ॥
सद्गुरोः पादपद्मं ये निशं ध्यायंति मानवाः ॥ नास्ति ॥
दुखः भयं तेषांजन्म मृत्युश्च नो तथा ॥२॥

परम पुरुषाय नमः सत्सुकृताय नमः ॥ दोहा ॥
आदि ब्रह्म सत्पुरुष गुरु उरधर करके ध्यान ।
बारबार वंदन करूं दुष हर कर कल्यान ॥१॥
मंगल रूप प्रकाश गुरु संत कबीर कृपाल ।
वंदो प्रथमारंभ में साहेब दीन दयाल ॥२॥
सत्सुकृत सुकृत करो भाषाकरण हमार ।
बिघ्न बिनास फल मंगल नाम तुमार ॥३॥
प्रगट नाम गुरु प्रगटहे संकट टारन हार ।
धीरज धरम प्रकाश जग धीरज नामजुसार ॥४॥
अंस बंस सब सतगुरु भये होय अरु आहि ।
सबकूं मेरी बंदगी बारबार करूं जा चाहि ॥५॥
ब्रह्म निरूपन ग्रंथ के संस्कृत श्लोक विचारि ।
भाषा सुगम बनाइके करन चहूं निरधारि ॥६॥

आदिब्रह्म ऊँनमामि० कि दृश्यमादिब्रह्म० सर्वकारणं० तथा करणं ॥ तद्रूपं सद्गुरु० कर्मं रेषा प्रशातये० अहं बंदे० इत्यन्वयः ॥१॥ टीका ॥ अनंत रूप प्रकाशमान ऐसे सत्पुरुष की प्रेरणा धर करिके अमरलोकते आये कवीर साहेब ॥ जगत मे बाधू गढ नग्रके विषे धर्मदास प्रति शंसय निबारणार्थ ब्रह्मनिरुपण संस्कृत भाषा करिके कहते भये ॥ तिनकी प्राकृत भाषा करिके सुगम विचारणार्थं ॥ टीका ॥ यथा बुद्धि चार गुरुबंस बियालीस की कृपा से कह देता हूँ ॥ आदि ब्रह्म ऊँनमामि नाम० आदि ब्रह्म सत्पुरुष जो है तिनोकूं मै ऊँकार सहित नमस्कार करता हूँ ।

आशंका वे आदिब्रह्मतो अनादिकाल के स्वत: सिद्ध है तिनोकूं आदि ब्रह्म क्यौं कहिये ।। तहां कहेते हैं ।। जा कालके विषे जगत की उत्पत भई ताके आदि प्रथम ब्रह्म है ताते आदिब्रह्म कहिये ।। तिनोकूं मैं ऊँकार सहित नमस्कार करता हूँ ।। यहाँ ऊँकार को क्या प्रयोजन है ।। तहाँ कहते हैं ।। ऊँकार जो है सो अकार उकार मकार बिंदु अर्धमात्रा संयुक्त है ।। वा मे स्थूल सूक्ष्मादि बहुत प्रकार के भेद हैं तिनो में से परापस्यंति मधिमा वैषरीबाचा चतुष्टय ग्रहण करिके नमस्कार करते हैं ।। वा पालन पोषन अर्थ ग्रहण करिके ग्रंथ आरंभ के लिए नमस्कार करते हैं ।। कि दृश्यमादिब्रह्म नाम वे आदिब्रह्म कैसे हैं सर्वकारण नाम समग्र जगत के कारण रूपी हैं ।। आशंका ।। कारण दो प्रकार के हैं ।। निमित्त कारण—उपादान कारण ।। जो कार्य सहवर्त्तमान रह्यो है सो उपादान कारण कहिये जैसे सुवर्ण के भूषण अरु मृतुका के घट यह उपादान कारण कहिये ।। अरु जो कार्य ते भिन्न रह्यो हे सो निमित्त कारण कहिये ।। जैसे चक्र डंड कार्य करिके भिन्न है इनकूं निमित्त कारण कहिये ।। ऐसे वे आदिब्रह्म जो है सो निमित्त कारण है वा उपादान कारण है तहां कहे हैं वे आदिब्रह्म जो हे सो निमित्त कारण है तिनो की सत्ता रूपी निमित्त सें ।। जगत रूप कार्य बन्यो है ।। अरु आम जगत से भिन्न है ताते निमित्त कारण कहिये ।। अरु माया उपादान कारण है सा कार्य सहवर्त-मानरहित है ताते उपादान कारण कहिये ।। आशंका ।। ब्रह्म तो सर्व व्यापक है तिनोकूं भिन्न क्यौं कहिये ।। तहाँ कहते हैं ।। वे आदिब्रह्म सत्पुरुष जो है सो सर्वलोकन तेऊर्द्ध अमरलोक के विषे विराज-मान है ताते भिन्न कहिये ।। अरु तिनो की सत्ता जो हे सो सर्व व्यापक है ।। जैसे सूर्य ऊपर आकास देस के विषे दृश्यमान है ।। अरु प्रकाशरूप से सर्वव्यापक सत्ता है ऐसे वे पुरुष की सत्ता सर्वव्यापक है अरु आप भिन्न है ।। ऐसे कारण रूप है ।। तथा नामता प्रकार करिये करणं नाम सर्व जगत के कारण रूप है ।। जा करिके जो कार्य होवे ताकूं करण कहिये ।। ऐसे आद ब्रह्म सतपुरुष हैं ।। तद्रूपं सद्गुरुं नाम वे आदिब्रह्म सत्पुरुष जो है वोही रूप सद्गुरु है ।। कैसे जा कालके विषे पुरसने कबीर साहेब कूं बुलाय के तिनकूं मूलमंत्र दियो है ता ते वेही सद्गुरु रूप है और कोई नहि है ।। वे पुरस रूप सद्गुरु कूं कर्म रेषा प्रशांतये नाम करे तिनकूं कर्म कहिये अरु कर्म की जो रेषा ताकूं कर्म रेषा कहिये अरु कर्म रेषा को जो प्रशांति तिनकूं कर्म रेषा प्रशांति कहिये सो कर्मरेषा की प्रशांति के अर्थे ।। ये समासा अर्थ भयो ।। अब इनकूं स्पष्ट करिके कहते हैं ।। देषो जगत में अनेक प्रकार के नित्य-नैमित्य यज्ञायादि बर्णाश्रम के कर्म अनेक हैं ।। तथा गुरु बिप्र बालस्त्री मित्रादि जीव-

इत्यादि पाप कर्म बहुत प्रकार के हैं तिनके फलभोग भांनदी रूप रेषा समग्र प्राणि मात्र के बुद्धि मे परी है ।। सो कर्म रेषा की अभाव रूप शांति के अर्थे अहंबंदे नाम मे बंदगी करता हूँ इत्यर्थः ।।

ये मानवाः सद्गुरोः पादपद्मं अनिश्यं ध्याति तेयंषां दुःख भयं नास्ति चपुनः ।। तथा जन्मभृत्यु श्चनो इत्यान्वयः ।।२।। टीका ।। ये मानवाः जे निष्काम कर्म उपास्ना करिके प्राप्त भयो ज्ञानाधिकार ऐसे जो मनुष्यों सो ।। सद्गुरोः पादपद्मं नाम वे जो ब्रह्मस्वरूपाकार बोध रूप सद्गुरु है तिनके पादपद्मंनाम चरणकमल जो है तिनकूं अनिशं ध्यायंति नाम निरंतर ध्यान करे ।। तेषां वे मनुष्यों के दुःखभयं नाम अनेक प्रकार के दुःख अनेक प्रकार के भय जो होय सो नास्ति हो जावे ।। च पुनः तथा ते प्रकार के जन्म मृत्यु नाम अनेक कीटपतंगसु पंक्षी जलजन्तु बहुत प्रकार कीं योनि के विषे जन्म लेना नहि प्राप्त होवे ।। च पुनः तथा मृत्यु नाम मरण काल के विषे अनेक प्रकार के व्याधिकृत दुःख रूप मृत्यु जो हे सो नीक हेता होवे मिट जावे इत्यर्थः ।।"

अन्त—"(मूल) ज्ञानध्यानविलाशकहि सततं मान्यंच पूर्णं गुरुं ।

ह्येदं ब्रह्म निरूपणं सुसुखदं प्राचीनकं स्तोत्रकंम् ।।
नत्वातत्कृपयामया भगवतीदासेन संशोधितं ।
शीघ्रं पाठविवाछिनांच सुगमार्थस्यैवलाभो भवेत् ।।३७५।।

टीका ।। हि निश्चय करिके ज्ञानध्यान विलाशकं नाम ज्ञान करिके अरु ध्यान करिके बिलास करने वाले ऐसे अरु पुनि सततं नाम निरंतर मान्यां नाम मान्यपुज्य ऐसु अरु पूर्णं नाम समग्र शुभ गुण से सम्पूर्ण भरे हुए गुरुं ऐसे नाम गुरु जो हैं तिनोकूं । नत्वानाम मनन करिके बंदगी करिके ।। तत्कृपया नाम तिनोकी कृपा करिके भयानाममैने भगवती दासेन नाम—भगवती दासेन नाम--भगवती दासने इदंनाम यह सुसुख बंदनाम वर्णन कियो जो अच्छे प्रकार को मोक्ष सुष ताकूं देने वाले ऐसे ।। अरु प्राचीकंन बहुत काल को ऐसो ब्रह्म निरुपणं स्तोत्रं नाम ब्रह्म निरुपण म्तोत्र जो है याकूं संशोधितं नाम अच्छे प्रकार से व्याकर्णं शास्त्र के प्रमान से अक्षर संधिविभक्ति संयुक्त करिके शोधन कियो है ।। पाठविवांछिनां—नाम यह ग्रंथ का पाठ की है इच्छा जिनोकूं तिनोकूं सुगमार्थस्य एवनाम सुगमअर्थ को हि निश्चय करिके ।। शीघ्रं नाम तत्काल लाभः भवेत् नाथ लाभ होवे ।। इत्यर्थः ।।३७५।।

(मूल)—इति श्री सद्ग्रुरु चित्तं मुक्त्युपदेशं कलिमल विध्वंशकं ।। धर्मदास संबोधनं सारसंग्रहं ब्रह्म निरुपणं स्तोत्रं भवेत् ।

(टीका)—इस प्रकार करिके सद्गुरु कबीर साहेब ने रचित कियो ऐसो अरु मुक्ति को उपदेश यामे ऐसो ।। अरु कलिमल जो पापनिकूं विध्वंस

नास करने वाला ऐसो ।। अरु धर्मदास साहेव को अच्छे प्रकार को बोध है यामे ऐसो ।। अरु सार बिचारको संग्रह कियों ऐसो यह ब्रह्म निरुपण स्तोत्र है सो संपूर्ण भरो ।।"

विषय—दार्शनिक; कबीर-साहित्य ।

टि०—(१) यह ग्रन्थ कबीरदास के शिष्य धर्मदास की दार्शनिकता का परिचायक है। इसमें ग्रन्थकार ने संक्षेप में और संस्कृत-भाषा में ब्रह्म, अर्थात् ईश्वर के सम्बन्ध में कबीरदास और उनके पथानुमोदित सिद्धान्त का विशद विवेचन किया है; साथ ही इस पोथी में स्थान-स्थान पर अपने पन्थ के लोगों को सामयिक तथा उचित उपदेश भी दिया है। ग्रन्थकार ने इसे एक स्तोत्र-ग्रन्थ का रूप दिया है और इसके पाठ की अनिवार्यता में कई श्लोक लिखते हुए व्यक्त किया है कि यह ज्ञान उन्हें सन्त कबीर साहब से प्राप्त हुआ । सम्पूर्ण ग्रन्थ गुरुशिष्य-संवाद—कबीर साहब और धर्मदासजी के परस्पर वार्त्तालाप त॰। प्रश्नोत्तर के रूप में है। ग्रन्थकार ग्रन्थपाठ की विशषता में लिखते हैं—

"प्रसन्नेन मया दत्तं चैतद्गुह्यतरं परम् ।।
तुभ्यं सुसाधवेज्ञानं तत्ज्ञात्वावं सुखी भव ।।३४८।।
पठनादेत्ग्रन्थस्य श्रवणद्वा तथैनच ।।
निष्कामा. प्राप्नुयुमुर्क्ति सकामास्तु फलानिवै ।।३४९।।
एक श्लोकं तथा चार्द्धं पठंति शुद्धमानसाः ।।
जनास्तेपि सुखंचैन यान्ति मुक्तिं संशय ।।३५०।।
एतस्य पठनादेव सर्वविघ्नाः विनिश्चितम् ।।
नश्यंतेच तथा रोगाः लताविस्फोटकादयः ।।४५१।।
दैविकाः जैहिकाश्चैव भौतिका वा तथैवहि ।।
विनश्यंति त्रयस्तापाश्चैतस्य पठनादपि ।।३५२।।"

इस प्रकार, ग्रन्थ और ग्रन्थपाठ की विविध और फल दिखाने के बाद ग्रन्थकार ने अन्त में ब्रह्मस्तुति करते हुए—

"नमोस्तुते त्वादि ब्रह्मन्सदैव श्रद्धाय बुद्धाय निर्मायिकाय ।।
ज्ञानस्वरूपाय तथा क्षयाय .... ह्यनैंतकाय ।।३६८।।
नमोस्तु पुरुषाय निरक्षराय निष्कामरूपाय प्रशांतमूर्तये ।।
तथाव्ययाय स्वजनोपकारिणे.........प्रभन्वाय च सत्यनाम्ने ।३६९।।
नमोस्त्वदेहायह्यनादयेच सत्य चिदानंद बिलाशकाय........। ३७०।।
संकल्पभिन्नाय भद्रस्वरूपिणे सर्वोपसज्जयिनिस्तत्वव्यक्तये ।
स्वतः प्रकाशायच ह्यंबुजांघ्रे त्वज्ञानध्वंसाय नमोस्तुनित्यम् ।३७१।।
ज्ञानोदयकरं ह्येतत् तथा च भक्तिवर्द्धकम् ।
ब्रह्म निरूपणं स्तोत्रं कथितं सारसंग्रहम् ।।३७२।।

गुरुमूर्त्तौरतिर्यस्य चेच्छितः साधुसंगमम् ।।
तस्यैतद्दीयते ग्रंथं नोभक्तस्य कदाचन ।। ३७३।।
प्रातरुत्थाय यो नित्यं पठंति भक्तिपूर्वकम् ।।
निश्चयं गच्छते प्राणी सत्यलोकं सनातनम् ।।३७४।।"

आदि में ग्रन्थमाहात्म्य लिखा है कि इस ग्रन्थ को प्राप्त करने का अधिकार सभी को नहीं है, अपितु जो गुरु के प्रति श्रद्धावान् है, वही इससे लाभ उठा सकता है। ग्रन्थकार ने अपने परिचय, काल आदि के विषय, में कहीं सम्भवतः कुछ भी नहीं लिखा है।

(२) ग्रन्थ के टीकाकार श्री भजनदासजी गुजरात देश के सूरत जिला के निवासी हैं। इन्होंने ग्रन्थ के अन्त में अपने विषय में निम्नलिखित रूप में लिखा है—

"साक्षाद्ब्रह्म कबीर सत्पुरुषज्ञानस्वरूप गुरुं स्मृत्वा हृद्यनिर्शनिक्ष रमखंडानंदलोकस्थितम् ।। तस्यप्रेरणया मया भजनदासेनस्फुटीतार्थिका श्रेष्ठासत्यथ भाषिणी सुफलदा टीकाकृता भाषया ।।१।। साधोसंत दयानिधे प्रगटनामाचार्य सद्गुरोः वेदांतस्यहठस्यपंचीकरण यायस्यशांख्यस्यवै ।। ज्ञानध्यान परंच भक्तित्रिविधा सर्वामया वर्णिता अस्यांशुद्धमशुद्धता भवतिचे वत्ज्ञात्वाक्षमांकुरु ।।२।। प्राकृतश्लोकः ।। आदि ब्रह्म समान सद्गुरुभये शब्दार्थ दाता धनी तातेया पद बोधिनी सुसरलाभाषा सुटीका बनी ।। वारंवारहि मोर भावसहितं सष्टांगहे वंदनं योमेमेरिजु भूल चूक सबहीमाफीकरोबंदनं ।।३।। इतिश्री सद्गुरु पादपंकजरज भजनदास कृत पदबोधिनी ।। प्राकृत भाषायां टीका समाप्ता । सत्कबीरार्पण मस्तुः सद्गुरु अर्पण मस्तु ।।"

कवित्त ।।

"गुजरात देसमाहि नग्र सूरत वामे वंश
गुरु साहेब को प्राचीन कोधाम है ।।
तामे गुरु अमरदासजी के सिष किसनदास
तिनोकी चाहते कियो टीकाको काम है ।।
गुरु लछमनदासजी को सिष हैं दासान्दास
भजनदास टीकाकृत बोलवे को नाम है ।।
मोकूं अभिमान नाही ज्ञान को विचार आंही
सतन की दाया चाही और ते न काम है ।।"

सोरठा ।।

"एक नवहि दो तीन साल तिथि तृतीया गुरु ।।
ग्रंथ समापत कीन ज्येष्ठ मास शुध पक्ष में ।।"

उपर्युक्त श्लोक से ग्रन्थकार का स्थान, गुरु और टीकाकार का विषय स्पष्ट होता है। टीकाकार ने कहां-कहां भूल से टीका को दुरुह कर दिया है। टीका की भाषा 'सधुक्कड़ी' है और यत्र-तत्र संस्कृत के श्लोक को तथा उद्धरणों का भी प्रयोग किया गया है। टीका की शैली प्राचीन है। टीकाकार संस्कृत के अच्छे विद्वान् प्रतीत होते हैं, फिर भी, कही-कहीं व्याकरण की अशुद्धियाँ हैं।

(३) ग्रन्थ के लिपिकार मंगलदास भी कवि एवं कबीरपन्थी साधु हैं। लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में "इतिश्री ग्रन्थ ब्रह्म निरुपण सटीक समाप्त ।। सम्पूर्ण शुभमस्तु जसप्रत देषितस लिषित मम दोसो नदीयते ।। संमत १९३२ के साल पूस सुद शुक्ल पक्ष चतुर्दशी पुर्नो ।।१४।। सोमारवार के दिन सम्पूर्ण भवेत् ।। दोहा ।। टूटा जो कुछ होयगा मात्रा बिंदु विचार ।। कर जोरी बिनती करों लीजो संत सुधार ।। बैठक कमर्दामध्ये प्रगट नाम साहेब का धाम अस्थान तहा पर बेठ के लिषे हस्त अक्षर मंगलदास साधु ।। श्लोकः ।। जादृश्यं पुस्तकं दृष्टा तादृश्यं लिखितं मया ।। यदि शुद्धं मशुद्धं वा मम दोशो न दीयते ।।२।। साषी ।। बंदो पुरस कबीर बंदो षोडश अंसको ।। बंदो परमातमधीर बंदो एकोत्तर बंस को ।।१।। मेरी बुद्धि मलीन है शुद्ध लिषो नहि जाय ।। बारबार बंदगी करूं लीजो अर्थ लगाय ।।१।।" इन दोहों में अपना परिचय दिया है।

(४) यह पोथी अनुसन्धेय और विवेच्य है। इसमें कबीर-दर्शन की समीक्षा की गई है। कबीर-दर्शन के सम्बन्ध में ग्रन्थकार का अभिमत देखिए—पृष्ठ-सं० १३९।

"मूल—सद्गुरुवाच ।। ज्ञान योगेहठेचेदंनास्थितं चंचल मनः ।।
शिवादीनां शुकादीनां भ्रामयत्यनिशंचतत् ।।२५।।
गोरक्षसदृशः कोपि नान्यज्ञाता जगत्यभूत् ।।
सोपिमनोवशीभूत्वा शापं ददौनरान्वहून् ।।२५३।।

टीका—सद्गुरुवाच ।। ज्ञान योगेचपुनः हठे इदं चंचलं मनः नास्थितं भवेत्। किंतु यत् शिवादीनां च शुकादीनां तत् अनिशं भ्रामयति इत्यन्वय ।।२५२।। टीका ।। अब ता ब्रह्म को उत्तर जो है सो सद्गुरुकबीर साहेब वर्णन करिके कहते भये ।। ज्ञान योगेनाम ।। स्थूल सूक्ष्मादि सहित अकार उकार मकार बिंदु-अर्द्धमात्रा को वर्णन करिके निःक्षर नामको भिन्नरूपदरसायोताकूं ज्ञान योग कहिये। ताके विषे ।। अरुहठनाम। यम नियमादि साधन सहित समाधिजो है ताकूं हठयोग कहिये ताके विषे ।। इदंनाम। यह चंचलं नाम श्रोत्रादिइंद्रिय द्वारा करिके शब्दादिविषे ये के निरंतर बृत्तिचलायमान होवे। किंतु नाम क्यों यत् नाम जो शिवा-

दीनां नाम—शिव आदि बड़े देव जो है तिनोंकूं । अरु शुकादीनां नाम—शुकदेव आदि लेयके बड़े-बड़े मुनि जो है तिनकूं । तत् नाम सो मन जो है सो अनिशंनाम निरंतरं भ्रामयति नाम—चक्रके जैसे फिरावता है ।। इत्यर्थः ।।२५२।। जगति गोरक्षसदृश. अन्यज्ञाता कः अपि न अभूत ।। स अपि मनः वशीभूत्वा बहून् नरान् शापं ददौ इत्यन्वय ।।२५३।।

।। टीका ।। जगतिनाम—यह जगत के विषे, गोरक्षसदृश नाम गोरष जोगी जो भये ताके सदृशनाम बराबर ।। अन्यज्ञातानाम और ज्ञनीकः अपिनाम—कोई भी न अभूतनाम—नहि भया स अपि नाम—सो भी पण-मनः वशीभूत्वा नाम यह चंचलमन जो है ताकूं वसहोयके ।। बहून् नरान् नाम—बहुत नरनक शापंनाम शाप जो है सो—ददौ नाम—दिये हैं—नाम हे धर्मदासदेषो यह जगत के विषे गोरष के समान और ज्ञानी कोई भी नहिभयाएसा बड़ा गोरष ज्ञानीहता । परंतु सोभी पणमन के वसहोय के वहुत नरनकूं उन्ने श्राप दीये ऐसा ये मन चंचल है अरु महाबलवान है ।

यहाँ ग्रन्थकार ने मन और उसके निरोध के सम्बन्ध में विवेचन किया है। यह ग्रन्थ अघोरी गुरुशरण प्रकाश (अनीसाबाद, गर्दनीबाग, पटना) के पास सुरक्षित है। संग्रहालय में इसका यथादर्श चित्र संगृहीत हुआ है।

३०. तुलसीमालोपनिषद्—ग्रन्थकार–×। लिपिकार–×। पृष्ठ–४। प्र० पृ० पं० लगभग २०। अवस्था–प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"ॐ नमस्तुलस्यै ।। अथ तुलसीमालोपनिषद् ।।
सनत्कुमारंविधिनोपपन्नं प्रछतन्नारदोदेवर्षिः
प्रबूहि मे तुलसीकाष्ठमाला कथन्धार्याकिम्फलं कश्चकाल. ।।१।।
को विधिः का रीतिः सनत्कुमारः प्रोवाचतस्मैमुनये नारदाय ।
स्वस्मै पुरा दृष्टवसेविधात्रा यथोपदिष्टं तुलसी महत्वम् ।।२।।
देवोन्दधानस्तुलसोन्महात्मन्विष्णुप्रियां सर्वपापहन्त्रीम् ।
समस्त पापानिविधूय सद्य परात्परम्मदमन्ते प्रयाति ।।३।।
श्रीशोजयतु ।। विधिकरके युक्तथो सनत्कुमारतिन देवतर्पिजोनारदशो प्रश्नकरत भए कौन प्रश्न शो शुनो श्रीतुलशीकाष्ठ की माला किश प्रकार शो धारण करना वो क्या फल है वो को काल हे ।।१।। वो क्या विधि हे वो क्या रोति हे, यह प्रश्न शुनकर सनत्कुमार नारद मुनि वास्ते प्रश्नोत्तर करत भय पूर्व ही प्रश्नकर्त्ताजो में तिश शे जैशा तुलशी महत्व ब्रह्मा ने उपदेश किया शो शुनो ।।२।।"

अन्त०—'अथ हैतामुपनिषदन्न परशिष्याय ब्रूयात् न नास्तिकाय नानृजवे नासूयवे न शठाय ना शान्ताय ना दान्ताय ना समाहिताय प्रब्रूयात् ज्येष्ठपुत्राय परां तामुपनिषदम्प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापन्नाशयति सायमधीयानो दिवसे कृतं पापन्नाशयति स विष्णुलोकं गच्छति य पूर्वं वेद य पूर्ववेदेति ।। इत्यथर्ववेदीया तुलसीमालोपनिषद् संपूर्ण ।।

वो यह उपनिषद् परशिष्य को नहीं कहे नास्तिक को नहीं कहे निन्दक को नहीं कहे शठ को नहीं कहे अशान्त को नहीं कहे अदान्त को नहीं कहे असमाधान को नहीं कहे ज्येष्ठ पुत्र को कहे, यह उपनिषद् को प्रात काल अध्ययन करनै वाले मनुष्य रात्रि का किया पाप को दूर करता हैं। वो सायंकाल अध्ययन करनेवाले दिन का किया पाप को दूर करता है वो सो पुरुष विष्णुलोक को प्राप्ति करता है जो यह जानता हे शो।। इत्यथर्ववेदीया सभाषा तुलशीमालिकोपनिषद् सम्पूर्ण ।। शुभमधिकम् ।

विषय—धार्मिक साहित्य। तुलसी-माला से सम्बद्ध स्तोत्र एवं माला जप-विधि।

टिप्पणी—(१) यह ग्रन्थ तुलसी-वृक्ष की बनी माला के सम्बन्ध में है। ग्रन्थकार ने 'अथर्ववेदीय' लिखकर ग्रन्थ का गौरव बढ़ाया है। ग्रन्थ में, प्रारम्भ करते हुए नारद आदि के परस्पर वार्तालाप की प्रसंग-चर्चा की गई है।

(२) ग्रन्थ में, मूल मोटे अक्षरों में और भाषा-टीका पतले अक्षरों में लिखी गई है। टीका की पुरानी और कथा-शैली से मिलती-जुलती है। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट और प्राचीन है। लिपिकार ने 'ब' के लिए 'व' और 'व' के लिए 'व़' का प्रयोग किया है। इसी प्रकार अ के लिए य' और 'य' के लिए 'य़' लिखा है। लिपि की यह शैली ग्रन्थ की प्राचीनता सूचित करती है।

(३) इस ग्रन्थ के साथ ही एक और 'शंख-चक्र धारणे वैदिक प्रमाणानि' नामक तीन पृष्ठों का उपग्रन्थ हैं। ये दोनों पुस्तिकाएं वैष्णव आचार से सम्बन्ध रखती हैं। यह ग्रन्थ केदारनाथ चौरसिया, (गया) के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

३१. विचार-सागर— ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देश कागज। पृ० सं०—१९७। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। भाषा—हिन्दी। लिपि-नागरी। आकार—५½"×६"। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—'श्री गणेशायनमः ।। अथ वस्तुनिर्देशरूपमंगल ।।

दोहा ।।

जो सुपनित्यप्रकासविभु ।। नाम रूप आधार ।।
मति न लखै जिहि मति लख ।। सो मैं शुद्ध अपार ।।१।।

अब्धि अपार मम। लहरी विष्णु महेश ।।
विधि रवि चंदा वरुन यम ।। सक्ति धनेश गणेश ।२।।
जा कृपालु सर्वज्ञ को ।। हिय धारत मुनि ध्यान ।।
ता को होत उपाधिनै ।। मो मिथ्या भान ।।३।।
ह्वै जिहि जानैं बिन जगत ।। मनहूँ जे वरो साप ।।
नशै भुजग जगजिहि लहै ।। सोहं आपे आप ।।४।।
बोध चाही जाको सुकृति ।। भजत राम निष्काम ।।
सो मेरो है आत्मा ।। काकूं करूं प्रनाम ।।५।।
भर्यो बेद सिद्धान्त जल ।। जामे अति गंभीर ।।
अस विचार सागर कहूँ ।। पेपि मुदित ह्वै धीर ।।६।।
सूत्रभाष्य वार्तिक प्रभृति ।। ग्रन्थ बहुत सुरबानि ।।
तथापि मैं भाषा करूं ।। लषि मति मन्द अजानि ।।७।।

टीका ।।

यद्यपि सूत्र भाष्य वार्तिक प्रभृतिकहीये आदि लेके ।। सूरबानि कहिये संस्कृत ग्रन्थ वहुत हो ।। तथापि संस्कृत ग्रन्थन सैं मंदबुद्धि पुरुषन कों बोध होवै नही ।। औ भाषा ग्रन्थन सैं मंदबुद्धि पुरुषन कूंबिबोध होवे है ।। यातैं भाषा ग्रन्थ का आरंभ निष्फल नहीं ।। किंतु संकृत ग्रंथन के विचारनै विषे जिनकि बुद्धि समर्थ नहीं है ।। तिनके मिमित्त ग्रन्थ का आरम्भ सफल है ।।८।।

दोहा ।।

कविजनकृत भाषा बहुत । ग्रन्थ जगत विख्यात ।।
बिन विचार सागर लषै । नहि संदेह नसात ।।८।।"

दोहा ।।

अन्त०—"तर्क द्रष्टि के बैन सुनि । सो बोल्यो बुध संत ।
जो मो सूर्ते यह कह्यो । सोई मुष्य सिद्धांत ।।२३।।
संसै सकल सायुं । लष्यौ ब्रह्म अपरोछ ।।
जग जान्यो जिन सब असत । तैसे बन्धरूमोछ ।।५४।।
शेष रह्यो प्रारब्ध यूं ।। इच्छा उपजी येह ।।
चली तत्काल हि देषि यें । जननि जनकजुत गेह ।।२५।।

टीका ।।

ज्ञानी का सकल व्यवहार अज्ञानी की नाई प्रारब्ध सैं होवै ।। यह पूर्व कही है । या ते इच्छा संभवे है ।। और कहूँ सास्त्र मैं असा लिष्या है ज्ञानी कूं इछा होव नहीं ।। ता का यह अभिप्राय नही ।। ज्ञानी का अंतःकरण पदार्थ की इछा रूप परिणाम कूं प्राप्त होवै नही काहे तैं अंत करण कै इछादिक सहज धर्म है ।। औ अतःकरण यद्यपि भूतन के सत्वगुण का कार्ज कह्या है ।। तथापि रजोगुण तमोगुण सहित

सत्वगुण का कार्ज है ।। केवल सत्वगुण का नही केवल सत्वगुण का कार्ज होवै तौ चलस्वभाव अंत:करण का अंत:करण का नही हुवा चाहिये ।। तैसे राजसी वृत्ति काम क्रोधादिक ।। औ मूढ़तादिक तामसी वृत्ति किसी अंत:करण की नही हुई चाहिये । यातैं केवल सत्वगुण का अंत करण कार्य नहीं । किन्तु अप्रधान रजोगुण तमोगुण सहित ।। प्रधान सत्वगुण वाले भूतनतैं अंत.करण उपजे है । यातै अंत:करण मैं तोन गुण रहै है । सो तीन गुणकवोपुषंन के जितनैं अंत करण है ।। तिन मैं सभ नहीं किन्तु नून अधिक हैं । यातैं गुणोन की नूनता अधिकता सैं सर्व के विलछण स्वभाव है ।। इस रीति सैं तीनू गुण का कार्य अंत:करण है ।। जितने अंत:करण रहै उतनै रजोगुण का परिणामरूप इछा अभाव बनै नहीं ।। यातैं ज्ञानी कूं इछा होवै नहीं ताका यह अभिप्राय है ।। अज्ञानी औज्ञानी दोनू कूं इछा तो समान होवे है ।। परन्तु अज्ञानी तो इछादिक आत्मा के धर्म जानै है ।। और ज्ञानी कूं जिस काल मैं इछादिक होवै है तिस कालमैंवीआत्मा के धर्म इछादिकन कूं जानै नहीं किंतु काम, संकल्प सन्देह राग द्वेषश्रद्धा भय लज्जा इछादिक ।। अंत:करण के परिणाम है ।। यातैं अंत:करण के धर्म जानै है । इस रीति सैं इछादिक होवै बी हैं । आत्मा के धर्म इछादिक ज्ञानीकूं प्रतीतो होवै नहीं । या तैं ज्ञानी मैं इछाका अभाव कह्या है ।। तैं सैं मनबानी तन सैं जो व्यवहार ज्ञानी करै ।। सो सारा ज्ञानी कूं आत्मा में प्रतीत होवै नहीं ।। किन्तु सारो क्रियामनबानीतनमैं हैं ।। औ आत्मा असंग है यह ज्ञानी का निश्चै है ।। यातैं सर्व व्यवहार कार्त्ता बीज्ञानी अकर्ता हैं ।। इसी कारण तैं श्रुति मैं यह कह्या हैं ।। ज्ञान तैं उत्तर किये जो वर्तमान सरीर मै सुभ असुभ कर्म ।। तीन कै फल तुराय पाप का संबंध होवै नहीं ।। प्रारब्धबल तैं अज्ञानी की नांई सर्व व्यवहार और ताकी इछा संभवे है ।। सुभ संतति नाम राजा कूं त्यागो कै तीनूं पुत्र निकसे ।। तहाँ पुत्र की कथा कहीं अबपिता का प्रसंग कहै है ।

दोहा ।।

पुत्र गयेलाष गेहतैं पितुचित उपज्योषेद ।।
सूनो राजनतिनतज्यो ।। नहिजथार्थं निर्वेद ।।२६।।

टीका ।।

पुत्र ग्रहतैं निकसे तब राजा कूं तीव्र वैराग्य कै अभाव तैं । तिनके वियोग कादष हुवा तैं से दावैराग्यहु... ... ...।

विषय—दर्शन निर्गुण-साहित्य ।

टिप्पणी—(१) यह ग्रन्थ खण्डित है। पुष्पिका (अन्त) के पृष्ठ खण्डित होने के कारण ग्रन्थकार लिपिकार, टीकाकार के सम्बन्ध में तथा इनके काल आदि किसी भी बातों का सकेत नहीं मिलता है। ग्रन्थ के मध्य में भी यथासम्भव कोई परिचायात्मक सकेत नहीं दिया हुआ है। अतः, नहीं कहा जा सकता कि इसके लेखक और लिपिकार कौन हैं और उनका समय क्या है ?

(२) इस ग्रन्थ में श्री दादू के निगुर्ण-दर्शन की बड़ो सुन्दर तथा सारगर्भ विवेचना की गई है। ग्रन्थकार ने दोहे और चौपाइयों में जिस भाषा का प्रयोग किया है, वह सधुक्कड़ो भाषा कही जा सकती है। इसकी भाषा में स्थान-स्थान पर 'व्रज' का और यत्र-तत्र 'अवधी' का प्रभाव परिलक्षित होता है। जैसे—

"जन्म मरन गमना गमन ॥ पुण्य पाप सुष षेद ॥ निजस्वरूप में भान ह्वै ॥ भ्रांति विषानी वेद"। १००॥ (पृष्ठ संख्या ६१) में 'भान ह्वै' और 'विषानो वेद' व्रज भाषा का शब्द है। और इसी प्रकार 'शिष्य कह्यो जो तोहि मैं ॥ सर्व वेद को सार ॥ लहै ताहि अनयासही । संसृतिनसैं अपार' ॥१२॥ (पृष्ठ-संख्या १५६) में कह्यो, 'व्रज' का और 'तेहि लहै' आदि 'अवधी' का प्रतीत होता है। इससे ज्ञात होता है कि ग्रन्थकार अवश्य अवध या व्रज के निवासी हैं। टीकाकार ने भी प्राय. ऐसी भाषा का ही प्रयोग किया है। 'यातैं' और 'ताकूं' के प्रयोग का तो बाहुल्य है ही, अन्य सधुक्कड़ो शब्दों का भी प्राचुर्य है।

पूरा ग्रन्थ सात तरंगों में विभक्त है। तरगों के अनुसार निम्न लिखित प्रतिपाद्य विषय हैं—(१) साधन और स्वरूप-वर्णन, (२) अनुबंध विशेषनिरूपणम्, (३) गुरुशिष्यलक्षणम्, गुरुभक्तिप्रकारनिरूपणम्, (४) उत्तमाधिकारो उपदेश निरूपणम्. (५) वेदादि व्यवहारिक प्रतिपादन मध्यमाधिकारी साधन वर्णनम्, (६) गुरु वेदादि साधन मिथ्यावर्णनम्, (७) उतम, महायमक निष्ठाधिकारी वर्णनम्।

ग्रन्थकार दादू मतावलम्बी और दादू के परम शिष्यों में थे। इन्होंने ग्रन्थ में यत्र-तत्र गुरु-शिष्य के रूप में अपने को दादू के साथ संकेत किया है। जैसे—'दादू दिनदयाल जूसतसुषपरमप्रकास। जामैं मति की गति नहीं सोई निश्चल दास।' तन मन धन बानी अरथी जिहीं सेवत चितलाय, सकल रूप सो आप हैं दादू सदा सहाय' और "ओंकार को अर्थ लिपि भयोकृतार्थ अदृष्टि पढ़ंजुयहितरङ्ग तिंहि दादू करहुसुद्रष्टि' में दादूदास के नाम की बार-बार चर्चा की है। यद्यपि ग्रन्थकार के नाम की चर्चा न हों तो ग्रन्थ के आदि में और न अन्त में हुई है; किन्तु दो स्थानों में नाम मिले हैं, जो अनुसन्धायकों के लिए विवेच्य है। पृ० ३३

में (जा मैं मति की गति नहीं सोई निश्चलदास) और पृ० १३० के सोरठे के अन्तिम चरण में—('सूत्र को वनाइ जाल बन को बिभाग कीन्ह करन प्रनामताहि निश्चल पुकारिको') दो बार 'निश्चल' नाम आया है, जो स्पष्टत: ग्रन्थकार के नाम को ओर संकेत कर रहा है। ग्रन्थ में, दोहे, चौपाई, सोरठे के अतिरिक्त इन्द्रवज्रा आदि छन्दों तथा दृष्टान्त, परिसंख्या आदि अलंकारों में रचना की गई है। पृ० सं० १३१ में अर्द्ध दोहा—'सतचित आनंदएकतू ब्रह्म अजन्म असंग'— में रचना है।

(३) ग्रन्थ की लिपि प्राचीन, किन्तु स्पष्ट है। लिपिकार के सम्बन्ध में प्रारम्भ, मध्य या अन्त में कोई भी संकेत नहीं है। लिपि पत्थरों के अक्षरों की (लीथो) जैसी है। लिपिकार ने दीर्घ ऊकार की मात्रा को अक्षरों के नीचे न देकर बगल में (अक्षर के बाद) दिया है।

(४) ग्रन्थ की टीका अत्यधिक विस्तृत और जटिल है, किन्तु टीकाकार का श्रम श्लाघनीय है। मूल ग्रन्थ को टीकाकार ने बहुत बढ़ा दिया है। ग्रन्थ विवेच्य और पठनीय है। ग्रन्थकर्त्ता का निश्चलता दास नाम भी नवीन-सा प्रतीत होता है। ग्रन्थ की विवेचना के पश्चात् दादूपन्थ के साहित्य पर नवीन प्रकाश पड़ सकता है। यह ग्रन्थ अनीसाबाद, (गर्दनीबाग, पटना-निवासी अखौरी गुरुशरण प्रकाश के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

३२. शब्दावली—ग्रन्थकार—कबीर साहब। लिपिकार—साधुप्रकाश अखौरी। अवस्था—अच्छी। पृ० १८६। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। आकार ६$\frac{1}{2}$"×८$\frac{1}{3}$"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपि-काल—×।

प्रारंभ—"संतो गगन मंदिल लागि तारा ॥
खोलंगे कोई संत जोहरी, कोटिन मद्ध बिचारा ॥ टेक ॥
प्रथमहि सोहंग ध्यान लगावे, ताबिच सुरत करे पैठारा।
तब आगे की संध दीजिए, ता भीतर निज रुप हमारा ॥१॥
मंदिर भीतर पुर्ष बिराजें, कुल्फ तीन तहां अगम अपारा।
ताकी कुंजी गुरु गम माहीं ज्ञान ग्रन्थ सो न्यारा ॥२॥
जुग भर जोग समाध लगावे, कोटिन करे बिचारा।
पुर्ष रूप कबहुं नहीं दरसे, जो गुरु मिलैं न सारा ॥ ॥
जब गुरु बहिया मिलै कृपानिध, निज का भेव सुधारा।
तबे हंस को मारग सुझे, खोले कुलुफ केवारा ॥४॥"

अन्त—"रादेवगंधार ॥
मनुआ राम के ब्योपारी अव कै खेटाभरकतो लादो बनीज कीयो ते भारी ॥
पांच चोर सदा मगरोके इनसे करतु छुटकारी ॥
सतगुरु नायक के संग मीली चलुलादस कैन हारी ॥

छोटे गमार मारग माही मोलेगे एक कनक एक नारी ।।
सावाधान होइ पेंचन खइये रहो आप सम्भारी ।।
हरी के नगर जाइ पहुचोगे पइहो लाल अटारी ।।
चरनदास ताको समझावे राम न मोले रामवासी ।।''

विषय—कबीर-साहित्य ।

टि०— यह ग्रन्थ कबीरदास, धर्मदास और चरणदास प्रभृति सन्तों के शब्दों और वाणियों का संग्रह प्रतीत होता है । यह कोई मौलिक ग्रन्थ नहीं कहा जा सकता । अखोरी साधुप्रकाश ने अपने जीवन-काल में कबीर-सम्बन्धी भिन्न-भिन्न पदों को एकत्र कर दिया है । इसम कई पद प्रकाशित प्रतीत होते हैं । कबीर साहब के बाद एक परम्परा-सी रही है कि कबीरपन्थी साधुओं ने दार्शनिक पदों को रचकर अपनी ओर से उसमें कबीर साहब का नाम जोड़ दिया है । यह ग्रन्थ भी उसी प्रकार का प्रतीत होता है ।

ग्रन्थ में लिपिकार का संकेत नहीं किया है । लिपि स्पष्ट और सुन्दर है । यह ग्रन्थ अनीसाबाद, (गर्दनीबाग पटना) निवासी अखोरी गुरुशरण प्रकाश के सौजन्य से प्राप्त हुआ है ।

३२. कबीर भानुप्रकाश—ग्रन्थकार परमानन्ददास । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन जीर्ण-शीर्ण । पृ० सं० ५४२ । प्र० पृ० पं० लगभग—२३ । आकार—६"×९$\frac{1}{4}$" । भाषा हिन्दी । लिपि—नगरी । रचनाकाल-ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी, सं० १९३५ वि० । लिपिकाल—सं० १९३९ वि०, १८८३ ई० ।

प्रारम्भ—'ॐ सत्तनाम । अथ लिख्यते ग्रन्थ श्री कबीर भान प्रकाश प्रथम पूर्वार्धं भाग जम्बूद्वीप भरथ खंड को सर्वं रात्री धर्मानि कथा बर्नंनं कबीर भानु अस्त संध्या बंदन छन्द सिखरणी ।

कबीरंभानंभींकरनिकरज्ञानंत्रिधिमयं
परस्थाने थीरंजगत गुरपीरं निधिनयं
महातेजोरासं बदनबदनासं नृप नृपा
प्रतापं तापंत दनुजः दलदापंतव कृपा १
तरंतं तरंतं लहतजनसारं वसुमती
महत्वं पारंतं अकथित अनंतंपसुपती
सुराधीसं धीसं हियतिमिपीसंजगजये
भवं भावं भंगेरतिग्करुनामय पगपगे २
जनंकंजरं......दर सभ्रमभंजंसतहितं
निहारं हारंहातिमिरहरपारंगतछितं
सतीसूटंसातं,बिलग बिलगातं दिनकरा

जती भोगं भागंगत विगतभाग किलकरा ३
प्रजा पीड़ा व्रीडाधनतिमिर कीडामहिमहाहते
मुद्रानिद्रा समदमन क्षुद्रागतिगहा
सतो संगंरगंबसतप्रसंगंभसकरा
उमंगं अंगं ये कसमस अनंगं तसकरा ४
नमस्कारंकारं क्रमरद्भ्रमकारंककृते
बबंबंदेवंदेभनंत भवफंदेबबवृते
रमं रामंरम्यं ररतररकल्यान करनं
प्रनम्यंतोपीष्टे परमपरमीष्टेन्नवरनं
इति सिखरनीछंद

अथ कबीर भान वियोग सवैया—

सत नाम व्रतीवरसंतसती दिन अंत भयेभगवंत पयाना
जगनैन महा सुख दैनदुरे धरिधीर धरोपदपंकजध्याना
दृढ़ इंद्रिनद्रौन तेमौनगहो थिर आसन हो अनुसासन माना
यहिसं धिसचेत-सतो गुनते सतधारहि ये सत रूप समाना १"

अन्त—जिनको नेह नाथ चरणन की और उपायन विसरणन को
लाज करे अपने परणन की दीन देखिदेनिजुपुरवासा ५
आरति हंस अमरपुर गाये इच्छा मूल अकूर सुभाये
सहज सोहंग अचिंतं पै आये अक्षरहू बने जाको दासा ६
सुरनर प्रभु आरति कीने धर्मदास गरतीन सहीते
गावै संत महंतसप्रीते परमानन्दबितोजमत्रासा ७ इति आरती ॥

विषय—कबीर-साहित्य।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ कबीर साहब के विचारों का एक लघु संग्रह तो है ही, साथ ही ग्रन्थकार ने इसमें अपने मौलिक विचार भी दिये हैं। जहाँ कबीर के दार्शनिक पक्ष की उत्तम विवेचना की गई है, वहाँ ईसाई मुहम्मदी, कादियानी, स्मार्त्त, शाक्त, शैव वैष्णव, वाममार्गी आदि धर्मों और विचारों की भी परिचयात्मक अलोचना की गई है। ग्रन्थ विवेच्य और पठनीय है। ग्रन्थकार ने ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—

सत गुरु की दायामय पूरो लिख्यो धर्म जो भूतल भूरी
रच्योजोतिजुहि यहुवां हुलासा ग्रन्थ कबीर भानु प्रकाशा
पंडित जनसे विनय हमारी भूलचूक जोकतहु निहारी
टूटे अक्षर जह लखिपाई सो सुधारि कै पढ़ै बनाई

इसमें ग्रन्थकार ने, 'लिख्यो धर्म जो भूतल भूरी' कहकर स्वयमेव समस्त धर्मों के परिचय के सम्बन्ध में ग्रन्थ का अभिप्राय व्यक्त किया है। ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर कबीर, बुल्लाशाह प्रभृति विद्वानों तथा

योगवाशिष्ठ, वेदान्तदर्शन, न्यायदर्शन आदि की उक्तियों को साक्षी रूप में रखकर अपने मन्तव्य की पुष्टि की गई है।

जैसे -- पृष्ठ-सं० ३८४ देखिए—

"भक्त कबीर बचन० साक्षी०—'कबीरकबीर तु क्या करो साधो आपन शरीर
पांचो ईद्री बश करो तुमहीदासकबीर०'

बुल्लेशाह बचन०—'काम क्रोध लोभमोह हंकार पंजों कछबोजूदोमार
इन्हा करनी है बदयो बुल्ला आपे अल्ल हो,

रामानंद बचन० (पृष्ठ सं०--१७२)—पढ़ि पढ़ि राते गुनि गुनिमति हृदय सुद्धन होई०

जबूर में अैऊब के वृत्तांत में—"चतुरन की चतुराइ को प्रभु मिथ्या करडार
निजुमनोरथ निजु करन ते सके न कबहु संवार
विद्वन को चातुरी मैं चाखत सदा फसाय
टेढे तिरछे लोग मत सिर की बल उलटाय"

ग्रन्थकार ने ग्रन्थ के अन्त में ग्रन्थ और अपने विषय में लिखा है—

"सम्वत उन्निस सौ पैतीसा शुक्ला यकादशी लिथि दीसा
मंगल अरु ज्येष्ठ महीना तादिन ग्रन्थ समापति कीना
महि पंजाब देश के माही शहर फिरोजपुर यक आही
नग्रमुक्तसरतहयक अहई दोदा ग्राम निकटतेहिकहई
ताहि ग्राम में जब आसीना भजनध्यान प्रभु के लीलीना
ग्रन्थ रचन गुर आज्ञा पाई लिख रच धर्म कथा समुझाई
जेते अक्षर लिखे बनाई जो कोई घटि बढ़ि नाहि मिलाई
सोगुर सन्मुख लिखा भरिहे भिन्य भेद जो कोई करिहै इति····

ग्रन्थ की लिपि पत्थरों के अक्षरों (प्राचीन लीथो) की प्रतीत होती है। लिपि स्पष्ट है। यह ग्रन्थ अनीसाबाद (गर्दनीबाग, पटना)-निवासी अखौरी गुरुशरण प्रकाशजी के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

३४. **रासमाला**—ग्रन्थकार—केशवानन्द गिरि। लिपिकार—लक्ष्मण तिवारी। अवस्था—अच्छी, प्राचीन देशी कागज। पृष्ठ—१४। प्र० पृ० पं० —लगभग २४। आकार -५" × ६१/६"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—सं० १९४६ वि०।

प्रारम्भ—चूचचोला० लिलूलिलोअ १ मेषंस्वामोभौम ॥ इ उ ए ओ वा वि वु वे वो ॥ वृष रासि क कि कु घ ङ छ क को ह मिथुन हो हु हे हा डाडी डु डे डो कर्क म मि मु मे मो टा टी टु टे सिंह टीपपीपुषणठेपेपो कन्या ररिरुरेरोतातीतूते तुला ७ तो न निनु ने नो जाजिजु वृश्चिक ८ जेजोभभिभुधफुठभे धन ९ भोजजो पीपु षेपो गगि मकर १० गुगे गोशा सिशुशेशोद कुंभ ११ दिदुथझ ञा देदो चची मीन १२ अथ प्रथमे मेषरासि वर्णन।

॥ दोहा ॥

मेषरासिहै जाहि किताकर मीठ सुभाव
अन्तर झूठ फरेव बहु बाहर कपट बनाव ८

अन्त— सुनो नवे वृश्चिक का हाल। सफर करैं बहुमाल न पावै।
खर्चं खाय खालि घर आवै। दसंमें धन जूवो करी करैं॥
तहनुकसान उठाना परै॥ एकादशें मकर का भेद।
मंनकि पुजै सकल उमेद। द्वादस कुंभ जो बैठे पास
सो दुश्मनी करैगा खास। मुख पर करै खुशामद तेरो समान ठीक मैं॥ पतीतखरा॥
बुडत ही मझधार सिंधु भव जल ते बेड़ा पार करो॥
कर्मं प्रधान विश्व मे जो ता कृपा करो यह अर्ज कहौं॥
तु मे कर्न नाबाधैं है॥ अपकर्म कर्मं सर्वं तुमी गहो।
जो करनी जोकी सोई भोगै तो एक नाम निहोर सुनी।
मैं तो हहो अवधुत संन्यासी सुभ औ सुभ न एक गुनो॥
इति श्री योतिषसार निर्णय भाषा छन्द में रासि माला वनाइ।
कशवानन्द गीरी संन्यासी अवधूत मे ठिकाना वड़ी गैवो॥ शुभमस्तु

विषय—ज्योतिषशास्त्र।

टिप्पणी—(१)—ज्योतिषशास्त्र से सम्बन्धित दोहा, चौपाई और सोरठा में लिखित यह ग्रन्थ बड़ा ही अच्छा है। इस ग्रन्थ में सभी राशियों के संक्षिप्त परिचय के अतिरिक्त उनके फलाफल, राशियों का एक-दूसरे से अन्योन्य-सम्बन्ध, राशिस्वामी का प्रभाव तथा राशि के द्वारा होनेवाली विपत्तियों के निराकरण का समुचित समाधान अत्यन्त संक्षेप में दिया है। रचना सरल और पठनीय है।

(२) ग्रन्थ की लिपि पुरानी और अस्पष्ट है। लिपिकार देवली के निवासी हैं। जैसा कि 'शम्वत १९४९ में पुस्तक लींषीतं लक्षुमन तिवारी देवली…।' लिखा है। लिपिकार ने सर्वत्र 'ख' के लिए 'ष' और 'ज' के लिए 'य' का प्रयोग किया है। 'ढ' की आकृति 'ठ' जैसी है। 'स' के लिए 'श' का व्यत्यय तो प्रायः संपूर्ण ग्रन्थ में है। यह ग्रन्थ पटना जिलान्तर्गत मोकामा के शंकरवार टोला-निवासी केशवप्रसाद शर्मा के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

३५. ज्ञानरतन—ग्रन्थकार—दरियासाहब। लिपिकार—बालकदास। अवस्था—अच्छी, पुराना, मोटा देशी कागज। पृष्ठ—१०८। प्र० पृ० पं०—लगभग ४०। आकार—९" × ६½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—अगहन शुक्ल-पंचमी, सन् १२१६ साल।

प्रारम्भ— सतनाम। गरथ ग्यान रतन भाखल दरीआसाहब सतगुर सुक्रीतप्रक उवारन साहब बंदीछोर प्रखपुरान साहब जींदा साहब प्रखपुरान साहब ग्यानरतनमनीमंगल बीमलसुधानीजुनाम करोवीवेकवीचारी के जाये अमरपुरधाम।

धीमलनाममनीमश्तकटीका बीनाबीबेक भेखसभफीका
नीरखीनामनीजुप्रेमसमेता काठीकर्मकलीमंगलहेता

अन्त— छंद नाराच। हौशुखसागरशभगुनआगर नीगतीशभौवरनी
शश्तपत्तालही जेवोदीनेसदीनहोधरवी जलमेथलमें
कालवीखंजनमैलौं शंतवृजन की फीकी करनी
दारीआदासदेखीवीचारी कहा जीमीशालीशुखेजलहोभरनी।'
शोरठा। जेबोध नीज लभा: नामवीमलगुनवीमल है
समुझीपकरीऐबाही भवनाहीबुरेजहाजवह

विषय— निर्गुण-दर्शन।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्रसिद्ध संत दरियासाहब का है। इसमें श्री दरियासाहब के दार्शनिक विचारों का संग्रह है। ग्रन्थ के लिपिकार बालकदासजी ने ग्रन्थ के अन्त में दरियापन्थ के अन्य अनेक साधुओं के नाम तथा परिचय देते हुए लिखा है—"गरंथ शपुरंन लीखलभइल-ग्यानरतन सतगुरुदरीआसाहब जो भाखलसो भाखलबालकीस्नदास दरीआसाहब के फकीर अपना दशतका साहबंदभइल साहब का सलाम परुमदस्तजोरीपर। .... मीती अगहनसुदीपंचमी सुभदीन बुध के पुरनगरंथभइल। गंगादास की हार.........।" इससे दरियासाहब के बाद उनके दो शिष्य बालकृष्णदास और गंगादासजी का पता चलता है।
यह ग्रन्थ दीवान मुहल्ला (दुल्लीघाट, पटनासिटी)-निवासी मोतीलालजी 'आर्य' के द्वारा प्राप्त हुआ।

३६. आत्म-प्रबोध—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था जीर्ण-शीर्ण, प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०-६५। प्र० पृ० पं०—लगभग २४। आकार—६"×१२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ— जजुरवेद की साखा द्वारा सोसागर में राम आत्मा को चाहता है। सो इस आत्मा आपणो आप प्रसिद्ध की वेदने भी उपमा भारी कही है॥ सो अब आत्मा हमको भूल गया है॥ सो तीसकी ग्यातवासतेमतन्न कीया चाहता है। शिष्योवाच। हे गुरो आगे प्राथने यह कहा था॥ जो राम आत्मासुख तुरीया है सोए तेरा स्वरूप है॥ सो अब जिस प्रकार इस अथरो आप सुधस्वरूप को जाणे। सोही प्रकार आप क्रिपा जणाईये। श्री गुरोवाच। हे शिष्य जो तुम्हारा आप सुधस्वरूप है सो तिसको तुम ऐसा भूला है। तीन इस्थानो विषे आयके। सो जिस प्रकार इनिने तुमको जीवभावविषे कीया है सोसुण॥ सो तीन स्थान यह जाग्रत सुप सुषोप्त॥ सो सात को.........।

अन्त— स्वान की न्यायी भटकता रहता है। सोतिसपुर्वकों...........
की न्यायी कछू खबर नहीं पड़ती इस ब्रह्मांड की।

सो इस संसार बिषेसुभक्या है असुभक्या है।
सोय सुकी न्याइी आयके फिर चला जाता है ।।
सो इसलेय ब्रह्मांड ध्यान के आसरे है ।।
सो जिस पुर्षं को इसका ज्ञान नहीं ।। सो उसलेखे कछू है नही ।।
हे नारद सो इस ध्यान का आत्मा भीभूओर है ।।
हे प्रभो सो अब इस ध्यान का आत्मा और कौन होवेगा
सोचित की इकागरता बिना कछू सिध नहीं होता ।।

विषय—दर्शन ।

टिप्पणी यह ग्रन्थ खण्डित है । प्रारम्भ में एक पृष्ठ नहीं होने के कारण ग्रन्थकार और लिपिकार के नाम तथा काल आदि का पता नहीं चलता है। ग्रन्थ के मध्य में भी यथासम्भव कहीं भी इनका संकेत नहीं मिलता है। ग्रन्थ भागवत महापुराण के आधार पर लिखित प्रतीत होता है। ग्रन्थ में गुरु-शिष्य-संवाद के रूप में, ईश्वर, जीव, आत्मा, मृत्यु, मोक्ष, जीवन, बन्धन, पाप, पुण्य और कर्म-अकर्म की सुन्दर विवेचना की गई है। बीच-बीच में दृष्टान्त देकर प्रतिपाद्य विषय को समझाया गया है। यत्र-तत्र, नारद, उद्दालक, श्वेतकेतु, जावालि आदि ऋषियों के नाम तथा परस्पर के वार्तालाप की चर्चा है। ग्रन्थ मननीय तथा अनुसंधेय है। ग्रन्थ की भाषा सधुक्कड़ी तथा पंजाबी से मिलती-जुलती है। ग्रन्थ में 'न' के लिए 'ण' का तो प्रयोग है ही 'इ' और 'ई' के लिए ह्रस्व और दीर्घ मात्रा लगाकर 'इ,' 'ई' का प्रयोग है। विषय का प्रतिपादन गद्य में किया गया है। ग्रन्थ की लिपि, अस्पष्ट और प्राचीन है। यह ग्रन्थ दहियावाँ (छपरा)-निवासी अवधेन्द्रदेव के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

३७. अमुसागर—ग्रन्थकार—धर्मदास । लिपिकार—रामभरोसदास । अवस्था—अच्छी । प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज । पृष्ठ-सं०—८२ । प्र० पृ० पं० —लगभग ३२ । आकार—६½" × ८½" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल —प्रसिद्ध । लिपिकाल—भाद्र शुक्ल-द्वादशी । सं० १३०८ साल ।

प्रारम्भ—"सतसुक्रीत आदअदली अजर अचींत प्रुसमुनींद्रकरूनायेक वीर के दासा धनीध्रमदास के दाआसकलसंतकेदाआसेलीखते ग्रन्थ अमु-सागर—

।। दोहा ।।

ध्रमदास सीरनाऐके वीने कीन्ह करजोरी ।
तुम्हवहीओसिभजीव कहकीएअनुग्रहमोरो ।।
तुअचरननवलीहारी जुगलेजातु अभालह ।
जेहीवीधी हंस उबार मरदनकीन्होकालकह ।।

॥ छन्द ॥

अ.दीब्रह्म आनन्दअलखसर्वंव्यापीअजवीजं हो ।
आनन्दस्वामीसागरं तुम्हप्रपीकासअभयं ।
अंधजीवअघोरजलके वीचसमभ्रोजलतेर ।
तुम्ह अधमकेगती देनके दासातन ...... ।

॥ सोरठा ॥

हंसराजकहकथा जीव मोर उवेर पंथयहे ।
अमुसागर ग्रंथ सोवरन प्रभुकीजीए ॥

॥ चोपाई ॥

ध्रमदासपुर्संगुन गाउ जुगजुगले ...... नाम सुनाउ ।...... ''

अन्त—' पुसंरूपवरनोअतीपावन । एके कुरखीक्रोटोलजावन ॥
हंसरूपसोभावहुभाती । खोडसभानुहंसकेक्रांन्ति ।
मुक्तीअमरपदजहमावासा दरसनपाऐहोऐअघनासा ॥
ओसेघरसा ... नीवर कीन्हा । पहुंचेलोकवंसजीम्हचीन्हा ॥
आदीअंतसागरमेंभाजा । अक्रीतचारीसुरतीजीन्हराजा ॥
भोनी ....जीवजाई । जम्हसीवमरदोलौकपहुँचाई ॥
इतिकथापावनअतीसोहावनअमुसागरवरननकीवो
जेहीकरहीभंजनसंजन अकथवीचीत्रचीतघरो ॥
खंडमनोहरघाटसाजीसीठिलगाई चढ़ेहंसतेहीबाट सुखसागर
पहुँचे सही इती ग्रन्थ समाप्तः ।''

विषय—दर्शन । निर्गुण-साहित्य ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ चोदह खंडों में है । इसमें जीवन, मोक्ष आदि दार्शनिक विषयों की निर्गुणात्मक विवेचना की गई हैं । कथोपकथन के माध्यम से विषय का प्रतिपादन किया गया है । पूरे विषय को एक हंस के द्वारा कहलवाया गया है । ग्रन्थ विवेच्य और पठनीय है । यह ग्रन्थ प्रकाशित-सा प्रतीत होता है । ग्रन्थकार धर्मदासजी ने इसे बड़े ही रोचक ढंग से लिखा है । प्रारम्भ में आदिपुरुष के दर्शन होते हैं । पश्चात् आदिपुरुष के यहाँ से सद्गुरु अपने सन्देशवाहक 'हंस' को भेजते हैं । वह हंस इनके सभी प्रश्नों के उत्तर के अतिरिक्त साधुओं के आचार-विचार, निर्गुण ब्रह्म, कलियुग में जीवन बिताने की रीति आदि विभिन्न विषयों पर अपना विचार व्यक्त करता है । पृष्ठ सं० ५, ६, ७, ८, और ९ में हंस ने अपना परिचय दिया है और अपने-आपको कबीर के रूप में प्रकट किया है—'अमरदेह हंसा तेही पावई' सतगुरु अमर पुरुष के पास अनेक हंस (जीव) रहते हैं—

"सुत उसपत पुर्सं जब कीन्हा । स्वासा सब्दते सबकुछ कीन्हा ।।
अछयदीप ऐक गुप्त रहाई । .... ।।
तीन्हकेबहुतजबीहैसाथा जीवनमाथदोआवाहाथा ।।"

आगे लिखते हैं—"क्रोटीहंसाताहांमाथनवाई । नामकबीरहंसरजवारा ।
जीव चवानदीन्ह जग आई । जब तुम्हार कीन्ह बहुताई ।
तब तुम्ह नींद्रा जागा स्वामी । हंसहीकोलेगऐ सुरधामी ।।"

हंस अपने निवास-स्थान के विषय में कहता है—
"दीप ऐक मानीकपुर गाउ । आदीपुर्संजाहाआपुरहाउ ।।
रूपरंग तीन्ह कछु नाही । वरनत वचनवने कछु नाही ।।
हीराछत्रामाथेपरछाजे । अनहदधुनी ताहाअतिप्रोमलागे ।।
क्रोटीन्हरविऐकरोमलखाही अमीसरूपहंसमहवीराजही ।।"

आगे और भी स्पष्ट करते हुए लिखा है—
"उत्तर दिशा लोक कहे भाई । अगमपुर्सजाहाआपुरहाई ।।
ताकेनाम पावप्रेमाना । क्रोटीन्हमध्यहंसकोई जाना ।।
तसगुरुमीलि जेहो देही लखाई । सुरतिनीरंतरध्यानबताई ।।
मकरतारजाहालागें डोरी । पहुँचे हंसनामकीसोई ।।
ताहीलोक के नाम अपारा । खोडस नाम ताहा अनुसारा ।।"

ये सारी बातें हंस द्वारा कही जाने के बाद धर्मदासजी ने कहा है—
"सब्द तुम्हार सुनत प्रोम लागा । तुअदरसनपामदभागा ।।
अकथकथासुनीचीतमम मोहा । तुम्ह पारस हमहेजीमीलोहा ।।
आगे और कहो मोही स्वामो । चरन गहो प्रभु अन्तरजामी ।।

इसके बाद कथा का विस्तार प्रारम्भ होता है और हंस अपने पूर्वजन्म की बातें करता हुआ 'सत पुरुष' को 'हंस उबारण' को संज्ञा देता है। इसमें एक 'कष्टम पंछो' की कथा के माध्यम से 'पापी जीव' के जीवन पर संकेत किया गया है। स्थान-स्थान पर ब्रह्म' पुरुष को निर्गुण सिद्ध किया है। ग्रन्थ बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है।३१

ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। यह ग्रन्थ कबीर-मत के वचनवंशीय मठ के महंथ आचार्य बलदेवदासजी, रोसड़ा (दरभंगा) से प्राप्त हुआ।

३८. विचार-गुणावाली—ग्रन्थकार—कृष्णकारख दास । लिपिकार—श्यामदास । अवस्था—अच्छी, प्राचीन । देशी कागज । पृष्ठ-स०—२४ । प्र० पृ० पं०—लगभग २८ । आकार—७$\frac{1}{3}$" × ७" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ— 'सतनाम सत सूक्रीत आदी अदली अजरअचोन्तपुरुसमुनीन्द्र करुनामेक-बीरवनीध्रमदासवंन्दीछोरश्रस्नुदास सकल सन्त के दआ से लीखते ग्रन्थ विचार गुन्ण।

साखी ।।

"वीवधवीचारऐइग्रन्थ है । सुनोसंन्तचीतलाइऐ ।।
औरग्यानबहुवादहे । सोतोहीकहीबुझाऐ ।।
सबदवीचारजोबुझीहै । ताकोहीरदैअगाध ।।
और पाखंन्डी नीन्दा करैं । साई प्रणम्ह चान्हऐ ।।"

अन्त— "गुरुत्राता ऐह जगत्र में । ताहीसरीसनेकोऐ ।।
पीरपरावीनभाव से । पारलगावहीसोऐ ।।
इतीस्रोग्रन्थवीचारगुन्ण समापत ।"

विषय— कबीर—साहित्य ।

टिप्पणी— यह ग्रन्थ धर्मदास जी के द्वारा कबीरसाहब द्वारा किये गये प्रश्नों के उत्तर के रूप में लिखित है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही—
'ध्रमदासअरजीकरैसुनिऐपुरुवपुरानकौनविधिहमपाइहीसाहवतुम्हरे ग्यान बन्दीछोरअधीरपनकहोऐक्रीपाकरीसोऐजीकछुभग्तीमुलहैसोदीजेहमसोऐ । धर्मदास जी द्वारा किये इन प्रश्नों के उत्तर में 'परम पुरुष' ने पहले अपना स्थान बताया है। उसके बाद आगे की कथा में 'गुरु' का महत्त्व, अनहद नाद, सुरति, ध्यान आदि की चर्चा की गई है। ग्रन्थ ध्येय है। इन ग्रन्थों के प्रकाशन और अनुसंधान से संभव है, कबीर-परम्परा के साहित्य में कुछ वृद्धि हो। ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। इसके साथ एक ही जिल्द में दो और 'त्रियाबोध' तथा 'आदि उत्पत्ति' नामक लघुकाय ग्रन्थ सम्बद्ध है। यद्यपि ग्रन्थ का रचना-काल और लिपिकाल का स्पष्ट संकेत नहीं है तथापि ग्रन्थ के प्रारम्भ में '२ फागुन सं० १३१४ साल आरम्भ कीआ' तथा 'त्रियाबोध' के प्रारम्भ में '६ फागुन स० १३१४ साल' लिखा है और 'आदि उत्पत्ति' के अन्त में '१४ फागुन सं० १३१४ साल' लिखा है। किन्तु यह प्रतीत होता है कि लिपिकार ने लिपि का समय लिखा है। ग्रन्थ की भाषा पूर्वी अवधी है। सधुक्कड़ी भाषा का प्रचुर प्रयोग किया गया है। यह ग्रन्थ रोसड़ा (दरभंगा) के वचनवंशीय मठ के महन्थ आचार्य बलदेवदास जी के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

३६. विनयपत्रिका— ग्रन्थकार- गो० तुलसीदासजी। लिपिकार — × । अवस्था—प्राचीन, जीर्ण-शीर्ण। हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१५६। प्र० पृ० पं०—लगभग ४२। आकार—६"×१०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकार—× ।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः राग बिलावल ।
गाइए गणपति जगवंदनशंकरसुअनभवानीनंदन टेक
सिद्धिसदनगजवदनविनायक कृपासिंधुसुन्दरसबलायक ।
मोदकप्रियमुदमंगलदाता । विद्यावारिधिबुद्धिविधाता ॥
मागततुलसीदासकर जोरे । वसहिंरामसियमानसमोरे ॥ १ ॥
दीनदयालदिवाकरदेवा । करँमुनिमनुजसुरासुरसेवा टेक
हिमतमकरिकेहरिकरमाली । दहनदोखदुखदुरितरुजाली ॥
कोक कोकनदलोकप्रकासी । तेजप्रतारूपरसरासी ।
सारथिपंगुदिव्यरथगामी । हरिशंकरविधिमूरतिस्वामी ॥
वेदपुराणप्रकटजसजागैं । तुलशीरामभक्तिवरमागै ॥ २ ॥"

अन्त—'सकलसभासुनिलीउठी जानिरीतिरहीहै ।
कृपागरीवनेवाजकी देषतगरीवकीसहसावाहगही है ॥
बिहँसि राम कह्यो सत्य है सुधि मैं हूँ लहीहै ॥
मुदितमाथनावतवनीतुलसी अनाथकीपरीरघुनाथसहीहै ॥ २७८ ॥
इतिश्री गोसाईं तुलसीदासकृतविनयपत्रिका समाप्त शुभमस्तु ॥"

विषय—तुलसी-साहित्य ।

टिप्पणी—यह गोस्वामी तुलसीदासजी का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। प्रकाशित ग्रन्थों से इसमें यत्र-तत्र पाठभेद प्रतीत होते हैं। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है। यह पत्थर के अक्षरों (लीथो) में लिखा है। इस ग्रन्थ का लिपिकाल स्पष्ट नहीं है, तथापि संवत् १८०६, फाल्गुन शुक्ल-सप्तमी होना चाहिए। मन्नूलाल-पुस्तकालय (गया) में स्थित प्रति का लिपिकाल सं० १८६६ है और नागरी-प्रचारिणी सभा में स्थित प्रति का सं० १८७९ है। यदि यह लिपिकाल ठीक है तो यह ग्रन्थ अबतक प्राप्त सभी ग्रन्थों से प्राचीन है। ग्रन्थ प्राचीन होने के कारण यत्र-तत्र कीड़ों से छिन्न-भिन्न हो गया है। यह ग्रन्थ बजाजा लेन, बाकरगंज (पटना)-निवासी लखनलाल गुप्त द्वारा प्राप्त हुआ।

४०. रामचरितमानस—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। देशी कागज। पृष्ठ-सं० ८१। प्र० पृ० पं०—लगभग ३०। आकार—६⅓" × १०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

॥ दोहा ॥

प्रारम्भ—"गिरा अर्थ जल बीचि सम। कहियत भिन्न न भिन्न।
बन्दौं सीता राम पद। जिनहिं परम प्रिय खिन्न १७ ॥

॥ टीका ॥

कपि पति सुग्रीव ऋक्षराज जामवंत निशाचरराज लंकेश विभीषण और अंगदादिक जो समस्त बानरों का सामज १ सब के सुन्दर

चरण कमलों को मैं बन्दना करता हूँ जिन्होंने अधम शरीर ही में राम पाये २ अब जितने श्रीरामचरण उपासक इस संसार में हुए हैं खग जटायु इत्यादि मृग राजेन्द्र सुर ब्रह्मादि असुर प्रह्लादादि नर अम्बरीष इत्यादि जो निष्काम भगवद्दास हैं तिन सब के चरणकमलों को अभिबन्दना करता हूँ ३''

॥ सोरठा ॥

अन्त—''अस विचारि मति धीर । तजि कुतर्क संशय सकल ।
भजहु राम रघुवीर । करुणाकर सुन्दर सुखद ॥
निजमति सरसि नाथ मैं गाई ।
प्रभु प्रताप महिमा खगराई ॥१॥''

विषय—रामकाव्य ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ खण्डित है । प्रारंभ के चौबीस पृष्ठ नहीं हैं । अन्त में भी कुछ पृष्ठ नहीं हैं । खण्डित होने के कारण प्रारंभ की पंक्तियाँ पृष्ठ-संख्या २५ से लिखी गई हैं । ग्रन्थ की टीका अच्छी है । टीकाकार शुकदेवजी हैं । बालकाण्ड के अन्त में लिखा है 'इति श्री शुकदेव भणित मानसहंस नाम भूषण बाल-कांड संपूर्ण शुभम्'' टीका की भाषा ब्रजभाषा से प्रभावित मध्यकालीन हिन्दी है । ग्रन्थ में यत्र-तत्र पाठभेद भी हैं । ग्रन्थ प्राचीन पत्थर के अक्षरों (पुरानी लीथो) में लिखित है । यह ग्रन्थ पूर्णिया जिले के कस्बा ग्रामस्थित गदाधर-पुस्तकालय के सौजन्य से प्राप्त हुआ ।

४१. रामायण—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना मोटा देशी कागज । पृष्ठ सं०—४६३ । प्र० पृ० पं०—लगभग २२ । आकार—८"×११३/४" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—श्रावण कृष्ण-पंचमी; सं० १८३६ ।

प्रारम्भ—''श्री गणेशाय नमः ॥ अथ बालकांड लिख्यते ॥

॥ श्लोकाः ॥

वर्णानामर्थसङ्घानांरसानां छंदसामपि ।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे बाणीविनायकौ ॥१॥
भवानी शङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ॥
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरम् ॥२॥
वन्दे बोधमयं नित्यं गुरु शंङ्कररूपिणम् ॥
यमाश्रितोहिवक्रोपि चन्द्रः सर्वत्र बंद्यते ॥३॥
सीताराम गुणग्राम पुण्यारणय विहारिणौ ॥
बन्दे विशु विज्ञानौ कबीश्वरकपीश्वरौ ॥४॥

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ।।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोहं रामवल्लभाम् ।।५।।
यन्मायावशवर्तिविश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवा: सुरा
यत्सत्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रम: ।।
यत्पादप्लसेकमेवहिभवाम्भोधस्तितीर्षावतां ।
वन्देहंतमशेषकारणपरं रामाख्यामीशंहरीम् ।।६।।
नानापुराणनिगमागम सम्मतंय—
द्रामायणे निगदितं क्वाचिन्यतोपि ।।
स्वान्त: सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा
भाषानिबन्धमति मञ्जुलमातनोति ।।

।। सोरठा ।।

जेहि सुमिरतसिधिहोइ । गणनायक करिवरबदन
करौ अनुग्रह सोइ ।। बुद्धिराशिशुभगुणसदन ।।१।।
मूक होइ वाचाल । पंगु चढै गिरिवरगहन ।
जासु कृपासु दयाल । द्रवौ सकल कलिमल दहन ।।२।।"

।। दोहा ।।

अन्त—"मो सम दीनन दान हित । तुन समान रघुवीर ।।
अस बिचारि रघुवंशमणि । हरहु विषम भवभीर ।।२२२।
कामिहि नारि पियारि जिमि । लोभिहि प्रियजिमिदाम ।।
तिमि रघुनाथ निरंतर । प्रिय लागहु मोहि राम । २२३।।

।। श्लोका ।।

यत् पूर्वं प्रभुणाकृतं सुकविना श्री शम्भुना दुर्गमं
श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्राप्त तु रामायणम्
मत्वातद्रघुनाथनाम निरतस्वांतस्तम: शान्तये
भाषाबद्धमिदं चकार तुलसी दासस्तथामानसं ।।१।।
पुण्यं पापहरं सदाशिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मायामोहमलापहं सुबिमलप्रेमालम्बुपूरं प्रभुं ।।२।।
श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदंभक्त्यावगाहन्तिये
ते संसारपतङ्ग घोर किरणैर्दह्यन्ति नो मानवा:

इति श्री रामचरित मानसे सकलकलि कलुप विध्वंसने विमल वैराग्य संपादिनो सप्तम: सोपान: समाप्त: ।। शुभमस्तु ।। सिद्धिरस्तु ।। समाप्तोयं ग्रन्थ ।।"

विषय—रामकाव्य ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ लीथो में लिखा गया है। ग्रन्थ में यत्र-तत्र पाठभेद हैं। ग्रन्थ के प्रारंभ के पृष्ठ जीर्ण-शीर्ण हैं। मुख्य पृष्ठ के ऊपर लिखा है—

"मुकुन्द राम नयनराम भगत ने छपवाया"। कागज प्राचीन है। यह ग्रन्थ श्री राजनन्दन शर्मा, चिन्तामणिचक, मोकामा (पटना) के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

४२. रामचरितमानस—ग्रन्थकार—गो० तुलसीदास। लिपिकार—×। अवस्था—खण्डित, प्राचीन; देशी कागज। पृष्ठ-सं०—४६१। प्र० पृ० पं०—लगभग ३२। आकार—८"×१२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—प्राचीन कैथी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"गुरुपदरजम्रीदुमंजुलअंजन । नाअनअमीअद्रीगदोषवीभंजन ।।
तेहीकरवीमलवीवेक वीलोचन । बरनौ रामचरीत्र भवमोचन ।।
बन्दौ प्रथम महोशुरचरना । मोहजनीतशंशैशवहरना ।।
शुजनशमाजशकल गुनखानी । करौ प्रनाम सुप्रेम शुबानी ।।

अन्त—"राम अजोध्या छाड़त अइरौ । बात जनावन कहेवोशो कहइ ।।
लछुमनपुरतेगएनोजयामा । चलेआपसुखसागररामा ।।
वोपुलवीछाहशत्रुहन कोन्हा । भूमीवारी नीज पुत्रन दीन्हा ।।
मथुरा देशशुवाहुकी दीन्हा । दुशरेशुत कईवीधतभ कोन्हा ।।"

विषय—रामकाव्य।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्राचीन कैथी लिपि में लिखा गया है लिपि अस्पष्ट है। इसमें प्रचलित (मुद्रित) रामचरितमानस से कई पाठभेद हैं। ग्रन्थ के अन्त में उतरकांड के बाद कुछ भाग अधिक हैं जो संभवतः प्रक्षिप्त 'लवकुशकांड' प्रतीत होता है। अन्त में पोथी खण्डित है। पुष्पिका न होने से लिपिकार के नाम तथा लिपिकाल स्पष्ट नहीं है। तथापि लंकाकांड के अन्त में "इति श्री रामचरीत्रे मानशे शकल-कलीकलुषवीधंशने वीमलवीग्यानशीधारनो नाम खश्टमो शोपान लंका काण्ड शमपुरंन जा देखाशोलोखामम दोखनदीअते पंडीतजनशो-वीनतीमोरी टुटल अछर पढ़व जोरी मीतो अशाढ़ वदी ६ १२६१ शाल वं० ओशरनाथशीघ शा० शोभानगर ...... लिखा हुआ है। इससे ज्ञात होता है कि कोई ईश्वरनाथ सिंह नामक व्यक्ति इस पोथी के लिपिकार हैं। यह ग्रन्थ जोहरी सावजी, कस्बा, पूर्णिया से प्राप्त हुआ। ग्रन्थ के अधिकारी द्वारा ज्ञात हुआ कि उनके पिता मुटाई सावजी ने यह संग्रह किया था। यद्यपि ग्रन्थ में लिपिकाल का संकेत नहीं है, किन्तु जोहरी सावजी ने इसका लिपिकाल लगभग फ० १२६५ साल बताया।

४३. सूर-सागर—ग्रन्थकार—सूरदासजी। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ सं—७३६। प्र० पृ० पं०—लगभग १८

आकार—४" × १०" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—अगहन, कृष्ण १५, सं० १८२५, बृहस्पतिवार ।

॥ रागगौरी ॥

प्रारम्भ—हलरीहलरावैंमाता ॥ बलिबलि जाउघोषसुषदाता ।
जसुमति अपनो पुन्य विचारै ॥ बारबार सिसुवदनुनिहारै ॥
अंगफरकाइअलप मुसकानों ॥ याछविपर उपमाको जानों ॥
हलरावति गावति कहि प्यारे । बालदसाके कौतिक भारे ॥
महरी निरषिमुषहियहुलसानी ॥ सूरदास प्रभु सारगपानी ॥ ३५ ॥

॥ राग कानरा ॥

पलना स्याम हलावति जननी ॥
अति अनुराग परस्पर गावति प्रफुल्लित मगन मुदित नंदघरनी ॥
उमगि उमगि प्रभु भुजा पसारत हरषिजसोमतिअंकमभरनी ॥
सूरदास प्रभु मुदित जसोदा पूरन भई पुरातनकरनी ॥३६॥

॥ राग बिलावल ॥

गोपालमाई पालने सुलाए ॥
सुरमुनि कोटि देवतैंतोसौ देषनकौतिकअंमरछाए ॥
जाको अंतुन ब्रह्मा जानत सिवसनकादिनपाए ॥
सो अबदेषौंनंदजसोदाहरषिहरषिहलराए ॥
हुलसत हंसतकरत किलकारी मन अभिलाष बढ़ाए ॥
सुरजस्यामभगतहितकारननानावेष बनाए ॥ '

॥ रागमारू ॥

अन्त— अति सुष कौसिल्या उठिधाई ॥
मुदित बदन ह्वै सुदिनसदनते आरति साजि सुनित्रा लाई ॥टेक॥
ज्यौं सुरभी वन वसत वछ विनु परवस पसुपति की विहराई ॥
चलीं सांझ समुहाई श्रवतथन उमगि मिलन जननी दोउ आइ॰॥
दधि फल दूव कनक के कोपर साजत सौर विचित्र बनाइ ।
अमी वचन सुनि होत कुलाहल देवव्योम दुंदुभी बजाई ॥
अनेक रंगपट परत पवारे वीथी सुमन सुगंधसिचाई ॥
हरषित रोम पुलकित गदगद ह्वै जुरतिनि मंगल गाथा गाई ॥"

विषय—काव्य । सूर-साहित्य ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ अबतक प्राप्त सभी हस्तलिखित प्रतियों से प्राचीन है। नागरी-प्रचारिणी सभा, बनारस में 'सूर-सागर' की ४ प्रतियाँ हैं जो सं० १८६२, १८७३, १८६६ और १८५३ में लिखी गई हैं। श्री मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) के संग्रहालय में प्राप्त दो प्रतियों का

लिपिकाल सं० १८५७ और सं० १९२४ है। ग्रन्थ खंडित है। बीच के पृष्ठ १०७, १०८ और १११ से ११७ तक तथा २२८, २७८, ३५२, ३८३, ३८८, ३९५, ३९८, ४२२ एवं ४२७ से ४३२ तक नहीं हैं। पृष्ठ सं० ५२६, ५३६, ५४७ ५४८, ५४९ और ५५० भी नहीं हैं। इस प्रकार कुल पृष्ठ-सं० ७४० में ११५ पृष्ठ नहीं हैं।

संग्रह विस्तृत है, अतएव ध्येय है। प्रकाशित ग्रन्थ से कई स्थानों में पाठभेद हैं तथा पौर्वापर्य का विपर्यय भी। संभव है, इसके अध्ययन-अनुसंधान से 'सूर' के कुछ नवीन पद भी प्रकाश में आयें। ग्रन्थ का अन्तिम पृष्ठ नहीं है। लिपिकाल ग्रन्थ के अन्तिम पृष्ठ में ही लिखा था; किन्तु ग्रन्थ के मालिक से वह खो गया। प्रारम्भ के १६ पृष्ठ भी नहीं हैं। प्रारम्भ की पंक्तियाँ १७ पृष्ठ से लिखी गई हैं। ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और स्पष्ट है। लिपि की शैली पुरानी है। यह ग्रन्थ विन्देश्वरी प्रसाद वर्मा, ग्राम मैनपुरा, (दीघा, पटना) के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

४४. **शब्द**—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—सिवप्रसाददास, जोधनदास तथा रामदत्त दास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना कागज; खण्डित। पृष्ठ-सं०—३५४। प्र० पृ० पं०—लगभग १६। आकार—५½" × १०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—वैशाख कृष्ण-षष्ठी, मंगलवार, सं० १९५५ वि० (फ० १३०५ साल)।

सतनाम

प्रारम्भ—स्ब्द के गरन्थ भाख ल दरीया साहब हंस उबारन स्ब्द कबीश्र लीख्यते
काहे के आसन बासन बाधत काहे के पवन पीवै दिन राती।१।

मध्य—धन्य सतगुर सत सब्द बीचारा।
मानुष से देवता जिन्हि कीन्हो मेटेव सकल बिकारा।१।

अन्त—कहं दरीया दरबेस कोई इस्किदा महल मासुक, महबुब जानी।

× × ×

मास बैसाख कीस्न पक्ष, षष्टी मंगलबार
दुइ पहर के भितरे, ग्रन्थ भया तइयार।।

विषय—दरिया साहब का यह सबसे बड़ा ग्रन्थ है। इसमें विभिन्न रागों एवं छन्दों के द्वारा सद्गुरु एवं ईश्वर का माहात्म्य वर्णित है।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ विशालकाय है। कबीरदास के 'बीजक' के समान ही यह ग्रन्थ भी दरिया-पन्थियों में सम्मानित है। विभिन्न छन्दों में ग्रन्थ-रचना हुई है। दरिया-पन्थ के प्रायः सभी दार्शनिक और साम्प्रदायिक

सिद्धांतों एवं मान्यताओं की इसमें विवेचना है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। ग्रन्थ धरकंधा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

४५. (क) ज्ञानदीपक—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—नरहरदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना पतला कागज। पृष्ठ सं०—१६७। प्र० पृ० पं०—लगभग १८। आकार—१०½"×११½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपि-काल—आषाढ़ शुक्ल-द्वादशी। फ० १२६६ साल।

प्रारम्भ— प्रेम जुक्ति निजु मूल है, गुर गमी करो सुधार
दया दीपक जबही बरे, दरसन नाम अधार॥

मध्य— बिनय कीन्ह कर जोरि, सभ भव भर्म नशाइया
बिमल मती भव मोरि, धन साहब दरसन दियो।

अन्त— तहा देखी दरसन मूल, सभ मेटि दोविधासूल
तव गवन भव छपलोक, सभ छुटी जमके शोक॥

× × ×

भयो सपूरन ग्यान, सतगुर पद पावन करो
उबरं संत सुजान, जिन्हि गमि कियो विवेककरी।

विषय— सद्गुरु और संत की वंदना। निर्गुण तथा त्रिगुण ज्ञान-द्वारा मुक्ति। तीर्थ और अन्य पाषंडों का उपहास।

टिप्पणी—ज्ञानदीपक दरिया साहब का अनुपम ग्रन्थ है। आत्मनिरोध, अहिंसा, ईश्वर, माया आदि विषयों पर कुंभज और भारद्वाज के बीच वार्तालाप का प्रसङ्ग दर्शन-जैसे शुष्क विषय को सरसता प्रदान करता है। सुच्छित (दरिया) के विभिन्न जन्मों की कथा बड़े सुन्दर ढंग से लिखी गई है। सृष्टि के सम्बन्ध में शिव-पार्वती-संवाद तथा सत्पुरुष के पुत्रों के विषय में कुंभज और नारद-वार्तालाप बड़े रोचक हैं। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकंधा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त चतुरीदास से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ है।

४५. (ख) दरियासागर—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—नरहरदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना पतला कागज। पृष्ठ सं०—७२। प्र० पृ० पं०—लगभग १६। आकार—१०½"×११½"।

भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—सावन बदी-नवमी, शनिवार; फ० सन् १२६६ साल।

प्रारम्भ— ग्रन्थ दरियासागर मुक्ति भेद निजु सार
जो जन सब्द विवेकिया सो जन उतरही पार॥

मध्य— निस्चै ब्रह्म सत है सारा, निस्चै उतरही भवजल पारा
निस्चै तेहि मिलही करतारा, निस्चै भगति प्रेम निजुसारा॥

अन्त— कोठा महल अटारिया, स्रवन सुनै बहुराग
सतगुर शब्द चिन्हे बिना, ज्यों पंछिन महँ काग॥

विषय— शब्द और नाम की महिमा। छपलोक का प्रसंग। निगुर्ण सत्पुरुष और सगुण अवतार का वर्णन। सद्गुरु द्वारा सुक्रित को उपदेश। साधु-संगति से लाभ। मूर्ति-पूजा-खंडन तथा जाति-प्रथा के विरुद्ध आक्षेप।

टिप्पणी—दरिसागर में शब्द और नाम का माहात्म्य वर्णित है। इसमें निगुर्ण और सगुन का बड़ा सुन्दर विवेचन हुआ है। ग्रन्थान्त में संसार की अनित्यता तथा माया की प्रबलता का वर्णन है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकंधा (शाहाबाद) के दरिया-मठ के महन्त चतुरीदास से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

४५. (ग) भक्ति हेतु—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार ×। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना पतला कागज। पृष्ठ-सं०—३०। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—१०½"×११½"। भषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—सावन सुदी सप्तमी, शुक्रवार; फ० सन् १२६६ साल।

प्रारम्भ— ज्ञान भक्ति निजुसार है, सुनो स्रवन चितलाए
विक्ति-बिक्ति बिख्यान यह, ब्रह्म अनूप देखाए॥

मध्य— सहर धर्कन्धा थै कीन्ही, भाव भजन निरवान
सत पुर्ख चलि आएउ, लीला अगम निसान॥

अन्त— मन पवना के साधिए, साधू सब्दहि सार
मूल अकह में गमि करो, मोती घना पसार॥

विषय— अनेक प्रकार के उदाहरणों द्वारा भक्ति और ज्ञान का उपदेशपूर्ण वर्णन। साधु और असाधुओं के चरित्र की चर्चा तथा सत्संगति से लाभ। सद्गुरु की स्तुति, लोभ-त्याग, दिव्य-दृष्टि आदि का वर्णन।

टिप्पणी—पुस्तक केवल ३० पन्नों की है। फिर भी इसके विषय बड़े गंभीर हैं। पशु-पक्षी और कीट-पतंगों के उदाहरणों के द्वारा ज्ञान तथा भक्ति की

विशद व्याख्या इसमें की गई है। साधु-आसाधु-वर्णन उपदेशप्रद है। इस पुस्तक में दरिया साहब ने जाति-पाँति का खंडन करते हुए विश्व-बधुत्व पर बल दिया है। ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकंधा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त चतुरोदास से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

४५. (घ) ज्ञान-सरोदे—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार ×। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना पतला कागज। पृ०-सं०—२३। प्र० पृ० पं०—लगभग २०। आकार १०½"—११½"। भाषा—हिन्दी। लिपि-नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—श्रावण शुक्ल-एकादशी, भौमवार; फ० सन् १२६६।

प्रारम्भ—दरिया अगम गंभीर है, लाल रतन की खानि
जो जन मिलै जौहरी, लेहि सब्द पहिचानि॥

मध्य—पाँच तत्तु को कोठरी, तामे जाल जंजाल
जीव तहांवासा करै, निपट नगीचै काल॥

अन्त— दरियानामा फारसी, पहिले कहा किताब।
सो गुन कहा सरोद में, गहिरि ग्यान गरकाब॥

विषय—ईश्वर, आत्मा और शरीर आदि विषयों के अतिरिक्त इसमें स्वरोदय (श्वास को क्रिया-प्रक्रिया) के विज्ञान का वर्णन है।

टिप्पणी— ज्ञान सरोदै (जैसा कि नाम से ही ज्ञात होता है) प्राणायाम के माध्यम से ज्ञान-प्राप्ति का पथ-प्रदर्शन करता है। 'ज्ञान स्वरोदय' और 'दरिया-नामा' मूल फारसी-ग्रन्थ का रूपान्तर है। ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरियामठ के महन्त चतुरोदास से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा सगृहीत हुआ।

४५. (ङ) प्रेममूला—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना पतला कागज। पृष्ठ-संख्या—१५। प्र० पृ० पं०—लगभग २०। आकार—१०½"—११½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—श्रावणी पूर्णिमा, शुक्रवार; फ० सन् १२६६ साल।

प्रारम्भ—प्रेम कवल जल भीतरै, प्रेम भँवर ले बास
होत प्रात सूपट खुलै, भान तेज परगास॥

मध्य— कहे दरिया सतगुरु खोजो सत सब्दही करो बिचार
बौ गुर रासता जगत मैं निर्मल मिला न सार॥

अन्त— त्रिया भवन बिच भगति है, रहै पिया के पास
मन उदास नहि चाहिए, चरन कँवल की आस ॥

विषय— ईश्वर और सद्गुरु के प्रति प्रेम की दृढ़ता का प्रतिपादन ।

टिप्पणी—इस छोटी-सी पुस्तक में भी पशु-पक्षी और कीट-पतंगों के उदाहरण द्वारा ईश्वर के प्रति प्रेम का अनूठा प्रदर्शन किया गया है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ घरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

४५. (च) ब्रह्म-विवेक—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार— × । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना कागज । पृष्ठ-सं०—३० । प्र० पृ० पं० —लगभग २० । आकार—१०½" × ११½" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—भाद्र शुक्लपक्ष-एकादशी, बुधवार; फ० सन् १२६६ साल ।

प्रारम्भ— ब्रह्म बिवेक ग्यान एह, स्रोता सुमति सुधार
ग्यानी समुझि बिचारही; उतरहि भौजल पार ॥

मध्य— देख ही कौतुक नर औ नारी, कोमल बालकुमारी
सीता उठि झरोखैं देख ही, सुन्दरि प्रेम पिआरी ॥

अन्त— ब्रह्म बिवेक ग्यान यह, पढ़े सुने चित लाए
मुक्ति पदारथ पावई, सदा रहे सुख पाए ॥

विषय— सत्पुरुष के सत्यस्वरूप का वर्णन । विवेक-बुद्धि की आवश्यकता । पाषण्ड का भंडाफोड़ । हठयोग के विरुद्ध सहजयोग का प्रतिपादन ।

टिप्पणी—यह पुस्तक सुन्दर अवस्था में है। इसमें सत्पुरुष तथा छपलोक का बड़ा अच्छा वर्णन है। आदि भवानी (माता) और ब्रह्म (पुत्र) के बीच वार्तालाप-कथाएँ बीच-बीच में बड़ी रोचक हैं। दुर्वासा-उर्वशी-प्रेम तथा पराशर के वेश्या-प्रेम की कथा और अन्त में दरिया के अवतार की भी कथा है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ घरकंधा (शाहाबाद) ग्राम के दरियामठ के महन्त चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

४५. (छ) अमरसार—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार— × । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना पतला कागज । पृ०-संख्या—२४ । आकार—

१०½" × ११½" । भाषा–हिन्दी । लिपि–नागरी । रचनाकाल–प्रसिद्ध । लिपिकाल—कार्त्तिक बदी-नवमी, गुरुवार; फ० सन् १२६७ साल ।

प्रारम्भ— अरज कीन्ह सिरनाय, दयानिधि सुनु लीजिये
सदा सब्द समुझाय, बहुरि ना भव जल आवही ।।

मध्य— सत गुर चरन सनेह करो, भगित दया धरो
प्रेम प्रीति नीति नेह, भवसागर तरिजाइही ।।

अन्त— बेबहा पुर्ख अमान हहिं, दरसन दीन्हों आए
सहि जादा सुक्रित हहिं, सभ बिधि कहा बुझाए । ।

विषय— सत्पुरुष और सद्गुरु की स्तुति । दरिया साहब का सत्पुरुष से साक्षात्कार । पाषण्ड की निन्दा आदि ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ में माया का प्रपंच और हिन्दू-देवताओं तथा ऋषियों पर प्रभाव दिखलाकर भक्ति का पथ-प्रदर्शन बड़े सुन्दर ढंग से किया गया है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकंधा (शाहाबाद) ग्राम के दरियामठ के महंत चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

४५. (ज) निर्भय ज्ञान—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार—रघुनाथ दास । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना पतला कागज । पृ०-संख्या—१२ । आकार—१०½" × ११½" । भाषा–हिन्दी । लिपि—नागरी । रचना-काल–प्रसिद्ध । लिपिकाल—ज्येष्ठ कृष्णपक्ष-नवमी, मंगलवार, सं० १९५२ वि० (फ० सन् १३०२ साल) ।

प्रारम्भ— आदि पुर्ख कर्त्ता हहिं, जिन्हँ कीन्हो सकल संसार
प्रथिमी नीर अकास जत, चंद सुरज विस्तार ।।

मध्य— घर घर सत गुरता कही, ग्यान कथही विस्तार
सुक्रित कहा सतगुरु कही, हंस उबारही पार ।।

अन्त— सतगुरु सब्द प्रतीति करि, गहो सन्त चितलाय
छप लोक के जाइहो, बहुरि ना भव जल आय ।।

विषय— सद्गुरु और शब्द में विश्वास की आवश्यकता, सत्पुरुष का गुणानुवाद, आत्मा पर सद्गुरु का शान्तिप्रद सुधारपूर्ण प्रभाव ।

टिप्पणी— ग्रन्थ अच्छी अवस्था में है । नागरी और कैथी—दोनों लिपियों में ग्रन्थ लिखा गया है । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है ।

यह ग्रन्थ धरकंधा (शाहाबाद) ग्राम के दरियामठ के महन्त चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

४६. ज्ञानदीपक—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब । लिपिकार—रामफलदास । अवस्था—आधुनिक । यंत्र का बना पतला कागज । पृष्ठ-सं०—१२३ । प्र० पृ० पं०—लगभग २७ । आकार—६½"×१०⅓" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—पूस बदी-सप्तमी, मंगलबार; सन् १३३२ फ० ।

प्रारम्भ—सत्तनाम ॥

संतबानी ग्रन्थ भाखल
संतबानी सतगुरु दरिया साहब कृत
ग्रन्थ ज्ञानदीपक भाखल मुक्ति के दाता
हंस उबारन बंदी छोड़-छोड़ : साखी ।
प्रेम जुक्ति नीजु मुल है, गुरुगमी करो सुधार
दया दीपक जबहीं बरै, दरसन नाम अधार ॥

मध्य—छपलोक में भम रहे, सदा पुर्ख के पास
तीनिलोक जंह लुटिया, कोइ निमरीस कैनाही दास ॥

अन्त—भैव संपूरन ज्ञान, सतगुरु पद पावन करो
उबरे संत सुजान, जिन्हि गमी किवो बिवेक यह ॥

विषय—सद्गुरु-कुम्भज-कथा, भवानी-कथा आदि ।

टिप्पणी—ग्रन्थ की लेखन-शैली प्राचीन है । कागज आधुनिक यन्त्रालयों का बना है । किसी-किसी पृष्ठ पर अंगरेजी के अक्षर एवं अंक छपे हैं । ग्रन्थ सुपाठ्य है । ग्रन्थ के अन्त में छंदों के निम्नलिखित प्रकार से गणना की गई है ।

साखी	चौपाई	छंदतोमर	छंदनारायन	सोरठा
२२०,	२२६,	५१,	५१,	५१
२१२,	२२६१,	जामा २६३२ ॥		

यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह धरकंधा (शाहाबाद) ग्राम के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

४७. (क) ज्ञानरतन—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब । लिपिकार—कमलदास । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना मोटा कागज । पृष्ठ-संख्या—१७५ ।

प्र० पृ० पं०—लगभग १४। आकार—६½"×८½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—पौस, शुक्लपक्ष-षष्ठी; फ० सन् १२७८ साल।

प्रारम्भ—ग्यान रतन मनि मंगल, विमल सुधा निजुनाम
करो बिबेक बिचारि के, जाए अमरपुर धाम।

मध्य— मारा रघुवर बान ते, लंका परि गव दंक
लंक वंक गढ टूटी है, कोइ ना रहा निहसंक ॥

अन्त— भादो बदी चउथी दिन, गवन किवो छपलोक
जो जन सब्द बिबेकिआ, मेटि जाए सभसोक ॥

विषय— रामकथा तथा सगुण, निगुर्ण आदि विषयों पर शुजाशाह और संत दरिया साहब का वार्तालाप।

टिप्पणी—इस पुस्तक में संतकवि दरिया और शुजाशाह (नोखागढ़, आरा के जमीन्दार) का वार्तालाप बड़ा सरल है। संक्षेप में राम-कथा वर्णित है। सतनाम तथा सद्गुरु-विषयक वर्णन बड़ा मनोहर है। ग्रन्थ की लिपि-शैली प्राचीन है। किन्तु लिखावट स्पष्ट और सुवाच्य है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) ग्राम के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

४७. (ख) ज्ञानदीपक—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—कमलदास फकीर। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना मोटा कागज। पृष्ठ संख्या २१४। प्र० पृ० पं०—लगभग १४। आकार—६½"×८½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—अगहन, पूर्णिमा, शनिश्चर; फ० सन् १२७६ साल।

प्रारम्भ—सतनाम
सतपुर्ष साहब जींदा जाग्रीत हंस उबारन सूक्रित दरिया साहब सतगुर ग्रन्थभाषल 'ग्यान दीपक' साखी सतनाम।
प्रेम जुक्ति निजु मुल है, गर गमि करो सुधार।
दिया दीपक जवहि बरे, दरसन नाम आधार ॥

मध्य— करो भक्ति ग्रोह जाएके, रानी लेहुली आए
सो जीव जम शे बांचि है, सतनाम गुन गाए ॥

अन्त— जो सतगुर कह चोन्हि के, ग्यानहि करै विचार
सोइ दफा सोइ बंस है, गुन गहि होवँ पार ॥

विषय— सद्गुरु और सत्पुरुष-माहात्म्य-वर्णन।

टिप्पणी— यह ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। लिपि स्पष्ट और कागज मजबूत है। ग्रन्थ में संभवतः रचना-काल का निर्देश नहीं है। लिपिकाल और दरिया साहब का निर्वाण-काल लिखित है। उनके निर्वाण-काल के सम्बन्ध में अधोलिखित पद पठनीय हैं—

"समत अठारह सै सैतिस, भादो चौथी अंधार
सावा जाम जब रइनि गएवो, दरीया गौन विचार॥
भादो बदी वार सुक, गवन किवो छप लोक
जो जन सब्द बिबेकिया, मेटे सकल सभ सोक॥

यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) ग्राम के दरियामठ के महंत साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

४८. विवेक-सागर—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना हरे रंग का मोटा कागज। पृ० सं०—४६। प्र० पृ० पं०—लगभग १४। आकार—६½"×८½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—माघ, कृष्णपक्ष-एकादशी, मंगलवार; फ० सन् १२७८ साल।

प्रारम्भ— सतगुरु मत ह्वीदै मम, पद पंकज करुध्यान
लोचन कंज मंजन करो, सुधर संत सुजान।

मध्य— अघ मोचन गर्बं भंजन शो गम तोहरे शाथ
करो पतन जिरजोधन ही तुम्हके करों शनाथ॥

अन्त— नीच भया नाचत फिरे, बाजिगर के साथ
पाव कुल्हाड़ी मारिया, गाफिल अपने हाथ॥

विषय— ज्ञान, भक्ति और सद्गुरु में विश्वास आदि।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ सुन्दर कागज पर लिखित है। लिपि सुस्पष्ट है। ग्रन्थ के अन्त में लिपिकार के नाम का निर्देश नहीं है। प्रतोत होता है, पूर्व ग्रन्थ के लिपिकार ने ही इसकी भी लिपि की है। दोनों ग्रन्थ एक ही जिल्द में हैं। सद्गुरु-माहात्म्य का वर्णन विस्तार से है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह धरकन्धा (शाहाबाद) ग्राम के दरियामठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

४९. **शब्दअरजी**—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—ठाकुरदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना जीर्ण-शीर्ण कागज। पृष्ठ-सं०—४४। प्र० पृ० पं०—लगभग १३। आकार—४१/४" × ५१/४"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल - प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ— सब्द अरजी ॥

तुम बिनु सरन राखै कवन
भगत जन सभ तुम्है जानत
दनुज दानव दवन ॥ १ ॥

मध्य— हरिनाकस जो गर्व किवो है
गर्व गर्द मिलि जाइ ॥
नखते फारा उदर बोर्द बिदारा
हाथ के हाथे पाइ ॥ २ ॥

अन्त— जोगी जंगम सेव डाइन्ह तें पन्थ निनारा
हरे हारे अवधु कहें दरिया
दरसेउ सोइ है संत पिआरा।

विषय— ज्ञान और भक्ति का गीति-काव्य।

टिप्पणी— इस छोटी-सी पुस्तक में विभिन्न प्रकार के पदों में सतपुरुष की स्तुति की गई है। पद गेय हैं। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महंत साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ है।

५०. (क) **शब्द-अरजी**—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—फकीर रामधनदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना जीर्ण-शीर्ण कागज। पृष्ठ सं०—५२१। प्र० पृ० पं०—लगभग १९। आकार—५१/३" × ८१/२"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ— शब्द अरजी सत

तुम बिनु सरन राखे कवन
भगत जन सभ तुमै जानत
दनुज दानव दवन ॥

मध्य— जोग जागे काल-भागे करम कलि कवलेस छूटे
जुगुति जोगी जानी।

× × ×

मेरु डंडके साधी घाधे
अरध लेके उरध बांधे ।
जाय अजपा ·························अनी ॥

अन्त— अति सोहाग भाग गनिका को राग
बिरह रस पाना जो कोन्है वो
प्रेम प्रीति करि ऐहि व्रत
नीति ग्यान बिना दुख दारुन वीन्हैव
कहैं दरिया दर छेकेव काल ने
लाल विसारि हारि प्रभु दीन्हेवो ॥

विषय— ज्ञान और भक्ति ।

टिप्पणी—ग्रन्थ अत्यन्त प्राचीन है। कुछ अंश अस्पष्ट हैं। ग्रन्थ के अधिक भाग अपठनीय हैं। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५०. (ख) गणेशगोष्ठी—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—उजागिर दास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना जीर्ण-शीर्ण कागज। पृष्ठ सख्या—१२। प्र० पृ० पं०—लगभग १४। आकार—५½" × ८½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल— × ।

प्रारम्भ— सत्तंनाम
ग्रन्थ गुस्ठी हुआ है गनेस पंडित
ओ दरियासाहब से धरकन्धा में
दरिया बचन—
पंडित राज सुनो सतबानी
पढ़ी गरंथ कछु लाज न आनी
वेद पढ़ा पर भेद न जाना
ताते जमके हाथ बिकाना ।

मध्य— जबलगी बिरहना उपजे, हिए ना उपजे प्रेम ।
जौं लगी हाथ ना आवही, धर्म किए व्रत नेम ॥

अन्त— सत्तनाम सर्ब उदितं, जैसे देवस पतंग
जो जन सुमिरन ठानही, पछ होत नाही भंग ॥

विषय— मूर्ति-पूजा, कर्मकाण्ड, साम्प्रदायिक भेदभाव, वेद, ईश्वर आदि ।

टिप्पणी—यह पं० गणेश और दरियासाहब के बीच हुए विवादों के आधार पर रचित एक छोटी-सी पुस्तिका है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में

सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५०. (ग) शब्दकवित्त—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरियासाहब। लिपिकार—उजागिरदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना जीर्ण-शीर्ण कागज। पृ०-संख्या—२०। प्र० पृ० पं०—लगभग १३। आकार—५$\frac{1}{3}$" × ८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् १९४१ वि०।

प्रारम्भ— सतनाम

रहत रहित रस ग्यान बिचारा
शब्द कवित्त रस खंडन
अस काहे के आसन बासन बाधन
काहे के पवन पीवे दिन-राती।

मध्य— त्रिगुन नदो त्रिबिधि धारा यह
देह धरे नाहि बाचु कोइ।

अन्त— इमके कहा कहन को ऐसा
महर महो ऐसो बुझे
कहे दरिया दर पेस महल मे
जिन्ह का जैसा सुझे॥

विषय—सद्गुरु एवं ईश्वर-माहात्म्य-वर्णन।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ खण्डित है। लिपिकार के अनुसार यह ग्रन्थ किसी 'राम बहाल भगत' नामक व्यक्ति के लिए लिखा गया है। ग्रन्थ छोटा है। लिपि स्पष्ट है। ग्रन्थ परिषद्-सग्रहालय में सुरक्षित है। यह धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५१. (क) भक्तिहेतु—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—पीताम्बरदास। अवस्था—अच्छी, प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। पृ० सं०—३०। प्र० पृ० पं०—लगभग १९। आकार—५$\frac{1}{2}$" × ८$\frac{1}{2}$"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—भादो सुदी-चतुर्थी, बुधवार ; सं० १८९३ वि०।

प्रारम्भ—सतनाम

गंरथ भगती हेतु भाखल दरी

आ साहब मुकुति का दाता सत ब्रग साखी
ग्यान भगती नीजू सार है; सूनो स्रवन चीतलाय।
वीगती बिगती बोरवान है; ब्रम अनुप देखाये।

मध्य— च्रंनधरो बहुभाती से; त्रीकेवल त्रोभै ग्यान।
प्रेम प्रीति के कारने; आऐ पुर्ख अमान ।।

अन्त— मन पवना का साधीये; साधो सबद ही सार।
मूल अकहं मे गमी करो; मोतो घना पसार ।।

विषय— अनेक प्रकार के उदाहरणों द्वारा भक्ति और ज्ञान का उपदेशपूर्ण वर्णन। लोभ त्याग, दिव्य-दृष्टि, सद्गुरु की स्तुति आदि।

टिप्पणी—पुस्तक छोटी है। ज्ञान और भक्ति की विशद व्याख्या की गई है। कतिपय पृष्ठ कोटाणु-बिद्ध हैं। यह ग्रन्थ परिषद् संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महंत साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५१. (ख) अग्रग्यान—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—पीताम्बरदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना कागज। पृ०-संख्या—२६। प्र० पृ० पं०—लगभग १७। आकार—५½"×८½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—भादो सुदी-अष्टमी, सोमवार; संवत् १८६३ वि०।

प्रारम्भ— सतनाम
सतपुर्ख बेबाहा साह
ब सूक्रीत नाम सतगुरु
जोगजीत दरीआसाहब गंरथभा
खल अग्रग्यान हंसउबारंन ।।।

साखी

अरज कीन्ह सीर नाऐ दवानीधी सूनि लेजोयै
सार सबद समुझाऐ : बहुरी ना भव जल आवही ।।

मध्य— तन मन धन नीज ग्यान इअह : अरपन सब तुम्है कीन्ह।
दआ करो बहुभाती इअह : रहो कबही जनि भीन्ह ।।

अन्त— बेबाह पुर्ख अमान हंही : दरसन दीन्हो आय।
साहीजदा सुक्रीत हंही : सभ बीधी कहा बुझाय ।।

विषय— निर्गुण तथा जोगजीत (सुक्रीत) चर्चा एवं माया की व्यापकता का वर्णन।

टिप्पणी—ग्रन्थ की सुन्दर अवस्था है। लिपि स्पष्ट है। माया की व्यापकता एवं सत्पुरुष के सोलह पुत्रों की कथा वर्णित हुई है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५१. (ग) विवेकसागर—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—बखोरीदास। अवस्था—सुन्दर, प्राचीन। हाथ का बना कागज। पृ०सं०—४६। प्र० पृ० पं०—लगभग १८। आकार—५½"×८½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—भादो सुदी-द्वादशी, बृहस्पतिवार ; संवत् १८६३ वि०।

प्रारम्भ— सत्तनाम
सत्त सुकृीत साहब
जोग जीत हंस उवारन
मुकूति के दाता दरिया सा
हब ग्रन्थ बीवेक साग्र भाखल
दरीआसाहब : साखी :
सतगुर मंतर्हिदआ मम : पद पंकज करु ध्यान :
लोचन कंज मंजन करो : सुघर संत सुजान : :

मध्य— आतंम दरस बीवेक करि : कहि दीन्हो प्रभूग्वान :
दरपन टुककरो रहै : नाही दुजा कीइ आन :।

अन्त— सबसें बड़ा हैं साधु है साधु सें बड़ा ना कोऐ :
दंसन प्रसन प्रेम रस : आंनंद मंगल होऐ :

विषय—ज्ञान, भक्ति और सद्गुरु-माहात्म्य-वर्णन आदि।

टिप्पणी— ग्रन्थ सुवाच्य है। ग्रन्थ के प्रतिपाद्य विषय जहाँ-तहाँ फटे हैं। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५२. (क) प्रेममूल—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—हीरादास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना चिकना कागज। पृ०-सं०—१२। प्र० पृ० पं०—लगभग २०। आकार—५½"×६"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—फ० सन् १२८६ साल।

प्रारम्भ—सतनाम

ग्रन्थ प्रेम मुला भाखल ….।
साखि…….।
प्रेम कमल जल भीतरे……….।
होत प्रात सुपट खुले भा ….।

मध्य— तीली को तेल फुले लल्य मेटो तील को नाम
सतगुर सब्द समानेव, बसेव अमं पुर गाव ॥

अन्त— इयां भवन बिच भगित मे, रहे पिया के पास
मन उदास न चाहियै, चरन कमल को आस ॥

विषय— सद्गुरु-भक्ति-प्रतिपादन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ में सद्गुरु और ईश्वरभक्ति का सुन्दर प्रतिपादन है। लिपि नागरी है। जहाँ-तहाँ कैथी अक्षरों का प्रयोग भी हुआ है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महंत साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५२. (ख) ज्ञानमूल—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—हीरादास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना चिकना कागज। पृ०-सं०—२२। प्र० पृ० पं०—लगभग २०। आकार—५½" × ६"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—फ० सन् १२८९ साल।

प्रारम्भ—सतनाम

ग्रंथ ग्यान मुल
भखल दरीया साहब सुक्रित साहव, सत्तनाम साखी
सतबर्ग सबं उपरें, सखा पत्र सभ जीव
जल थल सभ मे व्यापिया, सरब सुधारस पीव ॥

मध्य— कपट काटी कंठा करो, काटु कुबुधि बन ठाट
सतगुर दोस न दीजियै, जम रोकेगा बाट ॥

अन्त— रवी को छवी एह छीत पर, यह निर्गुन को भाव
छवी ते रवी नहि होत है, निर्गुन सगुन को राव ॥
यह घट पट जब खुसत है, छटकत कवि तव जाए
ओ छवि उल्टी न आबही, फेरि ना हि घटहि समाए ॥

विषय—त्रिगुण देवों से सत्पुरुष की विभिन्नता, सत्पुरुष का स्वर्ग से जंबूद्वीप आकार सुश्रित के प्रचारों के हेतु उन्हें रक्षा-प्रदान करना, मन की व्यापक प्रबलता का वर्णन आदि।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। लिपि अस्पष्ट है। लिपिकाल स्पष्ट नहीं है। विषय का प्रतिपादन बड़े सुन्दर ढंग से हुआ है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महंत साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५२. (ग) ब्रह्मविवेक–ग्रन्थकार–सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार–हीरादास। अवस्था–प्राचीन। हाथ का बना चिकना कागज। पृ०-सं०—२७। प्र० पृ० पं०—लगभग २०। आकार—५½" × ९"। भाषा—हिन्दी। लिपि–नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—फ० सन् १२८६ साल।

प्रारम्भ—सतनाम

ग्रन्थ ब्रह्मविवेक भाष ल दरिया साहब: साखी
ब्रह्म विवेक ग्यान एह, स्रोता सुमति सुधार।
ग्यानी समुझि विचारही, उतरहि भी जल-पार।

मध्य— तीनि लोक के ठाकुर, भुली परा भव ग्यान
जो मोहनि सुरनर मुनी उडेव सो न परा पहचान॥

अन्त— ब्रह्मविवेक ग्यान एह पढे गुने चितलाए
मुकुति पदारथ पाइ है, सदा रहे सुख पाए॥

विषय— सत्पुरुष स्वरूप-वर्णन, पाषण्ड भण्डाफोड़ आदि।

टिप्पणी—ग्रन्थ कथा-कहानी के माध्यम से लिखा गया है। दर्शन जैसे नीरस विषय को दरिया साहब ने कथा-कहानी के साँचे में ढालकर सर्व-जन-सुलभ बना दिया है। अन्त में दरिया के अवतार की कहानी है। ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५२. (घ) भक्ति-हेतु–ग्रन्थकार–सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—हीरादास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना खण्डित, किन्तु चिकना कागज। पृष्ठ-संख्या—२५। प्र० पृ० प०—लगभग २०। आकार—५½" × ९"। भाषा—हिन्दी।

लिपि – नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—फ० सन् १२८९ साल; कार्तिक, कृष्णपक्ष, बुधवार ।

प्रारम्भ— सत्तनाम
गरथ भगित हेतु भाखल दरी—
या साहब सतगुर हंस उबारन
सत्तनाम साखी
ग्यान भगति निज सार है सुने सर्वन चितलाए
बिग्ति बिग्ति विखान एहः ब्रह्म अनूप देखाए ॥

मध्य— कहिं दरिया धोए अजर हंही, छपलोक मे बास
तदपा काल न आवही, बहु बिधि करहिबेलास ॥

अन्त— हीरामनि निजु दास है, सब दासन्हि को दास
सतगुर से परचे भइ, ब्रीगसा प्रेम परगास ॥

विषय— साधु-असाधु-चर्चा, स्त्री-संपत्ति-लोभ-त्याग, आत्मा की अमरपुर यात्रा का वर्णन आदि ।

टिप्पणी—कीट-पतंगों के उदाहरण द्वारा भक्ति और ज्ञान का उपदेशपूर्ण वर्णन । निर्गुण और त्रिगुण-विवेचना । अन्त के कुछ पन्ने फटे हैं । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महंत साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

५२. (ङ) अमरसार—ग्रन्थकार-सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार—हीरादास । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना चिकना कागज । पृ०-सं०—१९ । प्र० पृ० पं०—लगभग २० । आकार—५½" × ९" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—कार्तिक बदी, रविवार; फ० सन् १२८९ साल ।

प्रारम्भ— सत्तनाम
ग्रन्थ अमर सार भा
खल दरिया साहब सुक्रित नाम सत वर्ग बदी छोड़ स
तगुर साहब हंस उवारन : साखी
सतगुर चरण सुधा सम बीमल मुकुति के मुल
पद पंकज लोचउ हीआ, अर्ज अनुप मकुल ॥

मध्य— कहें दरिया जग जात्रै सो रिखि काम अधीन
बिरला बाच मोहबसो रहे नाम ललीन ॥

अन्त— गुरु मुरती गति चंदर्मा सेवक नैन चकोर
पलक-पलक निरखत रहो, गुर मुरती के योर ।।

विषय— सत्पुरुष और सद्गुरु की स्तुति, दरिया साहब का सत्पुरुष से साक्षात्कार, पाषण्ड की निन्दा आदि ।

टिप्पणी—ग्रन्थ सुपाठ्य है। छंद, सोरठा, चोपाई, साखी आदि छंदों का प्रयोग हुआ है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

५२. (च) विवेकसागर—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—हीरादास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना कागज। पृ०-सं—३२। प्र० पृ० पं०—लगभग २०। आकार—$5\frac{1}{2}'' \times 9''$। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् १९३८ वि०, कार्तिक बदी, शनिवार।

प्रारम्भ— सत्तनाम
गरथ वोबेक सागर भाखल दरिया साहब

साखी

सतगुर मत हीर्दए म्म : पद पंकज करु घ्यान
लोचन कंज मनन करो सुघर संत सुजान ।।

मध्य— राज काज सब देखिया : गज गर्जहि तेहि द्वार
बाज पखेह हाथ लेइ यह सोभा दरबार ।।

साखी

अन्त— सब से बड़ा साधु है साधु से बड़ा ना कोए
दरसन परसन प्रेम गति आनन्द मंगल होए ।।

विषय— ज्ञान-भक्ति, सद्गुरु में विश्वास-वर्णन आदि ।

टिप्पणी—ग्रन्थ में अन्य ग्रन्थों के समान 'पुष्पिका' वाक्य नहीं दिये गये हैं। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

५२. (छ) अग्रग्यान—ग्रन्थकार-सन्त कवि दरिया साहब। लिपिकार—हीरादास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना चिकना कागज। पृ०-सं०—२३। प्र० पृ० पं०—लगभग २०। आकार· $5\frac{1}{2}'' \times 9''$। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी।

रचनाकल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—अगहन सुद-षष्ठी, रविवार; संवत् १६३७ वि०।

प्रारम्भ— सतनाम

गरथ अग्र ग्यान, भाखल दरिया साहब
सुक्रित हंस उबारन सन्त गुर बंदो छोर ।।

साखी

अरज कीन्ह सीरनाए दआ नीधि सुनो लीजिए
सार सब्द समुझाए, बहुरी न भव जल आवही ।।

मध्य— तन मन धन अव तुम पर यह सभ अरपन कीन्ह
करो दआ बहु भाति यह रहो कवही जबही जनि भीन्ह ।।

अन्त— बेबाहा पुर्ख अमान है, दरसन दीन्हो आए
सरहीजदा सुक्रित है; सबबीधि कहा बुझाए ।।

विषय— माया की व्यापकता, निर्गुण-वर्णन तथा जोगजीत (सुक्रित) की चर्चा।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ में सृष्टि-रचना तथा माया की व्यापकता का सविस्तर वर्णन है। सत्पुरुष के सोलह पुत्रों की कथा में पाप और पाषण्ड की बड़ी तीव्र भर्त्सना है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५३. (क) गणेश-गोष्ठी—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—शुकुलदास। अवस्था—प्राचीन। हस्त-निर्मित मोटा कागज। पृ०-सं०—२१। प्र० पृ० पं०—लगभग १३। आकार—६"×६"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—कार्त्रिक बदी-अष्टमी, शनिवार; संवत् १८६४ वि०।

शतनाम

प्रारम्भ— आ जग मे पढ़ी-पढ़ी वेद पूराना
जोति शरूपि जाके कहीयै करै, जीवन्ह कै घाता।

मध्य— ढंढा ढोल मारू मैदान डंगर मे ढाल धमका
शुनहि शूर जो हो दिन गर मे
ढाल ले जर हाथ तेग दहिने भला ।।

अन्त— गंध शुगंध शभै जूठि आवै
संत ना जूठ खाहि शवशारा ।।
ताह पर करै नेम अचारा

कहँ दरिया सेह जरा को रगरा
शतनाम गहर मे दी रगरा: ॥

विषय—मूर्त्ति-पूजा, कर्मकांड आदि का खण्डन ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ खण्डित है। प्रारम्भ के सात पृष्ठ नहीं हैं। कागज प्राचीन है। पृष्ठ-क्रम ठीक करने के लिए पुन: पेंसिल से पृष्ठ-संख्या लिखी गई है। दन्त्य 'स' के लिए 'श' का ही प्रयोग है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरिया-मठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५.३ (ख) ज्ञानमूल (मुलज्ञान)—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—शुकुलदास फकीर। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना कागज। पृ०-पं०-१८-(२२-४०)। प्र० पृ० पं०—लगभग १४। आकार—५½"×½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—कार्तिक बदी-एकादशी, मंगलवार।

प्रारम्भ— शतनाम
बेबाहा शाहेब बे कोमती गरथ मुल ज्ञान भाशल
दरिया शाहेब गरीब नेबाज बंदि छोड़
शत दर्गं शर्व उपरे शाखा पत्र शभीव: ॥
जल थल शभ मे व्यापिआ शामशूधार शपीव
आदि अन्त के उपमुंल: ॥

मध्य— शोइ हंश गुन शार है जीन्हि मानहि कहा हमार।
शब्द तेग यह गहि कैं उतरैं भव जल पार ॥

अन्त— जाके नीगुन बेद यह कहइ शगुन शरुप देह धरी लहइ ॥
रबी को न छबी यह न छीत पर, यह नीगूंन को भाव
न छबी ते रबी नाहि होत है, नीगूंन सगून को राव: ॥

विषय— त्रिगुण देवों से सत्पुरुष को विभिन्नता, सत्पुरुष का जंबूद्वीप में प्रचार-कार्य।

टिप्पणी— यह ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। कागज प्राचीन है। ग्रन्थ की लिपि पुरानी है। लिपिकार ने चवर्ग 'छ' का प्रयोग 'ज्ञ' के समान किया है। दन्त्य 'स' के स्थान में तालव्य 'श' का प्रयोग अधिक है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५३. (ग) अग्रज्ञान—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—शुकुलदास फकीर। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—

२० (४१-५६) । प्र० पृ० पं०—लगभग १४। आकार—५½" × ५½"। भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—कार्तिक सुदी नवमी; संवत् १८६४ वि० ।

प्रारम्भ— शतनाम ॥

बेवाहा नाम नीशन
शत बरग जींदा आमान जा
ग्रीत जींद दरीआ शाहेब दरीआ
गरी नेवाज: ॥
अर्ज कीन्ह शीरनाए, दया नीधि शुनिलीजीयै
शार शब्द शमुझाए, बहुरि न भो जल आवही ॥

मध्य— तन मन धन अब तुम्ह पर यह सभ अरपन कीन्ह ।
करो दया बहुभांति यह रहो कबही जनि भीन्ह ॥

अन्त— बेवाहा पुरुख अमान है, दरश.........हो आए
शाही जदा शूक्रीत है शभ बीधि काहा बुझाए ॥

विषय— माया की व्यापकता, निर्गुण-त्रिगुण-विवेचन आदि ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ यद्यपि अति प्राचीन है, फिर भी इसके अक्षर साफ एवं सुन्दर हैं। ग्रन्थ में तालव्य 'श' का अधिक प्रयोग हुआ है । लिपि अस्पष्ट है । अन्त के कुछ पन्ने दीमक द्वारा नष्ट कर दिये गये हैं। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

५४. गणेशगोष्ठी—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार—रामपीतदास । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना कागज । पृष्ठ-संख्या १७ । प्र० पृ० पं०—लगभग २५ । आकार—४" × ६½" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—ता० १३-६-४० ।

प्रारम्भ— शतनाम ॥

गुष्टी भइल काशी में असी बरना के तीर
गणेश पंडित ओ दरिया साहब से

साखी

पंडितराज सुनी लीजिये, बचन सत सुबास
पढ़ी ग्रन्थ कुछ लाज ....रो, मेटे नरक कुबास ॥

मध्य— चारी खुट के भेष सब, नाना रंग तरंग
काहे न घंटा बाजिया, महा सुरति भो भंग ॥

अन्त— साधु साधु सब कहत है, साधु समुझे बार
अलल पक्ष कोई एक है ; पंछी कोटि हजार ॥

विषय— साम्प्रदायिक भेदभाव, मूर्त्ति पूजा, कर्मकाण्ड, वेद आदि के खण्डन तथा ईश्वर का प्रतिपादन।

टिप्पणी—ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। लिपि आधुनिक एवं सुस्पष्ट है। अक्षर सुन्दर है। पंक्तियाँ सीधी हैं। लिपिकाल एवं लिपिकार के लिए दो तरह के परिचय प्राप्त हैं। ग्रन्थ के अन्त में उपर्युक्त तिथि-निर्देश है, किन्तु दूसरे पृष्ठ पर 'संम्बत् १८८३ पूख साल, सन् १३४७' लिखा है। इसी तरह लिपिकार के लिए—'लिखा था दसख्त दीलराम दास जी के था' लिखा है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५५. मूर्त्तिउखाड़—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना मोटा कागज। पृष्ठ-सं—३६। प्र० पृ० पं०—लगभग १७। आकार—४" × ६१/३"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ— सतनाम।
सत सुक्रीत जोग जीत अर्जं अंचीत
पुर्सं मुनींदं करु नामे कबीर दरीया
नाम अा मोल हंस उबारन बदी छोर
गरंथ मुरति उखार भाखल दरिया
साहब धरकंधा मो तख्त कीया०।

॥ चौपाई ॥

जाहाँ बसे सतगुर सतपुर देसवा
भेसवा धरीय पगु ढारंही रेजी।

मध्य— असल अमान तो ही पाने उरेजी
दुनो दीन मे खलल परा है।
मारी की हिसी कुकुरा नेउरे जी
दुनो दीन के ऐक मीलावैं॥

अन्त— पवन सबद लि गान करत है
बीरह सबद सीख पैहे

धका देखी कुल त्यागिया
त्यागेत्रो धन और धाम ॥

विषय— मूर्ति-पूजा-खण्डन एवं सुक्रित के विभिन्न अवतारों का स्व-मुख-वर्णन ।

टिप्पणी— ग्रन्थ खण्डित है । लिपि सुन्दर है । स्थान-स्थान पर कोष्ठ और चक्र बनाकर दरियापन्थी विचारों को व्यक्त किया गया है । ग्रन्थ के खण्डित होने के कारण लिपिकाल का उल्लेख नहीं है । विषय का प्रतिपादन सुन्दर ढंग से किया गया है । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

५६. ग्यानमूल— ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार—प्रतापदास फकीर । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना मोटा कागज । पृ०-संख्या—२६ । प्र० पृ० पं०—लगभग १९ । आकार—६" × ८½" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकार—कार्तिक बदी पूर्णिमा (?) सोमवार, वि० सं० १८९९; सन् १२५० फसली ।

प्रारम्भ— सत्तनाम
नाम नी सान सुकृत
दरीआ साहब ग्रन्थभाख
ल ग्यान मुल सतबरग नाम
नीसान हंस उबारन : साखी नाम
सत बरग सरब उपरै , सखा पत्र सब जीव ॥
जल थल सभ में व्यापीआ साच सुधा रस पीव ॥

मध्य— झुठो मीठो लागइ साचो तीतो बात
थोरे पवन में डोलत हैं जो पीपर को पात ॥

अन्त— रबी को छबी यह छीत पर, यह नीगुंन को भाव
छवी ते रबी नाही होत है, नीगुंन सगुंन को भाव ॥

विषय— सत्पुरुष-माहात्म्य-वर्णन ।

टिप्पणी— ग्रन्थ पूर्ण है । कागज सुन्दर है । भाषा शुद्ध एवं लिपि स्पष्ट है । ग्रन्थ के अन्त में दरिया साहब के स्थान का पूरा नाम उल्लिखित है—"भोजपुर परगने दनवारी तपे वीसी मौजे धरकंधा" आदि । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के

दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५७. (क) दरियासागर—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब। लिपिकार—फकीर गिरधारीदास। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना हरे रंग का कागज। पृ०-सं०—८२। प्र० पृ० पं०—लगभग १५। आकार—६"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—वैशाख सुदी-पंचमी, शुक्रवार, फसली सन् १२९० साल।

प्रारम्भ— सतनाम ॥
सत सुकृत दरीया साहेब
सत बरग नाम नीसान ग्रन्थ
दरीया सागर सतस
सुक्रीत—साखी
ग्रन्थ दरीया सागर मुक्ति भेद नीजुसार
जो जन सब्द बीबेकीया सो जन उतरे पार ॥

मध्य— मरकठ नग नाही चोन्हही, नगन फीरे बनमाझ
नाम बेमुख नर बीकल है, बलु जननी होए बाझ ॥

अन्त— कोठा महल अटारिया सुनो सखन बहुराग
सतगुर सब्द चीन्ह बीना जेवो पंछीन्ह मे काग ॥

विषय— शब्द और नाम की महिमा, निर्गुण सत्पुरुष और सगुण अवतार का वर्णन, साधु-संगत से लाभ आदि।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। ग्रन्थ की भाषा और वर्णन-शैली अच्छी है। लिपि स्पष्ट है। ग्रन्थ के अन्त में लिपिकार का पूरा पता लिखित है। चौपाई और साखी की लेखन-प्रणाली पुरानी है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

५७. (ख) ग्यानदीपक—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरियासाहब। लिपिकार—गिरधारीदास फकीर। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना हरे रंग का कागज। पृ०-सं०—१५५। प्र० पृ० पं०—लगभग १५। आकार-६"×८"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—चतुर्दशी, मंगलवार, सावन शुक्लपक्ष, संवत् १९४१ वि०; फसली सन् १२९१ साल।

प्रारम्भ—सत्तनाम

सत सुक्रीत हंस उबारन बीदी (बंदी) छोर
सत बरग नाम नीसान ग्रन्थ ग्यान
दीपक भाखल दरीया साहेब संत
गुरु सतनामा साखी
प्रेम जुगुति नीजु मुल है गुर गमी करो सुधार
दायादीपक जबही बरे दरसन नाम अधार ।।

मध्य— कागा कछीआ भेख धरी, नाची का छीगुनगाए
चोर साहु पहचानी हो, प्रेम भगतीलव लाए ।।

अन्त— भवो संपूरन ग्यान, सतगुर पद पावन करो
उवरें सन्त सुजान, जीन्ही गमी किवो वीबेक यह ।।

विषय— सत्पुरुष और सद्गुरु-माहात्म्य वर्णन ।

टिप्पणी--ग्रन्थ की अवस्था अच्छी है । लिपि सुस्पष्ट है । शिव-पार्वती और कुंभज-नारद-वार्तालाप दार्शनिक भित्ति पर आधारित है । दरियापन्थ के दार्शनिक तत्त्व का सुन्दर परिचय मिल जाता है । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

५७. (ग) नौमाला—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार—लछुमनदास । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना हरे रंग का कागज । पृ०-सं०—२ । प्र० पृ० पं०—लगभग १८ । आकार—६"×८" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—चइत (चैत्र) सोमवार; फसली सन् १३०४ साल; संवत् १९५४ वि० ।

प्रारम्भ—अथ नौ माला :

प्रथम नाम सतनाम सजीवन
सामरथ दीन देआल ।
सत साहेब मुख सागरसामी
सरब सपूरन काला ।।

मध्य— का हीर गनीकहिमाके सोर, छक अंत्रजामी
मौला परवर दीगार हक छत्रपती सुखधामी ।।

अन्त— सतपुरुषं सत नाम सतबर्ग सत
धाम सत बरत सतग्यान सतसंग गहरे ।।

अजर अंग अजर गुन अजर रंग
अजर लोक अम्रित अगम पंथ रहु रे ।।

विषय— सतनाम-माहात्म्य-वर्णन ।

टिप्पणी—इस दो पन्ने के ग्रंथ के पद सुललित हैं । लिपि नागरी है । इसमें ईश्वर-भक्ति के उपदेश हैं । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

५७. (घ) अग्रग्यान—ग्रन्थकार—सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार— गिरधारीदास । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना हरे रंग का कागज । पृ०-संख्या—२६ । प्र० पृ० पं०—लगभग २० । आकार—६″×८″ । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—कुआर सुदी, बृहस्पतिबार, ता० २१ संवत् १९४१; सन् १२९१ फसली साल ।

प्रारम्भ— सतनाम
ग्रन्थ अग्रग्यान
भाखल दरीआ साहेब
मूक्ती के दाता हंस उबारं बं
न बंदी छोर दरीआ साखो ।
अरज कीन्ह सोरनाए, दाआ (दया) निधी सूनी लीजीए
सार सब्द समूझाए बहुरी ना भी जल आवही ।।

मध्य— नीगुंन नीअछर नाम है सरगुन सरीर तोहार
ऐन झरोखा देखियै हम रहो दुनो सोन्वार ।

अन्त— हीरा मनी नोजुदास हए सभ दासन्ह को दास
सतगुर से परचे भइ, ब्रीगसा प्रेम परगास ।।

विषय— माया की व्यापकता, निर्गुण-त्रिगुण विवेचन ।

टिप्पणी- यह ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है । कागज प्राचीन है । लिपि स्पष्ट है । चौपाई और साखी आदि का यथास्थान ठीक उल्लेख हुआ है । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महन्त साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

५८. अलिफनामा—ग्रन्थकार— सन्तकवि दरिया साहब । लिपिकार—प्रताप फकीर । अवस्था—प्राचीन । हाथ का बना साधारण मोटा कागज । पृष्ठ-

संख्या—७। प्र० पृ० पं०—लगभग २३। आकार—६"×८$\frac{1}{3}$"।
भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—
वि० १८९० संवत्; सन् १२५१ साल।

प्रारम्भ—सतनाम

गंर्थ अलिफनामा भाखल दरोआ साहब हंस उबारन दआ को सार्ग
अलिफ अलाह सभको सीरताज अउअल आखिर वाहि काज ॥

मध्य—अलीफ नीसान ईलाही कुदरत अलीफ दीदार देखै सो हजरत ॥

अन्त—ईहा बेवाहा है साहव मेरा हों आसिक दील बंदा तेरा
दरीआ दिल जो करै सफाई ऐन दीद परगट सो पाई ।

विषय—सत्पुरुष-माहात्म्य-वर्णन ।

टिप्पणी—ग्रन्थ बहुत छोटा है। इस छोटे-से ग्रन्थ में सत्पुरुष का माहात्म्य-
वर्णन हुआ है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है।
यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरियामठ के महंत साधु चतुरीदास
के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहित हुआ।

५६. **सहस्रानी**—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—प्रताप फकीर।
अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना मोटा कागज। पृष्ठ-सं०—५३।
प्र० पृ० पं०—लगभग १८। आकार—६"×९"। भाषा—
हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—पौष
कृष्णपक्ष ११, शनिवार, संवत् १८७० वि०।

प्रारम्भ—सत्तनाम

गंर्थ सहस्रानी साखी भाखल दरिआ साहब सतगुर सतनाम।
बेवाहा नीजु जानहु जाकबांहा न होए
आदी अंत गुन सत्त है दुजा औरो नाही कोए ॥

मध्य—ज्ञान हुआ तब ध्यान है, भग्ती हुआ तब जोग
जहां दया तहां धरम है, बीगसा प्रेम संजोग ॥

अन्त—सत सुकृत सुमिरन करो सम बीधि होत आनन्द
सकल सभा मह संत सोभै ज्यों उडीगन महं चंद ॥

विषय—दरिया साहब के विभिन्न विषयों पर १०५३ पदों का संग्रह ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ दरिया साहब के अन्य ग्रन्थों से उद्धृत कुछ पदों का संकलन है।
जहां-तहां कुछ मौलिक रचनाएँ भी हैं। सामान्य धारणा के अनुसार
इसका प्रारम्भिक रूप 'सतसई' के रूप में था। केवल सात ही पद

इसके प्रारम्भ में लिखे गये थे। शनैः-शनैः इसमें पद बढ़ते गये और उनकी संख्या बढ़कर १०५३ तक पहुँच गई। इसलिए इसका नाम 'सहस्रानी' पड़ा। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६० (क) प्रेममूला– ग्रन्थकार- संत कवि दरिया साहब। लिपिकार—बाबू जंगबहादुर राय। अवस्था—अच्छी। आधुनिक यंत्र का बना कागज। पृ०-सं०—१२। प्र० पृ० पं०-लगभग १६। आकार—१६"×११"। भाषा—हिन्दी। लिपि--नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—श्रावण शुक्ल-पक्ष १३, बुधवार, संवत् १९८३ वि०।

प्रारम्भ—··· म कमल जल भीतर, प्रेम भबर ले बास
होत प्रात सुपट खुले, भान तेज प्रकाश ॥

मध्य—तन करु मटुकि प्रेम करु पानी, निकले घृत सुबास बखानी
कर्म जोब मलिन जो कीन्हा, सत्य बिना ब्रह्ममय छीन्हा ॥

अन्त—प्रेम भक्ति जाके बसे, निस दीन रहे अधीन।
दरिया दिल कहँ देखिये, रहे चरण लव-लीन ॥

विषय—सद्गुरु-भक्ति-प्रतिपादन।

टिप्पणी—ईश्वर-भक्ति और सद्गुरु-माहात्म्य-वर्णन पठनीय है। यह ग्रन्थ आधुनिक कागज पर प्रचलित (नई) लिपि में लिखा गया है। ग्रन्थ खण्डित है। प्रारम्भ की कुछ पंक्तियाँ नहीं हैं। जहाँ-तहाँ लिपि में अँगरेजी का भी व्यवहार हुआ है। ग्रन्थ के अन्त में लिपिकार का नाम अँगरेजी और नागरी दोनों लिपियों में है। ग्रन्थ का प्रारम्भ बारहमासा आदि गीतों से हुआ है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६०. (ख) दरियासागर—ग्रन्थकार—संत कवि दरिया साहब। लिपिकार छेदीदास। अवस्था-प्राचीन। हाथ का बना खण्डित जीर्ण-शीर्ण कागज। पृ०-सं०—६४। प्र० पृ० पं०—लगभग १७। आकार—१६"×९"। भाषा--हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—फाल्गुन शुक्ल-पक्ष, रविवार,

प्रारम्भ—सोभा अगम अपार हंस बस सुष पावही ।
कोई ग्यानी करे बिचार, प्रेम तत्त जाके बसे ।।

मध्य—हंस नाम अम्रित नाहि चाषे, नाहि पावै पइसार ।
कहँ दरिया जग अरुझेवो, नाम बिना संसार ।।

अन्त—कोठा महल अटारीया मुनेवो सर्वन बहुराग ।
सत गुर शव्द चिन्हे बिना, जेवों पछीन्ह मे काग ।।

विषय—निर्गुण और सगुण अवतार-वर्णन तथा शब्द-नाम माहात्म्य-प्रसंग ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ अत्यन्त प्राचीन है। कागज जीर्ण-शीर्ण **और ग्रन्थ** का अन्तिम भाग खण्डित है । अक्षर और लिपि **मनोहर हैं**। ग्रन्थ के अन्त में दरिया साहब का निर्वाण-काल **निम्नलिखित है**—
''संबत सै अठारह शै सैतीस पआनकी वो छपलोक ।
जो जन शब्द बिवेकिया मेटे सकल सभ सोक ।।
भादो बदि चौथि अधार के दिन रहेवो सुक्रवार ।
सवा जाम जरैनि गवो दरिया गवत बिचार ।।''

यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। **यह ग्रन्थ** धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-मठ के महंथ साधु **चतुरीदास के** सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

६०. (ग) **अमरसार** (अम्र सार)—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब । लिपिकार—**बुनआद** दास । अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना जीर्ण-शीर्ण **कागज** । पृ०-सं०—३० । प्र० पृ० पं०—लगभग १५ । आकार—६½"×९" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—सत्तनाम
सत वर्ग नाम
नीशान शुक्रीत दरी
आ शाहब हंस अबारन मु
क्ति दाता ग्रन्थ अर्म सार भाख
ल दरीआ साहब सतनाम साखी: १
शत गुर चर्न शुधा सम बीमल मुकुति का मूल
पद पंकज लोच तहीआ अजर अनूपम फूल ।।

मध्य—दरपन दाग न लागहि नैन रहै भरीपूर।
ऐन ऐन मे दीशै कहें दरीआ सोइसूर ॥

अन्त—मूल नाम गति पार कथा बहुत वीश्तार है।
शंतहि करो बिचार शंश शकल वीशारिकैं ॥

विषय—सद्गुरु और सत् पुरुष को स्तुति, पाषण्ड-खंडन आदि।

टिप्पणी—ग्रन्थ जीर्ण-शीर्ण कागज पर लिखित है। लिपि अस्पष्ट है। लिपिकाल अज्ञात है। लिपिकार का भी पूर्ण पता नहीं चलता। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६०. (घ) यज्ञ-समाधि (जग्य समाधो)—ग्रन्थकार--संत कवि दरिया साहब। लिपिकार--ठाकुर फकीर। अवस्था—प्राचीन हाथ का जीर्ण-शीर्ण कागज। पृष्ठ-संख्या—१६। प्र० पृ० पं०—लगभग १८। आकार—६½"×९"। भाषा—हिन्दी। लिपि--नागरी। रचनाकाल--प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् १९०६ वि०।

प्रारम्भ—सत्तनाम
गंर्थ जग्य समाधी
स्त्री क्रीस्न दुदीस्टील
का बोध जानव ॥ छंद ॥

एही भाती कोप री पचके सोभा रथ को महिमा कीबो।
मुकूति कारन जुधी ठानेवो तीन्हकी गती कैसे दीबो ॥

मध्य—चारी खुट के भेख सभ नाना रंग तरंग।
काहे ना घट बाजीआ महा सुरति भौं भंग ॥

अन्त—साधु साधु सभ एक है, जव पोसता कर खेत।
कोइ कूदरती लाल है अबर सेत का सेत ॥

विषय—कृष्ण-युधिष्ठिर-संवाद के द्वारा ज्ञानोपदेश, पाषण्ड का बहिष्कार, सद्गुरु में विश्वास आदि।

टिप्पणी—ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। कागज जीर्ण-शीर्ण है। लिपि स्पष्ट है। लिपिकाल अपूर्ण है। श्रीकृष्ण-युधिष्ठिर संवाद के द्वारा 'ज्ञानोपदेश' हुआ है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-

मठ के महन्थ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६१. (क) दरिया सागर—ग्रन्थकार—संत कवि दरिया साहब । लिपिकार—उमराव दास फकीर । अवस्था—अच्छी । हाथ का बना मोटा कागज । पृ०-संख्या—८४। प्र० पृ० पं०—लगभग १६ । आकार—६″×९″। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—संवत् १८८५ वि०, वैशाख सुदी-त्रयोदशी, रविवार।

प्रारम्भ—सत्तनाम
सुक्रीत दरीआ साह
व हंस उबारन मुकुति दाता
ग्रन्थ दरीआ सार्ग भाखल दरी ॥ साखी ॥
ग्रन्थ दरीया साग्र: मुक्ति भेद नीजु सार।
जो जन शब्द वीबेखाआ: सोजन उतरही पार ॥

मध्य—हंस नाम अम्रीत नाही चाखेवो: नाहि पाए पइसार।
कहें दरोआ जग अरुझेवो: एक नाम बोना संसार ॥

अन्त—कोठा महल अटारीआ : सुने शर्वन वहुराग :
सत गुर शब्द चोन्हें बीना : ज्यों पंछीन्ह में काग : ।

विषय—नाम की महिमा तथा छप-लोक का वर्णन आदि।

टिप्पणी—ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। लिपि स्पष्ट है। लेखन-शैली पुरानी है। रचनाकाल अज्ञात है । ग्रन्थ के अन्त में लिपिकार का पता लिखित नहीं है । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-मठ के महन्थ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६१. (ख) भक्ति-हेतु (भगतिहेतु)—ग्रन्थकार—संत कवि दरिया साहब । लिपिकार—उमराव दास फकीर। अवस्था—अच्छी, प्राचीन। हाथ का बना मोटा कागज । पृष्ठ-संख्या—३२ । प्र० पृ० पं०—लगभग १६ । आकार—६″×९″ । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—संवत् १८८५ वि०, ज्येष्ठ बदी-नवमी।

प्रारम्भ—सत्तनाम
ग्रन्थ भगति हेतु भा
खल दरिआ साहब सतनाम
ग्यान भगति नीजु सार है : सुनो सर्वन चीत लाए ।
बिगति बोगति बखान एह, ब्रह्म अनुप देखाए ॥

मध्य—ब्राह्मन सो जो ब्रह्म हो चीन्है : करै भगति लौ लीन ।
कहें दरीआ सो बांचीहो पंडीत पर्म अधीन ॥

अन्त—भादो वदि चउथ दीन : गवन कीवो छपलोक ।
जो जन सब्द बीवेखीआ : मेटै सकल सभ सोक ॥

विषय—अनेक उदाहरणों द्वारा ज्ञान-भक्ति-विवेचन, सद्गुरु-स्तुति और साधु-असाधु-वर्णन आदि ।

टिप्पणी—ग्रन्थ के अन्तिम कुछ पन्ने दीमकें चाट गई हैं । लिपिकार ने ग्रन्थ की लिपि करने में बड़ी सावधानी से काम लिया है । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-मठ के महन्थ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

६२. (क) दरियासागर—ग्रन्थकार—संत कवि दरिया साहब । लिपिकार—लालधारी दास । अवस्था—सुन्दर, हाथ का बना प्राचीन मोटा चिकना कागज । पृष्ठ-संख्या—८४ । प्र० पृ० पं०—लगभग १७ । आकार—६"×६½" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचना-काल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—वैबाहा साहब
सुकरीत दरीआ साहब
गरथ दरीआ सागर भाखल : ॥
॥ साखो ॥
गरथ दरीआ सागर : मुक्ती भेद नीजुसार ।
जो जन सबद बीवेकीआ : सो जन उत्तर ही पार ॥

मध्य—यह मन काजी यह मन बाजी :
यह मन करता यह मन दरवेश :
यह मन पाडे यह मन पंडीत :
यह मन दुखीआ नरेश ॥

अन्त—कोठा महल अटारीआ : सुनै सर्वन बहुराग ।
सतग सब्द चीन्है बीना : जेव पंछीन्ह मे काग ॥

विषय—छपलोक, सद्गुरु-माहात्म्य एवं नाम की महिमा का सविस्तर वर्णन ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। कागज मोटा है। लिपिकाल का उल्लेख सम्भवतः नहीं है; क्योंकि ग्रन्थ के अन्त में केवल—
"समपुरन---
"दस्तखत लालधारी दास" ही लिखा है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-मठ के महन्थ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

६२. **(ख) ग्यान रतन**—ग्रन्थकार—संत कवि दरिया साहब । लिपिकार---लालधारी दास का फकीर। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना प्राचीन मोटा मसृण कागज। पृष्ठ-सं०—१०९। प्र० पृ० पं०—लगभग १७। आकार—६"×९½"। भाषा—हिन्दी। लिपि---नागरी। रचना-काल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् सन् सावन सुदी शुक्रवार।

प्रारम्भ—सत्तनाम—
सत्त पुर्ख साह
ब सुक्रीत नाम सत गूर जो
ग जीत दरीया साहब गर्थ
भाखल ग्यान रतंन मुक्ति के
दाता हंस उबारन बंदी छोर :

॥ समो ॥
ग्यान रतन मनि मंगल बीमल सुधा नोजु नाम
करो बीवेक बीचारो के जाए अमरपुर धाम।

मध्य—कहे सीव सुनु बचन भवानी: माआ गर्व उत्तपात
नाम म भगत ना दास राम को भर्मी रसातल जात ॥

अन्त—सोरठा : सत्तनाम---
जेवो तरनी जलमाह नाम बीमल जग बीदीत है ।
समुझो पकरीअै बाह भव नाही बुडे जहाउ एह ॥

विषय—ज्ञान, भक्ति, सगुण-निर्गुण आदि का सविस्तर वर्णन, संक्षेप में राम-कथा आदि ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ आद्योपान्त सुवाच्यहै । लिपि स्पष्ट है। लिपिकाल का उल्लेख अपूर्ण है। "समत सन" लिखने के बाद तत्संबंधी

अक्षर या अंक कुछ भी लिखित नहीं है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६२. (ग) **ब्रह्म बिवेक**—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—लालधारी दास। अवस्था—अच्छी, हाथ का बना प्राचीन मोटा मसृण कागज। पृष्ठ-सं०—३३। प्र० पृ० पं०—लगभग १७। आकार—६"×६½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ— सत्तनाम —
बेवाहा साहब सुकरीत
दरीआ साहब गरथ ब्रह्म
बीबेक भाखल : साखी: ॥।
ब्रह्म बीबेक ग्यान एह स्त्रोता सुमती सुधार
ग्यानी समुझी बीर्चा ही उर्त ही भ्वो जलपरिवार ॥

मध्य—तीनी लोक कै ठाकुर : भुली प्ररा भ्वो ग्यान
जे मोहनी सुर न्न (नर) मुनी डंड वो सोन परी यह थान।

अन्त—ब्रह्म बीबेक ग्यान यह : पढे सुने चीत लाए
मुक्ती पदारथ पावए: सदा रहे सुख पाए।

विषय—सत्पुरुष के सत्य-स्वरूप का वर्णन। विवेक-बुद्धि की आवश्यकता। पाषण्डादि-खंडन। सहजयोग-प्रतिपादन।

टिप्पणी— ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है। लिपि स्पष्ट और अच्छी है। लिपिकाल का उल्लेख सम्भवतः नहीं है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६३. **ज्ञानरतन**—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—प्रताप फकीर। अवस्था—नवीन यंत्र-निर्मित (फुलस्केप) कागज। पृष्ठ-सं०—११७। प्र० पृ० पं०—लगभग ३४। आकार—८"×१३½"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् १८३४ साल, फाल्गुन कृष्ण-पक्ष, सोमवार।

प्रारम्भ—शतनाम

ग्रन्थ ग्यान रतन भाखल
दरीआ शाहब शत गुर शुक्री
त हंश उबारन मुकुति के
दाता नाम नीशान बंदी छोर
दीन देआल शरन शामर्थं के ।।

।। शमो ।।

ग्यान रतन मनी मंगल : बोमल शुधा नीजु नाम
करो बीबेक बीचारी कै : जाए अमरपुर धाम ।।१।।

मध्य—चले भभीखन राम पहः तेजी शकल परीवार
बहुरी भवन में आइके : देखन लंक दुआर ।।

अन्त—गुर शे भर्म जनी राखहु : मीली शब्द नीजु शार
शुक्रीत बचन बीचारीआ : उतरी जहु भवपार ।।

विषय—सगुण-निर्गुण भक्ति-प्रतिपादन, ज्ञानोपदेश तथा संक्षेप में राम-कथा-वर्णन ।

टिप्पणी—ग्रन्थ की स्थिति अच्छी है । कागज नवीन (फुलस्केप) है । लिपि स्पष्ट एवं आधुनिक है । लिपिकाल स्पष्ट नहीं ज्ञात होता; क्योंकि कागज की नवीनता और संवत् की प्राचीनता दोनों असंबद्ध हैं । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) दरिया-मठ के महन्थ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

६४. ब्रह्म चैतन्य—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब । लिपिकार—दिलराम दास साधु । अवस्था—सुन्दर, हाथ का बना प्राचीन मोटा कागज । पृष्ठ-सं०—३७ । प्र० पृ० पं०—लगभग ८ । आकार—४½″×७½″ । भाषा—विकृत संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—चैत्र सुदी-पंचम, शुक्रवार ।

प्रारम्भ—सत्यनाम सत्यवर्ग नाम णिसाण भाष्य

बे की मति साहब सत सूकृत नाम सत्त
गूर जोग जित दरिया साहेब भाष्य
सत्य ग्रंथं ब्रह्म चैतन्य इस लोकः
सत्य ब्रह्म णिरूपं सदा गूणवन्तं:
अर्धेन उर्धं सुमध्ये न अन्तं ।।१।।

मध्य— दीण दयाल दा आलश्च, पर्सि पदरज सणाथकम्
काल कर्म सर्व नास चं ईमि प्रभूता बल जाणितम् ।।

अन्त—पूरर्व सब्द व भेद भेदो स्वेत ब्रह्म सरूपणम्
दरिया भाष्यं तत्त् सारं ज्ञाण ब्रह्मं निरूपणम् ।।

विषय—द्वैताद्वैतवाद, निर्गुण-सगुण-ब्रह्मनिरूपण, विहंगम-योग और पीपिलिक-योग वर्णन, सद्गुरु कीर्त्तन तथा हिंसा और पाषण्ड-बहिष्कार आदि ।

टिप्पणी—ग्रन्थ सुन्दर अवस्था में है । लिपि अस्पष्ट है । भाषा (विकृत) संस्कृत है । हस्तलिखित प्रति हाल की है; परन्तु पोथी पुरानी है; क्योंकि सन् १६१० ई० में बुकानन ने इसका उल्लेख किया है । कुछ लोग इसे कोकिल साहब की भी रचना मानते हैं* । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद) के दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

६५. (क) ग्यान दीपक ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब । लिपिकार—लोकराज दास । अवस्था—सुन्दर, हाथ का बना प्राचीन मोटा कागज । पृष्ठ-सं०--१८४ । प्र० पृ० पं०—लगभग १७ । आकार—४½"×६½" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल-—संवत् १६१३ वि०; सन् १२६३ साल, चैत्र बदी कृष्ण-पक्ष, नवमी, एतवार ।

प्रारम्भ— सत्तनाम
ग्रन्थ ग्यान दीपक
भाखल दरिया साहब हंस
उबारन मुकूति के दाता दीन देयाल

।। साखि ।।

प्रेम जुगूति नीजु मुल है ।। गुर गमी करो सुधार :
दआ दीपक जबही बरे ।। दर्सन नाम अधार : ।।

मध्य—छप लोक मे ममेरहउ ।। सदा पुर्ख कए पास
तीनि लोक जम लुटीआ ।। कोइनी मरी सेके नाहो दास ।।

अन्त—हीरा मनी नीजु दास है ।। सभ दासन्ही को दास
सतगुर से परचै भइ ।। ब्रीगसा प्रेम परगास ।।

---

* देखिए, डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्र-कृत 'दरिया—एक अनुशीलन' ।

विषय—सद्गुरु और संत की वंदना । निर्गुण तथा त्रिगुण-ज्ञान द्वारा मुक्ति । अमरपुर का वर्णन । पाषण्डों का उपहास ।

टिप्पणी—ग्रन्थ की अवस्था अच्छी है । विषयों का प्रतिपादन बड़े सुन्दर ढंग से किया गया है । पाषण्डों का उपहास, आत्म-निरोध, अहिंसा और ईश्वर-भक्ति आदि विषय पठनीय हैं । लिपि सुवाच्य है । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद)-स्थित दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ है ।

६५. (ख) भक्ति हेतु—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब । लिपिकार—हीरादास, लोकराज दास । अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना मोटा कागज । पृष्ठ-सं०—६६ । प्र० पृ० पं०—लगभग १४ । आकार—४½"×६¼" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—संवत् १९१२ वि०, माघ सुदी-प्रतिपद्, बुधवार ।

प्रारम्भ—"सत्तनाम ।
शत सुक्रित साहब ग्रंथ भगित हेतु भाख
ल दरीआ साहब मुक्ति के
दाता अगम ग्यान ।।साखी।।
ग्यान भगित नीजुशार है शुनो सर्बन चीतलाए
बीगित बीक्ति बीख्यान एहः ब्रह्म अनुप देखाए ।"

मध्य—"अबीगती रूप ऊपार है : कोबरने तेहीठावः
सत शब्द पहचानीहें : सोइ बसही नीजुगाव ।।"

अन्त—"मुलनाम गतिपार कथा बहुत बीस्तार है
संतहि करो बीचार : संसे सकल बीसारी कै : ।।"

विषय—अनेक उदाहरणों द्वारा ज्ञान-भक्ति-विवेचन, सद्गुरु-स्तुति और साधु-असाधु-वर्णन ।

टिप्पणी—ग्रन्थ सुवाच्य है । कागज टिकाऊ है । लिपि स्पष्ट एवं सुन्दर है । लिपिकार दो हैं, अतएव दो प्रकार के अक्षर लिखित हैं * । यह ग्रन्थ परिषद् संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा

*** ग्रन्थ के अन्त में भ्रमवश 'ग्रन्थ संपुरन अमरसार लीषल भइल' लिखा गया है ।**

(शाहाबाद)-स्थित दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६५. (ग) **ब्रह्म-विवेक**—ग्रन्थकार--संतकवि दरिया साहब। लिपिकार--लोकराज दास फकीर। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना मोटा कागज। पृ० सं०—६७ से १०४। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—४½"×६¾"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् १९१३ वि०, मिति (२) दूज, चैत्र-शुक्ल, सोमवार।

प्रारम्भ—"सत्तनाम।
ग्रन्थ ब्रह्म बीवेक भाखल
दरीआ साहब मुकुति के दाता
हंस उबारन॥ साखि १॥
ब्रह्म बीबेक ग्यान एह॥ स्रोता सुमती सुधार
ग्यानी समुझी बीचा रहो॥ उतरही भव जल पार॥"

मध्य—"सत के रेख घइचोकी॥ सीआ सउपे तेही जानी
जब लागी राम पलटी हम आवही॥ सीआ बचन लहुमानी॥"

अन्त—"ब्रह्म बीवेक ग्यान एह पढ़ै सुनए चीतलाए
मुकूती पदारथ पाइ है सदा रसे सुखपाए॥"

विषय—सत्पुरुष-माहात्म्य-वर्णन, पाषण्ड-खण्डन तथा सहजयोग-प्रतिपादन।

टिप्पणी—ग्रन्थ सुव्यवस्थित है। लिपि स्पष्ट है। इस ग्रन्थ की पृष्ठ-संख्या पहले ग्रन्थ से सम्बद्ध है। शैली सुन्दर है। यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है। यह धरकन्धा (शाहाबाद)-स्थित दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ।

६५. (घ) **प्रेममूल**—ग्रन्थकार—संतकवि दरिया साहब। लिपिकार—लोकराज दास फकीर। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना सुन्दर मोटा कागज। पृष्ठ-संख्या—१०९ से १२५। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार ४½"×६¾"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् १९१३ वि०, कृष्णपक्ष नवमी, मंगलवार।

प्रारम्भ—"सत्तनाम ।
सत सुक्रित साहब
ग्रंथ प्रेम मुला भाखल
दरीआ साहब मुकुति के दा
ता हस उवारन ।। साषि १
प्रेम कमल जल भीतरे ।। प्रेम भर्म से बास
होत प्रात संपुट खुले ।। भान तेज परकास ।।"

मध्य—"कहैं दरीया सतगुर खोजो ।। सत सब्द ही करो बिचार
अवगुर : ससता जगत में ।। नीरमल मीला न सार ।।"

अन्त—"भीया भवन बीच भग्ति है : रहें पीआ के पास
मन उदास नाहो चाहीए चर्न कमल की आस ।।"

टिप्पणी—ग्रन्थ के कुछ पन्ने फट चुके हैं । लिपि स्पष्ट है । ग्रन्थ के अंतिम भाग के कुछ पृष्ठों को दीमकों ने चाट लिया है । ग्रन्थ में लिपिकार ने अपना पता नहीं दिया है । लिपिकाल में मास-नाम-निर्देश सम्भवत: नहीं है । यह ग्रन्थ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित है । यह ग्रन्थ धरकन्धा (शाहाबाद)-स्थित दरिया-मठ के महंथ साधु चतुरीदास के सौजन्य से डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री द्वारा संगृहीत हुआ ।

६६. रामचरितमानस*—ग्रन्थकार — तुलसीदास । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन, देशी कागज । पृष्ठ-सं०—२३ । प्र० पृ० पं० लगभग—१६ । आकार—६½"×१०" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"जैरामभ्रातासहीतः जैकपीससुग्रीवः
ग्रजहीकेहरीनादकरीः मालुमाहावलसीव
चौपाइ
घटाटोककरीचहुदीसघेरी मुखन्हीनीसानवजावहीभेरी
भएेउकोलाहलनग्रमझारी सुनेउदसाननअतीहंकारी
देखहुवानरकेचठीठाइ वींहसीनीसाचरसैनवोलाइ
असकहीअस्टहास सवकीन्हाघखैठेअहाखीधीदीन्हा"

मध्य—(पृ० सं०—४६) "सुनीदसकंधरीसानतवतेइकीन्हमनहीवीचार
... ..."

अन्त—"नाककानकाटेतेहीजीअजारी, कीराक्रोधमनभइगलानी
सहजभीमपुनीवीनुस्रुतीनासा देखतकपीदलउपजीत्रासा"

---

* क्रम-संख्या ६६ से १०० तक के ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' [बंगरी, मोतीहारी (चंपारन)-निवासी पं० गणेश चौबे द्वारा संगृहीत और प्रदत्त] के हैं ।

विषय—रामचन्द्र-जीवन-गाथा । गोस्वामी तुलसीदास के प्रसिद्ध ग्रन्थ रामचरितमानस के लंकाकाण्ड का खण्डित भाग ।

टिप्पणी—प्रकाशित अन्य प्रतियों से पाठान्तर । प्रकाशित प्रति के उनचालीसवें दोहे से छियासठवें दोहे के पूर्व की चौपाई तक ग्रन्थ की लिपि पुरानी है। प्रारम्भ और पुष्पिका-भाग के खंडित होने के कारण न तो लिपिकार का पता चलता है और न लिपिकाल का ही । यह ग्रन्थ पं० गणेश चौबे, ग्रा० बँगरी, मोतीहारी (चंपारन) के सौजन्य से प्राप्त ।

६७. श्रीमद्भगवद्गीता—हिंदी-रूपान्तरकार—भुवाल । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन, देशी कागज । पृष्ठ-सं०—४४ । प्र० पृ० पं० लगभग—४२ । आकार—५½"×६" । भाषा—हिंदी । लिपि--नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

दोहा

प्रारम्भ—"आरजुन सो प्रभुभाखा गीता ग्यान अपार ।
जन भुआल के स्वामी करहु मोर उवार ।।

चौपाइ

धीतरास्टकशंजैशोकहइ ध्रमछेत्र कुरुछेत्रजे अहइ
ममसुतपंडोहैनरनाहा उस समजुधी करे ......"

मध्य—(पृ० सं०-२२) "मोरीभग्तीकरुआरजुन दुरलभभीसार
औरदेवतहीपुजैसोनहीउतरेपार"

अन्त—"गीतामहजोकहा वीचारी सोइभाखाक्रीस्न........
शुनतकाथाचीतभैउ अनंदा गीताशुनत गऐस.......

दोहा

हरीजनशोकरोवीनती दोसनलावहु मोही
जन भुआलके स्वामी शावीधी से वातोंही
ईतीश्री:भागवतगीता सुपनेख असतुती व्रम्हवीघे आजोभ्य
........क्रीसनआरजुन शंवादेसन्यासिजोगवरनो नाम
आठाहभो अध्याए ।।१८।।"

विषय—प्रसिद्ध संस्कृत-गीता का दोहे-चौपाइयों में हिंदी-रूपान्तर । कृष्ण और अर्जुन का संवाद ।

टिप्पणी—कवि भुवालस्वामी खोज में नये मिले हैं । नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में यह ग्रन्थ मिला है, जिसमें लिपि-काल सं० १७६२ वि० है । देखिए खो०—वि० १६०६—१६११-ग्रं० सं०—१३२ । ग्रन्थकार ने प्रारम्भ या अन्त में अपने संबंध में स्थान, काल तथा रचना आदि का कोई भी संकेत नहीं किया है। दोहे-चोपाइयों में रूपान्तरित यह ग्रन्थ भा"ा, रचना

तथा वर्णन की दृष्टि से संग्रहणीय है। प्रारम्भ का प्रथम पृष्ठ जीर्णता के कारण अवाच्य है। लिपि-शैली पुरानी कैथी से मिलती-जुलती नागरी है। यह ग्रन्थ पं० श्रीगणेश चौबे के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

६८. भक्त-विवेक—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—जीर्ण-शीर्ण, पुराना देशी कागज। पृ०-सं०—६४। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। आकार—७½"×६"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"नामप्रतापतेभऐरनधीरा नामवीभीखनरहापस्चारि
नामप्रतापतेभऐअधीकारि भोलनीशवरो मलादनिखादा
नामप्रतापते कीवोप्रसादा"

मध्य—(पृ० सं०--४६) चौपाई। "कहेनारदशुनुकाशीपराइ भेखप्रतापकहोमे गाइ
जनीमोहीकेकरमवेकारा भेखप्रतापताहिकेतारा
हाशीहेतुतुह कीन्हभुआरा"

अन्त—"तेहीतेजानुसकलसबसारा भुठकहतजानहीसबकोइ
अस्तुतिनीदादुइसमहोइ गुरुमुखहोतेमनेनाकोजे
भजन······सुधानीरपीजे"

विषय—रामनाम-महिमा-वर्णन और 'गुरुमुख' विशेषता-प्रतिपादन।

टिप्पणी—ग्रन्थ का प्रारंभ और अंत खंडित है। ग्रन्थकार और लिपिकार का नामोल्लेख ग्रन्थ के मध्य में भी नहीं हुआ है। ग्रन्थ की यत्र तत्र अवाच्यता का कारण ग्रन्थ की जीर्णता है। दोहे-चौपाइयों में लिखित यह ग्रन्थ भक्तों की गाथा तथा भक्तिवैशिष्ट्य-द्योतक कथाओं के उदाहरणों से भक्ति के महत्त्व को पुष्ट करता है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण के अनुसार इस ग्रन्थ के रचयिता बोधीदास हैं। उक्त सभा की खोज में उपलब्ध दो पाण्डुलिपियों का लिपिकाल क्रमशः सं० १९३० वि० और १९३६ वि० है। सरभंग-साधुओं में भी एक बोधीदास हो चुके हैं, किंतु ये उनसे भिन्न प्रतीत होते हैं। काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा का दे०—खो० बि०—१९२९--३१ ई०; ग्रन्थ-संख्या ५५ और ५५ (बी)।

ग्रन्थ की लिपि पुरानी है। पं० गणेश चौबे, बँगरी, मोतीहारी (चंपारन) के सौजन्य से 'चौबे-संग्रह' के लिए यह ग्रन्थ प्राप्त हुआ।

६९. ज्ञानसरोदै—ग्रन्थकार—श्री चरनदास। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, मोटा देशी कागज। पृ० सं०—३२। प्र० पृ० पं० लगभग—१६।

भाषा—हिंदी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—
फाल्गुन कृष्ण १२ । संवत्—१८७७ वि० ।

प्रारम्भ—"रामजी
श्रीगनेसाऐ नमः ।
सुखदेवजो सहाऐ ।। ग्रन्थ ग्यान सरोदै ।। श्री चरणदास **क्रीत** ।।
दोहा ।। नमोनमो सुखदेवजी । प्रनमों कुरू अनंत ।।
तु प्रसाद संचर भेद को ।। चरनदास बरनंत ।।
परसोतीम पर आतमा ।। पुरन वीस्बो बीस
आदो पुरुस अवीचल तेही ।। ताही नवावो सीष ।।
कुंडलिया ।। छरदंड सो कहत है । अछर सो टंग जान
नीह अछर स्वासा रहीत ।। ताही कोमन आन
ताही को मन आनी ।। राता दीन सुरती लगावो
आप आप वीचारी ।। औरन सीस नवावो ।।"

मध्य—(पृ० सं०—१६)
"हानी होई वहरै नही, आवन की नही आस
दहीने चलत न चलीऐ, दछीन पछीम जानी ।
जारे जाऐ बदुरे नहां तहां कछु आवै नाही
दहीने स्वर मह जाइऐ पुर्व उत्तर मत जो"

अन्त—"प्रोथी के प्रगास मे जुधो करै जो कोऐ
दोउ दल रहे बराबरी हारी वाऐ मो होऐ
अग्नी संत के वहतही जुधकरन मती जाव
हारी होऐ जीतै नही और आव तन घाव ।।"

विषय—संत-साहित्य । कबीर-दर्शन से मिलती-जुलती भावना । नाद, विन्दु, इड़ा, चक्र, अनाहतनाद, शब्द, वैन, पहिया, काल **और** निकाम आदि का विवेचन । निर्गुण-विचारधारा की मीमांसा से ओतप्रोत । देखिए—
"निराकार त्रलीष्कतु देही जानी अकार ।
आप न देही मानते ऐही तन तत् प्रसार ।।
देह मेरे तु अमर अविनासी त्रीवान ।
देह नही तु व्रभ है व्यापो सकल जहान ।।"

योग की स्वर-प्रक्रिया और गमनागमन से सम्बन्धित श्वास के फलाफल का दिग्दर्शन । विभिन्न दिशाओं की यात्रा में दक्षिण, वाम एवं मध्य श्वास की प्रक्रिया एवं आरोहावरोह के परिवर्त्तन की विधि और उसका प्रभाव । पाप, पुण्य, सद्‌गति, सतपुरुष, नाम और परमलाभ आदि का पुनः-पुनः प्रयोग और मोक्षधाम तथा निर्वाण की विशिष्ट व्याख्या ।

टिप्पणी— इस ग्रन्थ के ग्रन्थकार चरणदास हैं। जैसा कि पुस्तक के नाम से ज्ञान होता है, सम्पूर्ण पुस्तक स्वर-प्रक्रिया-विधि का अवबोधन कराती है। भाषा सरल है। हस्तलिखित प्रति अव्यवस्थित है। दोहा, कुण्डलिया और चौपाई—ये तीन प्रकार के ही छन्द इस पुस्तक में मिलते हैं। कबीर के समान 'अनहद', 'सूक्ष्म आदि पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग हुआ है। 'ब्रभ' शब्द का प्रयोग 'ब्रह्म' के अर्थ में किया गया है। स्वर-प्रक्रिया को ब्रह्म-प्राप्ति (निर्वाण) का माध्यम बताया गया है। देखिए —

"आसन पदुम लगाइके ऐक ब्रत नीत साच।
बैठे लेटे डोलते स्वास ही अव राच।।"

ग्रन्थकार चरणदासी संप्रदाय के प्रवर्त्तक और प्रसिद्ध संत थे। नागरी-प्रचारिणी-सभा (काशी) की खोज विवरणिका के अनुसार इनका पहला नाम रणजीत था; सुखदेव के शिष्य; डहरा (अलवर, राजस्थान)-निवासी; जाति के धूसर बनियाँ, सहजोबाई नाम की एक स्त्री इनकी शिष्या थी। जन्मकाल सं० १७६० वि० और मृत्युकाल सं० १८३८ वि०। इनके अबतक अठारह ग्रन्थ खोज में नागरी-प्रचारिणी-सभा को मिले हैं। देखिए — खोज विवरण १३०५, ग्र० सं० — १७, १८, १९; १९०६ — ८, ग्रं०-सं० — १४७; १९०९ — ११, ग्रं० सं० — ४५; १९१७—१९, ग्रं०-सं० — ३७; १९२० — २२, ग्रं० सं० — २९; १९२३ — २५, ग्रं०-सं० — ७४; १९२६ — २८, ग्रं० सं० — ७८; १९२९ — ३१, ग्रं०-सं० — ६५; १९३२ — ३४, ग्रं० सं० — ३८। ग्रंथकार ने स्वयम् एक ग्रन्थ में लिखा है — 'चरनदास हित सूँ कियो ग्रन्थ अनेक प्रकार। अष्टादस और चारको काढि लियो तत्सार।।' यह ग्रन्थ पं० श्री गणेश चौबे, ग्राम बँगरी, जिला चंपारन के सौजन्य से प्राप्त।

७०. **स्वासागुंजार**—ग्रन्थकार — × । लिपिकार — × । अवस्था - अच्छी । प्राचीन देशी कागज । आदि खंडित और मध्य का एक पृष्ठ भी । पृष्ठ-सं० — ८० । प्र० पृ० पं० — लगभग ३४ । आकार — ५½" × ७¾" । भाषा हिन्दी । लिपि — नागरी । रचनाकाल × । लिपिकाल × ।

प्रारम्भ— "कामक्रोधममीतालपटानी ।। अंतकालसतजुगकरभैऐउ ।
चारीउजुगपरलैतरगऐउ ।।

समो

ऐकजुगकेवीतेचारीजुगभऐनासा ।। ऐकनादवारीजुगखाऐसतजुगकीन्हग्रास"

मध्य—(पृ० सं० १५६)

चौपाइ । ''ऐहीवीधीगहैसवदकीआसा नीसुवासरहमताकेपासा ।।
अतीअधीरकरनीकरुसुरा करनीकीऐभीलैगुरुपुजा ।।''

अन्त— ''जीभ्याकहीतोजगतरे ।। प्रकटकहोनजाऐ ।। गुपतप्रवानदेतहो ।।
राखीसीसवढ़ाऐ ।। हंसातुमतीउरपो ।। कालकोकदमोपरती ।।
अमरलोकप्हुचाइही ।। चलींहवभवजलजोती ।। ऐतोगरंथस्वासागृं
उदैरेकसारसंपुरन ।। जोपरतोदेखादेखासोलीखाममदोखनदीअतेपंडीत
जनसोमीनतीमोरीटुटलअछरलेवसभजोरीसुभमस्तु''

विषय— श्वास के विचारों का वर्णन, गुरुपूजा का महत्त्व और मोक्ष-प्राप्ति के साधन का प्रतिपादन।

टिप्पणी— यह ग्रन्थ खण्डित है। प्रारम्भ के ११८ पृष्ठों का अभाव। ग्रन्थ के केवल मात्र अवशिष्ट ८० पृष्ठों के कलेवर से ही सन्त-साहित्य के उत्तम विचारों का प्रस्फुरण होता है। अन्त में ग्रन्थकार, लिपिकार अथवा ग्रन्थ-रचनाकाल या लिपिकाल का संकेताभाव है। नागरी-प्रचारिणी-सभा (काशी) को कबीरकृत स्वासुगुंजार की प्रति खोज में प्राप्त हुई है। दे० - खो० वि०—१९०९-११; ग्रन्थ-सं०—१४३ जे०। ग्रन्थ की लिपि-शैली प्राचीन है। कैथी अक्षरों से मिलती-जुलती लिपि है। यह ग्रन्थ बँगरी (मोतीहारी)-निवासी पं० गणेश चौबे के सौजन्य से चौबे-संग्रह' के लिए प्राप्त हुआ।

७१. लक्ष्मी-चरित्र—ग्रन्थकार – ×। लिपिकार – मोहनलाल। अवस्था – प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। पृ० सं० – ८। प्र० पृ० पं० – लगभग २८। आकार – ९"×५½"। भाषा – हिन्दी। लिपि – नागरी। रचनाकाल – ×। लिपिकाल – १२७० साल (सं० १९१९ वि०, १८६३ ई०)।

प्रारम्भ— ''श्रीपोथीलछीमीचरीत्र ।। चौपाई
जटामैंपुरवीलससेसाचीतयमैंआऐचरनतुम्हसाची
जुगजुगमोहीचरनतुम्हआसातबहोदखजीपुष्पहीआसा
लछीमोकारनराखेउनाउदाआकरहुरहोतुम्हठाउ
मैथीरजनीतुम्हठाकुरमोरीचरनकमलसेवककरजोरी''

मध्य— (पृ० सं०-५) ''बोलैलछीमीप्रानपीआरी
कहहीचरनसोअप्रीत सारीमैंतुमत्रीआसदासंगवासी''

अन्त— ''… नगुन कछु न करीहै प्रगासी
धनवोहलछीमीकेमहीमाजनमीदेखुसंसार
दुखसुख लीखा वीधाता सोकोउ मेटेपार
इतीश्रीलछीमीचरीत्रसंपुरनजोदेखासोलीखाममहोसनहीअते
पंडीतजनसेवीनतीमोरीटुटलआखरलेवसबजोरी''

पोथीदुखीतसरदारलीखनीहारमोहनलालबसोवासमौजे
डुमखानाटोलासरैंआ ता० १ जेठ सन् १२७० शाल्ल"

विषय— अवतरण और विष्णु का आत्मनिवेदन— समुद्र-मंथन से लक्ष्मी को जन्म-चर्चा। लक्ष्मी का पुलकित होना। लक्ष्मी की विष्णु से उक्ति। विभिन्न तिथियों में लक्ष्मी-पूजन का महत्त्व-वर्णन और नारी-सम्मान तथा पूजा की विशेष चर्चा।

टिप्पणी— यह ग्रन्थ खोज में नवोपलब्ध है। ग्रन्थकार का नामोल्लेख नहीं है। ग्रन्थ संभवत: अप्रकाशित है। भाषा में यत्र-तत्र भोजपुरी के भी शब्दों का प्रयोग हुआ है। ग्रन्थ की लिपि पुरानी है। यह ग्रन्थ श्री गणेश चौबे जी के दिवंगत पिता श्री पं० भरथरी चौबे जी के द्वारा संगृहीत हुआ था। परिषद्-संग्रहालयस्थ 'चौबे संग्रह' के लिए प्राप्त।

७२ बिहारी सतसइ—ग्रन्थकार—बिहारी लाल। लिपिकार— × । अवस्था—प्राचीन। देशी कागज, जीर्ण-शीर्ण। पृ०-सं०—१६। प्र० पृ० पं० —लगभग ४८। आकार—८३/४" × ५३/४"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल— × ।

प्रारम्भ— "श्रीगणेशाय नमः ॥
मेरीभववाधाहरोराधानागरिसोइ
जातनकीझाईपरतस्यामहरितद्युतिहोइ १
निकिदइअनाकनीफीकीपरीगोहरितरोमतें
तारणविरुदवारकवारणतानि
जमकरिमु"" ""हरिपरयोइहिधनहरिचितलाइ
विषैत्रिषापरिहरिभज्यौंनरहरिकेगुनगाइ ३"

मध्य—(पृ० सं०-१५)
"प्यासेदुपहरजेठकेरहेमतीरनसोधि
मरुचरुपाइमतीरहीमारुकहतपयोधि ॥ ६१४ ॥
दुसहदुराजप्रजानिकांक्योंनवढेदुखदंद ॥
अधिकअधेरेजगकरतमिलिमावसरविचंद ॥ ६१५ ॥"

अन्त— "इहीआसअटक्योरहेअलिगुलावकेमूल
ऐहेंकेरिवसंतरितुइनिडारनिवेफूल ॥ ६३८ ॥"

विषय— श्रृंगाररस के दोहों में श्रृंगाररस-वर्णन।

टिप्पणी— हिन्दी के प्रसिद्ध कवि, ग्वालियरराज्य के निवासी सं० १७२० वि० के लगभग वर्त्तमान, जयपुर-नरेश जयसिंह मिर्जा के आश्रित महाकवि बिहारीलाल (दास) की प्रसिद्ध रचना की खंडित प्रति। पृ०-सं० ३, ४, ७, ८, ६, १५–२२ नहीं हैं। पृ०-सं० २४ के बाद ग्रन्थ खण्डित हैं। ग्रन्थ की लिपि पुरानी है। मध्य के पृष्ठ कीटाणुबिद्ध हैं। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे, बँगरो (मोतिहारी-चंपारन) से प्राप्त हुआ। श्री चौबेजी को उक्त संग्रहालय के लिए यह ग्रन्थ सतवरिया (चंपारन)-निवासी श्री जीतन चौबे तथा उपेन्द्रनाथ मिश्र के सहयोग से मिला था।

७३. विज्ञान-गीता— ग्रन्थकार—केशवदास। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज, जीर्ण-शीर्ण और खण्डित। पृष्ठ-सं०—५२। प्र० पृ० पं०—लगभग ३४। आकार—८¾" × ६"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"दोहरा ।। बोरसिंघत्रिपकीभुंजा। जद्यपिकेसबतूल
एकसाहिकौंसूलसीएकसाहिकौंफूल ।।२०।।

कवित्त ।। लूटिबेकेनातेंपुरपहनुतोलूटीयतुतोरिबेकेनातेंगढतोरिडारीयतुहैं ।।
घालिबेकेनातेंगर्वघालियतिराजनिकेजारिबेकेनातेंअरिउरजारीयतुहैं ।।
राजावीरसिंघजूकेराजगुनीतोयतुहारिबेकेनातेंअनिजन्मुहारीयतुहैं ।।
बांधिबेकेनातेंतालबांधियतिकेसोंराइमारिबे-
केनातेंतोदरिद्रभारोयतुहै ।।२१।।"

मध्य— (पृ० सं०-२६)
"कुसलप्रश्नसबबूझिकैतबबूझोनृपनाथ ।।
करुणापतश्रधासकलकहौआपुनीगाथ ।।"

अन्त— "कियोवत्सबत्सलजानियै ।।
अघसिंघुअस्तकर्योअगस्तिसदाप्रसस्तिवषानियै ।।
मनमारकंडुविहीनहोमुनिमारकंडुपमानियै ।।"
(इसके आगे के पृष्ठ कीटाणुबिद्ध होने के कारण अस्पष्ट हैं।)

विषय— विज्ञान-गीता का पद्य में वर्णन। विभिन्न ऋतुओं पर रचना।

टिप्पणी— ओरछा के सुप्रसिद्ध कवि केशवदास (मिश्र) के अन्य कई ग्रन्थ खोज में मिले हैं। काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा की खोज विवरणिकाओं में इनकी उपलब्ध पाण्डुलिपियों की चर्चा हुई है।

यह पाण्डुलिपि आदि और अन्त में खण्डित होने के कारण लिपि-काल का अवबोध नहीं कराती है। लिपि पुरानी प्रतीत होती है। आदि के २ पृष्ठ नहीं हैं। मध्य के भी कई पृष्ठ खण्डित हैं। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे (बँगरी-चंपारन) ने सतवरिया (चंपारण)-निवासी श्री जीतन चौबे और श्री उपेन्द्रनाथ मिश्र के सहयोग से प्राप्त किया।

७४. रामचरितमानस—(बालकांड) ग्रंथकार—तुलसीदास। लिपिकार — × । अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ संख्या—२६०। प्र० पृ० पं०—लगभग १४। आकार—८" × ४¼"। भाषा—हिन्दी (अवधी)। लिपि–नागरी। रचनाकाल–प्रसिद्ध। लिपिकाल— × ।

प्रारम्भ— "प्रभुमुसकानाचरीत बहुतवीधीकीन्हचहै ।।
कहौकथासूनाईमातुवूझाइजेहीप्रकारसूतप्रेमलहै ।।
मान्तापूनीबोलीसामतोडोलीतजहूतातऐहरूपा ।।
कीजैसासूलीलाअंतीप्री असीला·········· ।।"

मध्य— (पृ०-सं० १०७)
"सोप्रभु जानइ अंतरजामी। परब्रह्ममोर मनोरथस्वामी ।।
सकलहीवीहाऐमांगुप्रापमोही······················ ।।"

अन्त— "वीस्ववीजैजसूजानकी पाई। आऐभवन व्याही सब भाई ।।
सकलमानुख करम .तुम्हारे। केवलकौसोक कीपा तुम्हारे ।।
जेहीदीनगऐउतुम्हैवीनुदेखे। तेवीरंचोजनुपारहीलेखे ।।
दोहा ।। कोन्हसो······जयसहजसुचो। सरीतापुनीत नेहाऐ ।।'

विषय— गो० तुलसीदास-विरचित रामचरिमानस का बालकांड।

टिप्पणी— ग्रंथ की लिपि पुरानी है। प्रचलित रामायण से पाठभेद है। ग्रंथ खण्डित है। 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे (बँगरी-चंपारन) द्वारा संगृहीत और प्रदत्त।

७५. रामचरितमानस—(उत्तरकांड, ग्रंथकार –तुलसीदास। लिपिकार - × । अवस्था प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज, खण्डित। पृ०-सं० – ५०। प्र० पृ० पं० – लगभग ४५। आकार – ८½" × ४¼"। भाषा – हिन्दी (अवधी)। लिपि – नागरी। रचनाकाल - प्रसिद्ध। लिपिकाल – × ।

प्रारम्भ— 'महीमंडलमंडनचारु····श्रीत। साऐकचाप निखंगवर।''

मध्य— (पृ०-सं० २५) दोहा
"अैसोप्रसंगवीहँपयतीकीन्हकाकसोजाऐ।
सोसवसादरकहीहै । सुनहुउमाचीतलाऐ ।।"

अन्त — "नमोभुतीक्रोटोप्रमासनो..........।
सअुरनीकलंक लोलनी ".............।।"

विषय — रामचरितमानस का उत्तरकांड (खण्डित)।

टिप्पणी — इस खण्डित ग्रंथ की लिपि-शैली पुरानी है। प्रचलित प्रतियों से पाठभेद है। 'चौबे-संग्रह' के लिए बँगरी (चंपारन) - निवासी श्री गणेश चौबे द्वारा प्रदत्त।

७६ सूर्यकथा — ग्रंथकार – × । लिपिकार – × । अवस्था – हाथ का बना देशी कागज, जीर्ण-शीर्ण और खण्डित। पृ०-सं० – २५ । प्र० पृ० पं० – लगभग ३६ । आकार – ५" × ६¾" । भाषा–हिन्दी । लिपि – नागरी । रचनाकाल – × । लिपिकाल – × ।

प्रारम्भ — "तेजप्रतापहै आगोना समाना। तुम आदीतपरमेस्वर स्वामी
अलंखरंजनीजनअंतरजामो । वरनोनजोई आदीतकै लीला
धरमधुरंधर परम सुसीला
जोतीकलाचहुवारवीराजै । जगमगकानन्हकुंडलछाजै
नीलवरनछ वीतुरगसवारी । ग्यान नीधानधरमव्रत धारी
जासुकथामें कहाबखानी । सोपुरुष है आगानो समाना
महिमा आदीत अगम अपारा । तीनोभुअनमें जोतीउजीआरा

दोहा ।। आदीतकथा पुनीत है गावही संभु सुजान ।।
तोनीभुअदछवीजोती है करो प्रताप वखान ।।"

मध्य – (पृ०-सं० १२)

"नीसोसमनग्रसकल अंधारा । उगहीनभानुनहीजोतीउजीआरा
तहावासकलजुगकरहोई । तवसोपापमलीछ न सोई ।।
ऐहीवोधीकवहोउगहीनभाना । मैतोहीवचनकहो परीमाना ।।"

अन्त — "अबसुनुऐहअस्थानन्हकहई । पाटजोगपुजाकह गहई ।।
वीवुधनदीत्रासरजुतीरा । वासी मंदीर उत्तीमनीरा ।।"

बिषय — पद्मपुराणांतर्गत सूर्य भगवान् की कथा, माहात्म्य और व्रतफल का वर्णन आदि ।

टिप्पणी - ग्रंथ का आदि और अंत खण्डित है। नागरी प्रचारिणी-सभा के खोज-विवरण के अनुसार रामायण के रचयिता तुलसीदास से भिन्न तुलसीदास की यह रचना है। उक्त खोज

विवरण में इस ग्रन्थ के ग्रन्थकार का रचनाकाल सं० १८७० वि० (सन् १७१३ ई०) है। उक्त विवरण में दिये गये उद्धरणों से प्रस्तुत ग्रन्थ के दोहे-चौपाइयों से तुलना करने पर कई पाठ-भेद भी हैं। दे०—काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा का खो० वि० १९२६–२८ ई०; ग्रं०-सं०–४८५ ए०, बी०, सी०, डी०, ई०, एफ्०, जी०, एच्० और आई०। अबतक अप्रकाशित। यह ग्रन्थ खण्डित है। चौबे-संग्रह' के लिए श्री गणेश चौबे, बँगरी (चंपारन) द्वारा संगृहीत और प्रदत्त। यह ग्रन्थ चौबेजी को अपने पिता (स्व० भरथरी चौबे) से प्राप्त हुआ था, जिसे चौबे जी के पितामह (स्व० भगत चौबे) ने संकलित किया था।

७७. **क्षेत्रमिति और पहेलियाँ**—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज, जीर्ण-शीर्ण और खण्डित। पृष्ठ-सं०—५८। प्र० पृ० पं० लगभग १२। आकार - ८″×५″। भाषा – हिन्दी। लिपि – नागरी। रचनाकाल - ×। लिपिकाल–×।

प्रारम्भ— "अर्थ विषमकोण और आजात्यायत चतुरभुज के मापने के यह काम दोहे की किसी एक कोण से लंब करके लंब भुमी से गुण कर देने से क्षेत्रफल मालुम होता है जैसा (अ क म ब) क्षेत्र का (अ) कोण से (अ च) (१६) है और (क म) (२८) है तो क्षेत्रफल बताओ।

$२८ + १६ = १४४८ \div ४०० = ३\frac{२४८}{४००}$
$२४८ \div २० = १२\frac{८}{२०}$ } ३।।२।३ यही उत्तर हुआ
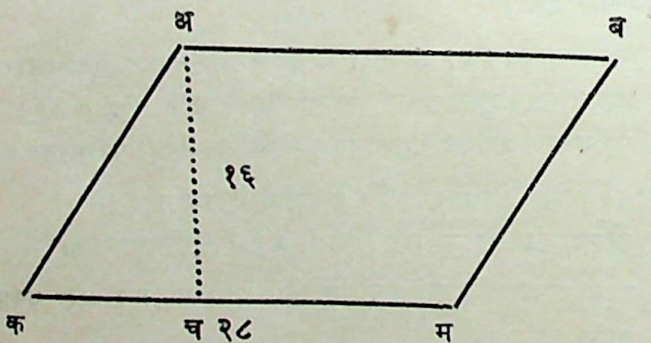
(विषम चतुर भुज)
(दोहा) (६)

सोहे भुजा एकत्रकरी अर्ध २ करीताही
(४) गुनहु युगल तस फल मिलै विषमचतुरभुज आहि"

मध्य—(पृ०-सं० २६) "(अंडाकृति के माप) अंडाकृति का क्षेत्र निकालने का कायदा। (दोहा) (३०)

(१) "युगल व्यास के घोत कर पुनि श्रुति सर वसु सुसात
यह दशमलते गुनन करी फल सु अंडहोइ जात"

अन्त— "घंटा के शुइ (क) घड़ी के सूइ (ग) है जबघंटा के शुइ (१) घंटा चलता है तब मीन्ट १२ घंटा चलता है इससे मालुम होता है के जब घंटा के शुइ १ घंटा चलेगा तो मीन्ट १२ बजा··· ·····।"

विषय— "ज्यामिति-गणित-संबंधी दोहे-चौपाइयों में रचना और अर्थ तथा उदाहरण-सहित विवेचन। विविध ग्रामीण मंत्रों तथा पहेलियों से युक्त।

टिप्पणी— ग्रन्थ खण्डित है। लिपि-शैली प्राचीन है। ग्रन्थ संभवत: अप्रकाशित है। ग्रन्थ-संकलयिता पं० गणेश चौबे के अनुसार इसमें संकलित पहेलियाँ खुसरो की हैं और बिहारी के दोहे भी। 'चौबे-संग्रह' के लिए बँगरी (चंपारन)—निवासी पं० गणेश चौबे ने मुंशी धनुषधारी लाल के संग्रह से उनके कर्मचारी के सहयोग से प्राप्त किया।

७८. सिद्धांतपटल— ग्रन्थकार - रामानन्द (गरु)। लिपिकार - ×। अवस्था— प्राचीन। हाथ का बना देशी कागज। पृ०-सं०— २५। प्र० पृ० पं० - लगभग १२। आकार —६"×४"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल ×।

प्रारम्भ— श्रीमतेरामानुजायनम: अथ सिद्धांतपटल प्रारम्भ ओं अब आगे श्रीरामनन्द अवधूत शेली सिंगीजंघअंचोटा·········घडोद········ छोटा··· ········ एडाचमरअबानीदिल्लीबल··· ···मंचराटो······ विरलाहोई··· ··· ····· ··· ··· ····· ··· कामकीकुंचणिसकेसनकादिक माथेकामुकुटसिंदुरकीश्रीअंगुरीकीअंगुठी हाथ का कडाजहा..."

मध्य—(पृ० सं०-१२) "ओंप्रथमजगतहेतप्रगटेसनकादिकावाहांसे आयेकोनफुर ·········वरग····· नसुआ··· ··· श्री गुरुशिषसुनीफुरगयेदूरवासा ऋषिश्वराये शोस्नकिलकडीसुरतिकाभंडाररक्षाकर जानकी माता इतियुगलभंडारबिजमंत्र"

अन्त— अथभभुतिपटलनमंत्र
सेतसमुद्रटे तइमंदीरचोत्रधवछायाउलटंत भभुतीपलटंतकाया कोइसिधनकोजोगसादी कपाया उलटेपलटे खडेराग श्रीगुरु-रामानंदजी ॰ कहेवचासाचाजोग ईतिश्रीगुरुरामानंदजीवीरंचित-सिधातपटलसंम्पुणम्"

विषय— "गुरुरामदास के सिद्धांत। गुरुरामानंदजी पंचमात्रा, गुरुरामा-नंदजी का अभूषणबीजमंत्र, अफीमंत्र, सनकादिकमंत्र, कूचीमंत्र, निरंजनमंत्र, सिंदुरमंत्र, यज्ञोपवीतविधि, कानपरचढ़ावनमंत्र, यज्ञोपवीतसुद्धमंत्र, ब्रह्मतारकमंत्र, भर्तरीमंत्र, कामधेनुमंत्र, चुल्हाचेतावनमंत्र, युयलमंडारबीजमंत्र, तिलकमंत्र, भागवती-मंत्र, भंडारमंत्र, धूनीमंत्र, और पंचधूनीमंत्र, पर आधारित रचना।

टिप्पणी— गुरुरामानंद-विरचित यह ग्रन्थ खोज में नया है। अन्य खोज-विवरणों में इस ग्रन्थ की चर्चा नहीं है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) के खोज-विवरण में 'सिद्धांत' नाम ग्रन्थ का उल्लेख-मात्र हुआ है। दे०—खो० वि०—१९२६—२८, पृ० सं०—७८३। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के लिए बंगरी (चंपारन)—निवासी पं० गणेश चौबे से प्राप्त हुआ।

७९. कोकसार— ग्रन्थकार—आनन्द कवि। लिपिकार—रामलोचन। अवस्था—अच्छी, आदि-खंडित। पृ०-संख्या—४२। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—६"×६"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—३३ भाद्र, १२७० साल, संवत् १८८३ वि०।

प्रारम्भ—"मदनांकुशतैशोचहत : तोसूखहोतसरीर: कोकसारभूमीउचरत :
दोहा : जेहिंतियाकोरतीरुचीनहि : पीयवीलसतजोताहि :
भामीनीमूदीतनहोइकछु : श्रीथासकलतवआहि :
जोजनजानैकोकपढ़ी : करहीसुजतनवीचार :
अतिसूखउपोजैरमनीको : बहुसूखमानेनारि :
अनरूचितियपूखहिमोले : कहेकोकयहभारि :
जैसेरोजीनीवको : आंखीमूदीपोवजाय : १०।
ईतिआकवीआनन्दक्रीतेकोकसारभाखापारतिभेदत्रितीयखंड.समासम् ३"

मध्य—(पृ० सं०-२१) दोहा
"सुरतीसमयमुखमेलीके : सुरतीकरैजोकोय :
सुरतीसमयहारैनही : सुरतीअखंडीतहोय : ६"

अन्त—"अथपदमीनीआसन : चोपाइ :
आसनजानीपरस्परनाम : ताकोकरतपुरुखओवाम
.... पंचदसआसनरहैंतेपुरुखंकरीवेकोकहै :

दोहा

सुनलरसीकजनस्रवनेधनी : कोकसारसुखनास
चहैतचतुरसूनैंचहैकरतमुढ़अतिहांस
इतीश्रीकोकसारकथास्माप्त प्रतोजोदेखासोलीखाममदोखनदीअतेसजन-
जनसोवीनतीमोरीटुटलआखरपरहवजोरीलीखीरामलोचनजी...."

विषय—पुरुषों तथा स्त्रियों के भेद और उनके लक्षण, दिनानुसार शरीर के विभिन्न स्थानों में काम-निवास-वर्णन, चुम्बन-आलिंगनादि-वर्णन, विभिन्न आसनों-सहित वन्ध्यात्वदोष-परिहारोपाय और विविध ओषधियों से अनेकविध उपचार-प्रक्रियाओं का निर्देश। पद्मिनी, चित्रिणी, शंखिनी, हस्तिनी आदि स्त्रियों के लक्षण तथा आसनों का वर्णन।

टिप्पणी—ग्रन्थ के आदि दस पृष्ठ खंडित हैं। कवि ने अपना परिचय नहीं दिया है। अध्याय-समाप्ति तथा ग्रन्थ-समाप्ति में 'आनन्दकृते' ऐसा लिखा है। ग्रन्थ में कोकशास्त्र-सम्बन्धी विषयों का दोहे-चौपाइयों तथा अन्य विविध छन्दों में सविस्तर उल्लेख हुआ है। रचना हृद्य और पठनीय है। ग्रन्थ अप्रकाशित है। कवि और कवि-कृतियाँ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी खोज में मिली हैं। इनकी अन्य 'कोकविलास', 'कोकमंजरी' और 'आसनमंजरी' नामक रचनाएँ उक्त सभा के अन्वेषकों ने प्राप्त की हैं। इनका रचनाकाल सोलहवीं शती का मध्य माना गया है। दे०—खो० वि०—१९०२, ग्रं० सं०—५; १९०६–८, ग्रं० सं०—१२६; १९१७–१९१९, ग्रं० सं०—७; १९२०–१९२२, ग्रं० सं०—६ ए०, बी०; १९२३—२५, ग्रं० सं०—१३ ए०, बी०, सी०, डी० ई०, एफ०, जी०, एच्०, आई० और जे०; १९२६–२८, ग्रं० सं०—१० ए०, बी०, सी०, डी०, ई०, एफ०, जी०, एच्०, आई०, जे०, के०; १९२७–३१, ग्रं० सं०—११ ए०, बी०, सी०, डी०, ई०, एफ०, जी०, एच्०।

कवि की कृतियाँ जो खोज में मिली हैं और जिनका खोज-विवरणों में उल्लेख हुआ है, उनका रचनाकाल और लिपिकाल अधोलिखित-क्रम से है—

ग्रन्थनाम	लिपिकाल	खोज-विवरण की ग्रं० सं०
१—कोकसार (३८ प्रतियाँ)	१७३४ ई०, १७४८ ई०, १७६५ ई०, १७८१. १८४६. १८५३ ई०, १८८४, १९०१ ई०।	१९०२, ७; १९०६-८ और १९१७ १९—९७ १९२३-२५, १३ डी०, ई०, जी०, एच०, आई०, जे०।
	१८१७, १८३५, १८६९, १८७५, १८९८, १९०१, १८२८ ई०।	१९२३ १-२८, १० सी०, डी०, ई०, एफ०, जी०; एच्०, आई०, जे०।
२—कोकमंजरी (१० प्रतियाँ)	१८६१, १७९४. १९८६ और १८०२ ई०।	१९२९-११ डी०, ई०, जी०, और एच्०।
	१७३४ ई०	१९२०-२२. ६ ए०।
३— कोकविलास	१७९९, १८०० ई०	१९२६-२८. १० ए०, बी०
(१ प्रति)	१७५३, १८६६ ई०	१९२९-३१; ११ बी०, सी०।
४ आसन-मंजरीसार (१ प्रति)	१७७१ ई०	१९२६—२८. १० के०, १९२९—३१; ११ एच्०।

उपर्युक्त विवरणों से प्रतीत होता है कि कोकसार के ग्रन्थकार का रचनाकाल सोलहवीं शती का मध्य या सत्रहवीं शती का प्रारम्भ रहा है। 'मिश्रबन्धु-विनोद' में ग्रन्थकार का रचनाकाल १७११ ई० दिया गया है, किन्तु इसके किसी स्पष्ट प्रमाण का उल्लेख 'विनोद' में नहीं किया गया है। 'कोकसार' की अबतक उपलब्ध प्रतियों का लिपिकाल १७३४ ई० से १९०१ ई० तक है। इस ग्रन्थ का लिपिकाल है १८८३ वि० (१८२६ ई०)। ग्रन्थ की लिपि-शैली पुरानी है। प्रारम्भिक भाग खंडित है और कुछ अन्य दोहे लिखे गये हैं। ग्रन्थ प्रकाशित है। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के ग्रन्थदाता श्रीगणेश चौबे (बँगरी, मोतीहारी, चंपारन) को साढ़ाउमर (बड़ुराज, मोतीपुर, जि०—मुजफ्फरपुर)—निवासी श्री रामदयाल ओझा से मिला।

८०. बीजक —ग्रन्थकार —कबीरदास। लिपिकार — × । अवस्था —अच्छी; हाथ का बना कागज। पृ० सं०—१५४। प्र० पृ० पं० लगभग —१६। आकार—६"×३½"। भाषा–हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपि-काल —१२१२ साल (१६५१ वि०, १८०५ ई०)।

प्रारंभ—"दया गुरूकिलीष्यतेबीचारप्रथमाअनसारपदरमैनी
अंतरजेतीनइदयक नारी।। हरी ब्रह्माताके त्रीपुरारी।।
तेतीरीयाभगलिगअंनन्ता।। ते उनजानेउत्रादीअवंता।।
बाषरीयकविधातेंकोन्हा।। बौदाठहरपाठसा लीन्हा।।
हरिहरब्रह्मामहंतोनाउ।। तोनपुनातोनबरावलगाउ।।"

मध्य—(पृ० सं०—७३) "संतोजागतनीदनाकीजे।।
कालनाषाऐकल्पनहांबीआपेदेहजरानांहोछीजे।।
नुलोटागंगसमुद्रहिसोषेससिओसुरगरासे।।
नोगृहमारारोंगोआबऐठेजलमहंवेमुप्रगासे।।"

अन्त—"हींदुतुरुकबूढोवारा।।
मारीपुष्पकामालिकरदुबीचारा।।
कहिएकाहिकाहानहीमाना।। दासकवोरसोइयेजांना।।
बाहाहैत्रहिजातु हैकरगहेंचहुँनारजौकाहानाहोमानेतो
देषकायकवोर।।१ भतिव.मतोसोसपूर्ण"

विषय—कबीर के निर्गुण-दर्शन का प्रसिद्ध ग्रन्थ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ कबीरपंथ का प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ है। ग्रन्थ की लिपि पुरानी है। 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे से प्राप्त हुआ। चौबेजी ने पं० मथुरा चौबे द्वारा मठगोपाल के एक कबीरपंथी साधु से प्राप्त किया था।

८१. छप्पयरामायण—ग्रन्थकार—तुलसीदास। लिपिकार — × । अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना, मोटा देशी कागज। आदि और अंत खंडित। पृष्ठ-सं०—१२। प्र० पृ० पं० लगभग—१७। आकार—६"×४"। भाषा—हिन्दी। लिपि–नागरी। रचनाकाल–प्रसिद्ध। लिपिकाल—× ।

प्रारंभ—"अस्तुतिकरतकपोतनाथप्रनतारनहारी।
सोप्रभुवेरिगिदया छहोजोकपोतसरनअपना।।
क्रीपाकरिअे श्रीरामचंद्रममहरिअे सोक संतापनो ३"

मध्य—(पृ० सं० ६) "चोत्रकूटवसि अमितकोल भोलन्हकितपावन।।
रहेतहांमुनिवृंदसकलभएसोकनसावन।।

प्रभुहिमनावनभरतआपतसोचतमनमाही ॥
पुरवासीलीअेसंगजाइपहुँचेप्रभु पाही ॥
मीलेभरतअस्तुतिकरतसरनराषहुप्रभु आपना ॥
क्रिपाकरिअेश्रीरामचन्द्रममहरिग्रेसोकसंतापना ॥१५"

अन्त—"वीरहवंततनतपतआपुहितराषतिनैंना ॥
अवविलंब जनिकरहुसोआकहिआरतवैंना ॥
सक्रसुअनमृगहेमजानुप्रभुवानप्रतापा ॥
जानुकवंधअबबालिकहाभैसोसरचांपा ॥'

विषय—गोस्वामी तुलसीदासकृत छप्पय छंद में रामायण का वर्णन ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्रकाशित है और प्रसिद्ध भी । इसकी अनेक पाण्डुलिपियाँ विभिन्न अनुसंधान-संस्थानों में सुरक्षित हैं । 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे ने साढ़ा (चंपारन)-निवासी पं० श्री भागवत ओझा से प्राप्त किया ।

८२. विष्णु पुराण—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—रमनदास । अवस्था—अच्छी, देशी कागज । पृ०सं०—३२ । प्र० पृ० पं० लगभग-२० । आकार—६½"×४" । भाषा —हिन्दी । लिपि-नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—१२ सावन ११३१ साल ।

प्रारम्भ—'सतगुरुकीदाआसोलीषतेवीसुनपुरान
स्रीरामजी साहाऐ ॥ स्रीगनोजी साहाऐ ॥
स्रीभावानी जी सहाऐ ॥ स्रीसकलोदेवजी साहाऐ ॥
स्रीपोथीवीसुनपुरानलीषते ।

चौपाइ

कैसेस्तजुगत्रेतागऐउ । कैसेध्योप्रकलजुगभऐउ ॥
कैसेन्योजन्म अवतारा । कैसे स्रीजिऐ सकल पसारा ॥
कैसेपानीपवन अनुसारा । कैसे कलजुगलीन्ह पँसारा ॥"

मध्य—(पृ० सं०-१६)
"सुनहप्राछीतहरीके चतुराइ । कवनचरीत्रकीन्ह रघुराइ ॥
नग्रध्यारीकाक्रीस्ननेवासा ॥ दानपुन्यसादासुषवासा ॥"

अन्त—"इंद्रदेवस्वचलही अगुआना । इन्हपापीकेहत्यप्राना ॥
राजाकहहीअसहंभसेनाहोइ ॥ अपनाहाथ षोलहुसोइ ।
सवजोगीखोलकेवारा ॥ स्वदेहजग्रनाथसवारा ॥
पहुचानहीजीन्हकाभएउ ॥ स्वदेहसंपुरन भऐउ ॥

॥ दोहा ॥

दोषनाभऐउजोगीका ॥ ... . रजाऐ ॥
देहअभैव्रमागु ॥ जै जै जादोराऐ ।''
''इतीस्रोहरीचरीत्रेवीस्नपुरानेजोगीदुस्ननामवनो दसोमो अध्याऐ १० इतीस्रीवीस्तुपुरान: स्मपुरन जो देखा म्मदोषनादेते: साधसंत केवंदगीडंडवत पहूँचेवारं मवार: पंडोतजनसोवीनती मोर : टुटल बढ़ल अछ्प्रइवाजोर ।''

विषय—विष्णुपुराण पर आधारित कृष्ण-चरित्र ।

टिप्पणी—दोहे-चोपाइयों में रचित इस ग्रन्थ के आदि ओर अंत में ग्रन्थ-कार के नाम, स्थान तथा रचनाकाल का उल्लेख नहीं हुआ है । भाषा ओर कालपक्ष ग्रन्थ का दुर्बल है, किन्तु पुराणांतर्गत कथा का रूपांतर अच्छा हुआ है । ग्रन्थ संभवत: अप्रकाशित और खोज में नवोपलब्ध है । लिपि पुरानी है । मूर्धन्य 'ष' का प्रयोग 'ख' के लिए हुआ है । यह 'चोबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चोबे [ग्रा०—बँगरी, मोतीहारी, (चंपारन)] को पं० मथुरा चोबे के सहयोग से मठगोपाल के एक कबीरपंथी साधु से प्राप्त हुआ ।

८३. **ज्ञान-सम्बोध**—ग्रन्थकार—कबीरदास । लिपिकार—मथुरा चोबे । अवस्था अच्छी । पृ०-सं०—३८ । प्र० पृ० पं० लगभग—१६ । आकार—८"×६¼" । भाषा हिन्दी । लिपि-नागरी । रचनाकाल-प्रसिद्ध । लिपिकाल—१ । १० । १९१२ ई० ।

प्रारम्भ—''सतनाम सती कबीर जी ।
श्रीसुक्रीत आदि अदली अजरअचित प्र........नाम कबीर सुरती जोग्यसंताएनधनी धरमदास .... .. लिकादआते

साखी ॥

संतसमाजसमधनीनहीं, सुनोसंतचिलाए ।
पुरबीलपुन्यअमीतहोही तौसंतसमाजेएनेती
पवित्रेजुगजुगजीवे, जोसंतो सं ....भाए ।
क्रमकोटीत्रीगुनफंदसो....त्रीतपीए अघाए ॥''

मध्य—(पृ०-सं०-१६) '॥ सोरठा ॥
''मनकैलहरी अपार, छीनमहदे उतपातकरी ।
बीहेबहुजाएगवार । वहरी रहै कोई सुरमा ।
जीमी सपने मह देखिये, लेई कोई शीशखीदारी ।
तीमीमनकौतुक झूठ हैए, करै अनेक पसार ॥''

अन्त— "॥ साखी ॥

जाके ग्यान बिबेक है, सो यह ग्यान बिचार।
और सकल जग अंधरे, बुझैं ग्यान विचार ॥
इतिश्री० ज्ञानसम्बोध ग्रन्थ संम्पूर्णं शुभऽस्तु जो देखासो लिखा मम दोष नहीं दीयते। पंडित जनसे विनती मोरी। टूटल अछर-लेब सब जोरी ॥ श्री रामचन्द्राय नमः ॥"

विषय—संतों को महिमा का वर्णन। संत-साहित्य (कबीर) का ग्रन्थ।

टिप्पणी—१. प्रसिद्ध संतकवि कबीरदास की यह रचना संभवतः अप्रकाशित है। इसकी एक प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज में मिली है। दे०—खो० वि० १९०९–११, ग्रं० सं०—१४३। अन्य किसी खोज-विवरण में कबीरदास की कृतियों में इसका नाम नहीं है।

२. इसके साथ ही एक ही जिल्द में 'ज्ञानदीपक' और 'अनुभव-सागर' भी क्रमशः १० और १३ पृष्ठों का है। मूल प्रति से १९३२ ई० में श्रीगणेश चौबे के प्रयास से उपर्युक्त तीनों ग्रन्थों की प्रतिलिपि हुई। 'अनुभव-सागर' की मूल प्रतिलिपि का समय सं० १८७७ वि० है।

३. ग्रन्थ-लिपिकार ने मूल प्रति से ईकार, ऊकार आदि मात्राओं की प्रतिलिपि करने में विपर्यय कर दिया है।*

४. मूल प्रति बेलवनवा (चंपारन)-निवासी श्री धनुषधारी लाल के पास सुरक्षित है।
ग्रन्थ की लिपि-शैली अच्छी है। प्राप्त अन्य प्रतियों से यत्र-तत्र पाठ-भेद प्रतीत होता है। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे से प्राप्त।

८४. शब्दासागुंजार—(सहसगुंजार)—ग्रन्थकार—कबीरदास। लिपिकार—गणेश चौबे। अवस्था—अच्छी। पृ० सं०—५७। प्र० पृ० पं० लगभग—२१। आकार—$८\frac{1}{3}" \times ६\frac{1}{3}"$। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—१९३२ ई०।

प्रारम्भ—"सहसगुंजार॥ चौपाई—

सत्यनाम सुकृत गुन गावो। अविचल बाह अखै पद पावो॥
संसै हरित सदा सो गाउ। सील रूप सभइन्ह के भाउ॥
करै कोलाहल हंस उजागर। मोहरहित सभ सुख कै सागर॥

*पं० गणेश चौबे [ग्रा०—बँगरी, मोतीहारी (चंपारन)] की टिप्पणी इस ग्रन्थ की प्रतिलिपि में देखिए।

तेहीपुर जुरामरन नाहीं। मनवेकार इन्द्री तहां नाहीं ॥
सत्यलोक हंसन सुख होई। सो सुख इहा जानने कोई ॥
जानै सो जो उहाकर होई। इहा आ(के करै बुझाई ॥"

मध्य—(पृ० सं०—२८)

"करि असनान पुरुष पगु परसै। निरमल जोति अखंडित दरसै ॥
जब फिरि चंद सरोवर आवै। बहुरि जीव संगहि फिरि धावै ॥
आवत जात बार नहीं लावै। पल पल जीव दरस तहाँ पावै ॥
कृष्णपक्ष अमावस जब आवै। तब फिरिजीव सूरघर जावै ॥"

अन्त— समौ

"एक जुग के वीते, चारो जुग भै नास।
एकनाद चारी जुग खाये, सतजुग कीन्हे ग्रास ॥

चौपाई

किलक कमोद चंद से नेहा। कामत कंकव सूर उरेहा।"

विषय—श्वास के जानने की रीति। कबीर-पंथ की योगसाधना का आध्यात्मिक विवेचन।

टिप्पणी—कबीरदास का यह ग्रन्थ संभवत: अद्यावधि अप्रकाशित है। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी खोज में यह ग्रन्थ मिला है। उक्त खोज में प्राप्त पोथी का लिपिकाल है—१८४६ वि०। दे०—खो० वि० १६०७-१६११, ग्रं० सं०—१४३ जे०। ग्रन्थ का नाम 'श्वासागुंजार' है, किन्तु 'सहसगुंजार' नाम से भी यह मिलता है। 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे [बँगरी, मोतीहारी (चंपारन) से प्राप्त।

८५. भागवतभाषा—ग्रन्थकार—कृपाराम। लिपिकार—महेशदास। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना, देशी कागज। पृष्ठ सं०—२४४। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—६$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{1}{2}$"। भाषा - हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपि-काल—१६५० वि०।

प्रारम्भ—"॥१॥ श्री: गणेशाय नम:। श्री: राधाकृष्णाय नम:। श्री: पोथी भागवत भाषाकृ: त्पकृपादासजी एकादशस्कंध पोथी लीखलवा: महेशदास।

शोरठा: ॥

वन्द्यो श्री: रघुरकृपाशेंधुशंततशुखद
प्रनतपालरणधिरदुखहरनदारिद्रदमन

दोहा ॥

हरनमोहतमदंद्व शव श्रीः गरपदकरीध्यांन
रामकथावरणोवीमल अवहरनकरन ल्यांन

सोरठा ॥

मैंमतीमंदमलीनकुरकपट कलीमल चह्यो :
जानोअतीशैदीनगुरु दकपालपावनकियों''

मध्य—(पृ० सं० — १२२)

''श्री सूक देउवाच ॥
अवअध्यायसत्रहकेमाही भक्तोलक्षण अरु धर्म कहाही
ब्रह्मचर्यअरुजेगृहवाशी ताशुधर्मकहीहेशुपरासी''

अन्त—''सुनै सुनावै पुनी कहै कृष्ण कथा सुख कन्द
उपजय भक्ति अनन्यतेहि मीटे जगत दुष दंद
ध्याणयोगतपदानमखपुजाअरुवरतनेम
सकलसोषितेहिहोइफल कृष्णकथाजेप्रेम
ईतोश्रीभागवतेमाहापुरानेएकादशकंधे श्रीशुकदेव परिछीत संवादे भाषानीबन्ध कृष्णरामकृतश्रीकृष्ण वैकूंठपआननाम एकतीसमो अध्या ॥३१॥ सूभसम्वत १९५० । शाके १८१५ । समयनाम.......... कृष्णदसम्गों भोमवासरेपोथी एकादस स्कंध समास संपुरनभैलदशपतीवाः महेशरदाशसाधु। समैनाम अषाढ़ ताः। रोजसुक के तेआर भएल जो देषा सो लीषा मम दोषनदीअते। सूभ सम्वत १९५०। शाके १८१५। सन १२१० साल मौजेटीकुआ (कुटिआ) तापाषण्डा प्रगनामझोआ। पोथी दसषतोलोषतवाः महेशरदास साधू दसषत शहिः ॥''

विषय—भागवत के एकादश स्कन्ध का अनुवाद। कृष्ण-कथा-वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ में ईश्वर-भक्ति का माहात्म्य-वर्णन हुआ है। कहीं-कहीं अभक्त ब्रह्म का निरूपण किया गया है। देखिए—

'तोन के तनय भए शत एका।
ब्रह्म चार भए शहोत विवेका ॥''

भगवद्भक्ति से पूर्ण उपदेश अधोलिखित पदों में—

''हरि वीनु रहित शकल जे करमां
तेशवजानेहु माणके भरमां
श्री मुष आपु कह्यो जगदिशा
कहै जीव जेही वीधी करिहशा ॥''

उद्धव का ज्ञानोपदेश और गोपियों की अनन्य कृष्णभक्ति का वर्णन। संपूर्ण पोथी ११ अध्यायों में विभक्त है। लेखक ने विषयों का वर्गीकरण बड़े सुन्दर ढंग से किया है :

(क) ईश्वर-गुणानुवाद ; (ख) जाना णारद का वशुदेव कीहां; (ग) कबीनाम प्रथमे योगी ने बोले; (घ) हरी नामा नाम दूसरा जोगी बोले; (ङ) हंस औतार कथा; (च) भगवत उद्धव जी; (छ) संतो का हाल वरनन; (ज) उधौजी का बदरीकाशरम जाना।

इसके ग्रन्थकार हैं कृष्णराम। यह ग्रन्थ भागवत के एकादश-स्कंध का अनुवाद है। प्रारंभ सोरठा से हुआ है। सोरठा, दोहा, चौपाई और छंद प्रयुक्त हुए हैं। भागवत की कथा के अतिरिक्त ईश्वर के अव्यक्त स्वरूप का विस्तृत विवेचन, भागवत के मूल पाठ का स्मरण दिलादेता है। उपदेश और कथा-प्रसंग का निर्वाह सुन्दर है भाषा हिन्दी के प्रारंभ-काल की है। नागरी लिपि में कहीं कहीं कैथी का भी प्रयोग हुआ है। पुस्तक सजिल्द है। यह ग्रन्थ 'चोबे-संग्रह के लिए बँगरी [मोतीहारी (चंपारन)]-निवासी पं० गरोश चोबे द्वारा संगृहीत हुआ।

८६. **रसिक प्रिया**—ग्रन्थकार—केशवदास। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज, खंडित। पृष्ठ सं०—६। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—८"-८$\frac{1}{6}$"×४$\frac{3}{2}$"। भाषा - हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्रीगणेशायनम; ।। षद्वदीवाविस्वं ।।
एकरदनगजवदनसदनबुधिमदकदनसुत
गौरिनंदआनंदकंदजगवंदवंदयुत
सुखदायकदायकसुक्तित्ति गननायकनायक
खळ्घायकघायकदलिद्रलायकलायक
गुरुगुणअंतभगवंतभवभगवंतभवभयहरण
जयकेशवदासनिवासनिधिलंबोदरअसरणसरण १
दोहरा। नदीवेतवैतीरतहतीरथतुंगारन्पुरनगरओउछो
वहुवस्यो धरनीतलमयधन्य२

मध्य—(पृ०-सं०—४) "अथशठलक्षनं दोहरा
मुहमीठीबातैं कहै निपटकपटजियजानु
याहिनडरअपराधकोशठकरिताहिवषानु

अन्त—"प्रौढ़ाअधीरायथा ॥ पतिकोंअतिअपराधगनिहितनकहतिहितमानि
कहतिअधीराप्रौढतेहिकेशवप्रगटवपानि ॥"

कवित्वं—हितकं दूतदेष्योजुदेष्योसर्वहितुबातसुनोजुसुनीसवही है।
"तौकछुओरछेहै सबही अवसोंइकरोजुकरीजुतही है
समुझाइकहोसमुझीसवकेशवझूठिसवैंइमसोंजुकहतिहै ॥

विषय—नायक-नायिका, हाव-भाव और शृंगार आदि रसों का वर्णन।

टिप्पणी—(क) प्रसिद्ध कवि केशवदास-कृत रसिकप्रिया की खंडित पांडुलिपि। प्रतिपृष्ठ पृष्ठ-संख्याविरहित। पुष्पिका-भाग खंडित। इस ग्रन्थ की रचना कवि ने सं० १६४८ वि० में की थी। इसके हस्तलेख नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को भी खोज में मिले हैं। दे०—खो० वि० १९००,—ग्रं०-सं०—५२; १९०२-ग्रं० सं०—२५६ २६०; १९०३-ग्रं० सं०—८९; १९०४-ग्रं० सं०-१२८; १९२३—२५, ग्रं० सं०—२०७; १९२६-२८—ग्रं० सं०—२३३ एफ्० और जी०। [मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) के संग्रहालय में दो पांडुलिपियां सुरक्षित हैं। दे०—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) से प्रकाशित 'प्राचीन हस्त-लिखित पोथियों का विवरण (दूसरा खंड), ग्रंथ-सं०—५६ और ५७।]

(ख)—ग्रंथ की लिपि पुरानी है। 'चौबे-संग्रह' के लिए बँगरी (मोतीहारी, चंपारन)—निवासी पं० गणेश चौबे के सौजन्य से प्राप्त।

८७. रासलीला— ग्रन्थकार—हरिदास। लिपिकार—आदित्यनारायण। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृ० सं०—७। प्र० पृ० पं० लगभग—१०। आकार—१०$\frac{1}{4}$"×४"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—माघ, शुक्ल-द्वादशी, रविवार, सं० १७२७।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः॥
वृन्दावन स्याम पधारे एह रात्रि वऽ अधिआरे
एहलता विटसम झुलै बहुवेली चमेलीफुलै
ताहाराशकरण मनकीन्हे चन्दाओंजिआरकरदिने
तातेकामिनीका मनजागे वृन्दावन भयवडभागे'

मध्य—(पृ० सं०-३) 'अवरासकरोएकभारी ॥ जाकोदेषीछकैत्रिपुरारी ॥
तुहहोवृजकीसभनारी ॥ अबदेख्योरासइमारी ॥

असकहीकै जय नन्दालाला ।। सभकोउठीकीन्हासींगारा ।।
कोइपीतपोतभरपहोरा । जामेलाग्वो मोतोवो होरा ।।"

अन्त—"लरीकानजीयेजाको भाई ।। एहगानकरैजोवजाइ ।।
एहलीला अगमअपारा ।। भवसागरसेकरेपारा ।।
एहरासकीयोनंदलाला ।। ताको गावतपुरुषविपाला ।।
एहप्रेममगनहोइ गावै ।। सोइदिव्यपरमपदपावै ।।
एइसंस्कृतसेहै भाषा व नयोहैहरिश्रीदासा ।।
जाकोछुटोगयोभवत्रासा ।। जाकेकीन्हेबिहारीके आसा ।।
इतिश्रीकृष्णकृतरासलीला संपुर्णम् ।।"

विषय— राधाकृष्ण के विहार का वर्णन।

टिप्पणी— ग्रन्थकार हरिदास नवोपलब्ध हैं। नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) की खोज में राधाकृष्ण के विहार से संबंधित 'हरिदास स्वामी की बानी' नामक रचना मिली है। किन्तु, ये उनसे भिन्न प्रतीत होते हैं। दे०—खो० वि० १९०५, ग्रं० सं० ६७ और १९०९—१९११, ग्रं० सं० १०९ बो०। ग्रन्थ की लिपि शैली पुरानी है। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के लिए बँगरी (मोतीहारी—चंपारन)-निवासी पं० गणेश चौबे से प्राप्त।

८८. समुद्रि (रमल)— ग्रन्थकार – × । लिपिकार—शुकेश्वर शर्मा। अवस्था–अच्छी, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—१३। प्र० पृ० पं० लगभग – २४। आकार–८३/४" × ५"। भाषा–हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल–× । लिपिकाल—पौष, शुक्ल-एकादशी, शनिवार, सं० १९४२ वि०।

प्रारम्भ— 'पोथी रम्हल प्रारम्भ श्रीगणेशयेनमः
११४ येह सगुन आछा है बुलके बोचहे सस्वतिमीले गायीत्रसोमीलापहोगा: तथा पत्रफूलहोगा: तुम्हाकोतीन महीनामो-आछाहोगा अपनाइष्टगुरुकेपुजाकरोगेमन कामना सुफलहोगातेरे छातिआपेटर्पतीलवाहै सोदेषलेना।"

मध्य—(पृ० सं०—६) "२४४ ऐहसगुनसुनोधरमकाहैषमपंतीत रहेगा
सर्वकामतेरासीधहोगातुम्हार क्रोधकादिनजातांहै
संतोषराखनाऐकआदसीतुम्हारासर्वकामबीगारता है'

अन्त—"४४४ ऐहसगुनकाफलसुनीऐजोकामत्रीचारतेहोसो
सीधहोगाधनलाभहोगाकइपरस्त्रिमीलेगा सत्रु तुमारा आडे-
केआपुपाऐलेपरेगावैपारमोलाभहोगा राजामानकरेगामनमो
बहुतषातिरराषनातेरा इद्रीपरतीलहैसोदेखीलेना इति श्री पोथी
समुंद्रि समाप्त संपुरणा सुधंवाअसुधंवममदोखोनदीअतेजोदेषासो

लीपाममदोषोनदीअते समाप्त संपुंण संवत १९४२ साके १८०७ पोष मासेसुक्ल पछे ११ येकादस्यांवारेसनीक्रीतीकानअत्र.... -- .... लीषीत्वासुकेश्वर्रसर्माहं सुभमस्तु।''

विषय— रमल (ज्योतिष्-सामुद्रिक)।

टिप्पणी— यह ग्रन्थ खोज में नया है। ग्रन्थकार का नामोल्लेख संभवत. ग्रन्थ में नहीं हुआ है। ग्रन्थ-लिपिकार बिहार के चंपारन जिलान्तर्गत महेसी ग्रामवासी हैं। देखिए ग्रन्थ-पुष्पिका—
''लीषीत्वासुकेश्वरसर्माहंग्रामअहीतपैसिरवना संजुग्तापंगानामेहसीमे'
ग्रन्थ की लिपि पुरानी है। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के लिए श्री गणेश चौबे से प्राप्त।

८९. रमल— ग्रन्थकार—×। लिपिकार—शुकेश्वर शर्म्मा। अवस्था—अच्छी, पुराना देशी कागज। पृष्ठ-सं०—११। प्र० पृ० पं० लगभग—२६। आकार—८¼"×५"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल सं० १९४१ वि०।

प्रारम्भ—''अ अ अ १ सुनो ये साहेब: फलबुझो: जो कुछ दिल मे रषेहोसोआछा होगाअपसोचमउकरोजीतहोगा ॥१॥
॥ अ ज द ॥ सुनोयेसाहेबफलकामतुम्हाराआछानहि है:
थोरारोजसबुरकरोअन्देसामतकरो।''

मध्य—(पृ० सं० ८) ''द अ ज ५८ सुनोऐदोस्तकामतुम्हाराकठीनहै,
हलाकीतकरेगाजलदिमतकरोरामजीकावचनहे।''

अन्त—''द प ज ६३ ऐपुछनेवालासुनोकामतुम्हाराकरनाहोएतवजलदीकरोअछापाहुगे द अ प ६४ सुनो ऐसाहेबकामदीलमेरखतेहैसोडरमतकरोखातीरजमा-रखोऐरामजीकेधाक है श्रीरामचन्द्रकेक्रीतरम्हलसमापतसुभ''

विषय— फलित ज्यौतिष से सम्बन्धित प्रश्नोत्तर के रूप में फलाफल का विचार और सगुण-वर्णन।

टिप्पणी—(१) यह ग्रन्थ खोज में नवीन है। ग्रन्थकार का नामोल्लेख नहीं हुआ है। ग्रन्थ-सं० ८८ के लिपिकार ने ही इस पाण्डुलिपि को प्रस्तुत किया है। दोनों ग्रन्थ एक ही जिल्द में सुरक्षित हैं। ग्रन्थ-पुष्पिका में लिखा है कि दक्षिण के राजा लंकेश्वर रावण को पराजित करने के लिए चौंसठ-चौंसठ पण्डितों की सभा बुलाकर रामचन्द्र ने इस रमल-प्रश्न का उपयोग किया और रावण को सर किया। दे०--
''रामचन्द्रजीवसुधकीअ आलंका के सरकरनेके चौंसठ चौंठपंडित मजलीस मोहाजीरथापरदछोनकेरावनकोकीसतरहसरकरेगेसम पंडीत-मीलीकेऐहसगुनने उत्तीमवनाआजेतनेवातकेपुछनेहोऐजेतनेवातके

पुछनेहोएसोइसो मे मालुम होगा''। सगुन से सम्बन्धित प्रश्न तथा उनके फल-ज्ञान की विधि का उल्लेख— 'वारपहलकालके दीपदान .... गुलकोवनावेपहीले अ लीखेदोपरपर ५ लीखेतीसरपर ज लीखे चौथेपर ६ लीखेनोनवारके .... के देखताजा अ कोन-कोनहरफपरताहैतेकरवीचारकरे पुछनेवालाहोऐवीस्वसकरेकीरामजी कावचनहै वीस्वासकरोसतमानी इतिश्रीरामचन्द्रकीतरम्हल समापत संपुंरणसुभ''—हुआ है।

(२) ग्रन्थ की लिपि-शैली पुरानी है। ग्रन्थ में प्रयुक्त गद्य-शैली पुराने कथा-वाचक पण्डितों और ज्योतिर्विदों की-सो है। यह ग्रन्थ 'चौबे संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे के सौजन्य से प्राप्त।

९०. नौमाला— ग्रन्थकार—धर्मदास। लिपिकार—रूपदास। अवस्था—अच्छी। पृ० सं०—२४। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार—८"×५"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपि-काल—×।

प्रारम्भ— ''सतनाम सतसुक्रीत आद अदली अजर अचीता पुरुसमुनीद करुनामे कवीर सुरतजोगसं नताऐनधनी ध्रमदास पुरामनीनामसुदरसननामकुल पतनामप्रमोधगुरुवालापीरकवलनामअमोलनामसुरतसनेहीनामहकनाम प्रज्ञनामासाहेबगार गुरुवंसावालीसकोदाआसोलीखते श्रीग्रंथमंनौवमाला-

चोपाइ॥

कथारीसालकहोकछुवानी बुझेसोहोऐब्रह्मग्यानी
ऐह गुरामसतकरी लखो प्रगटेग्वानतवयेरखो
अनभौआदीकछुकहोवखानीरुनहुसंतगुरुगंमकीवानी
अनंतकोटजुगअकहमलीगेऐठ........ टीकोठजुगअेसेगेउ''

मध्य—(पृ० सं०—१२)
''ताकरगुरुआनकरी लीन्हा नामरतनधनतीनकहदीन्हा
जवगुरुनाईसमनीकहाऐ भगतीहेतुकहकैसेकेजानी''

अन्त— ''ताहाजाऐ अमरपदपावे गुरुकीसब्दहीहै समावे
क्रोटीनअसुरफीरेजबआइ हीदवीसवासतेजीनहीजाइ
ऐहतेजाऐजोप्राना सतगोवीदजोसमआना
कहहीकवीरऐहसब्दरहेला गुरुपुरामेलाहोऐसुना

॥ दोहा॥

गुरुपुरालीखसुरावागमोररेनपदै
सतसुक्रीतकेचोन्हके असलकथारहजाऐ
ऐतीस्रीगरंथनौमाला: समापत''

विषय— कबीर-पंथ से संबन्धित रचना।

टिप्पणी—संभवतः धर्मदास-कृत यह रचना खोज में नई मिली है। अन्य खोज-विवरणिकाओं में यह ग्रन्थ संभवतः उल्लिखित नहीं हुआ है। इसके साथ ही अंत में दो पृष्ठों 'गुरुअष्टका' नामक ग्रन्थ ही संयुक्त है। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे से प्राप्त हुआ।

६१. नाममाला—ग्रन्थकार—अवतार मिश्र। लिपिकार – गोपाललाल। अवस्था-अच्छी। पृ० सं०—२७ (१७५)। प्र० पृ० पं० लगभग—३४। आकार—८¾" × ६¾"। भाषा—हिन्दी। लिपि--नागरी। रचनाकाल – १३१६ फसली (१९६४ वि०, १९०८ ई०)। लिपिकाल—१९३२ ई०।

प्रारम्भ— "श्री गणेशाय नमः। ॥ गणेश ॥१। दोहा—
गौरीसुत द्वैमातु पुनि, धूमकेतु गणराज
मूषक वाहन इकरदन, पूर्ण करिय मम काज ॥१॥
गणाधीप गणपति गणय, गणनायक सुगणेश।
कपिल गजानन गजबदन, बिघ्नराज बिघ्नेश ॥२॥
ह्वलन हेरम्बविनायकों, लम्बोदर इभदंत।
नमो रुदायक गजकरण, अरुणाधिप इकदंत ॥३॥

मध्य—(पृ० सं० – १३) '॥ शराब ॥ ९३ ॥ दोहा
मधु माध्वी मदिरा इरा, दारुड़ी मैरेय।
सुरा बारुणी बुद्धिहा, कश्य प्रसन्ना जेय ॥१॥
आसवमद कादम्बरी, सिन्दूर नद जामद्य।
गंधोत्तमा हलाहलो, तव अबगुण अनवद्य ॥२॥"

अन्त— "॥ सवैया।
सुख खोजत सूखे शरीर सबै रुबहू न मिल्यो नहि आशभगी।
भगवान के नाम रुनेम करी कभु नाहि लियो हिमसो उमगी ॥
जपजोग सुसाधन नहि कियो नवाला कोउना तब प्रेम पगी।
भयो कान्त कहा जगजन्म लिये गरखेलि लगी न नवेलि लगी ॥४॥

दोहा ॥

तेरह सो षोड़स फसिल ज्येष्ठमास भृगुवार।
शुक्लपक्ष नवमी तिथि पद को लियो उतार ॥"

विषय— विभिन्न १७५ शब्दों के पर्याय-कोष।

टिप्पणी— चंपारन जिला (वरिअरिया ग्राम)-निवासी श्री अवतार मिश्र 'कान्त' की यह रचना सरल और सुबोध शैली में एक सौ पचहत्तर शब्दों के

पर्याय के रूप में रची गई है। लिपिकार की टिप्पणी के अनुसार यह रचना अपूर्ण है। 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे के सौजन्य से प्राप्त।

६२. विरहमासा—ग्रन्थकार—परमानंद। लिपिकार—गणेश चौबे। अवस्था—अच्छी। पृ० सं०—१०। प्र० पृ० पं० लगभग—३६। आकार-६$\frac{१}{५}$" × ८$\frac{१}{५}$"। भाषा हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—१८५५ वि०; १७९८ ई०। लिपिकाल—१९४१ ई०।

प्रारम्भ— 'बिरहमासा परमानन्द के।
बन्दो श्री गुरु गौरीगनेशायनमः। बन्दी ब्रह्मा बिसुन महेशाबनम.॥
बन्दोगुरुपदकंजचरनसुरगुरु विमल। जासे पांडप्रेमपदारथ ग्यानकल॥
बन्दो नारदसारदशीशमुनीशको। बन्दीरीखरीखेसर चंद्रदिनेशम॥''

मध्य—(पृ० सं०—५) ''मास फागुन
फागुन फाग मचावत आयेधूमसे।
सखि सब होरी खेलहि बहुतहजूमसे।
धरधरतालमृदंग परवाउजबाजरो।
खेलहि फागबनाय हरख मन गाजहि।
कोई सखिताल वजावहि होरी गावहि।
कोई सखि देइदेइतालमृदंग बजावहि।
आउर बाजे पायल झनझनकारिया।
अकड़ चले गज चाल जोवन मतवालिया॥'

अन्त—''मस्त भइ मद अधर रस रसावहि।
पीवनतीरछि नैन चितरि चोरावहि।
मिलि जुली गले लगाइ पलंग पर सो रही।
कली सुगंध रस टानी एकसंग होरही।
एक ओर नारी नारी एक ओर होय रहे।
थरस अकुरा गरी गरीहोनी होयसेहोयहै।
बहुभांति को आशा देइके काम बढ़ावहि।
नारी वारि के मंत्र अधाररसावहि।''

विषय— बारहों महीनों पर आधारित शृंगार-रचना।

टिप्पणी-(१) इस ग्रन्थ के कवि बिहार के शाहाबाद जिलान्तर्गत कोरी ग्रामवासी हैं। कवि के शब्दों में ही परिचय है—

''हिन्दुस्तान के सूबे में सूबे बिहार है।
वामे साहाबाद सुजस सरकार है॥

प्रगने पवारा के कोंरी में मेरी ग्राम है ।
वंदो परमानंद हमारा नाम है ॥"

(२)–रचनाकाल के संबंध में कवि का संकेत है—
"सन् अठारह सो पचपन के संवत आइयां ।
कहो कहानो बिरह सो प्रेम पिलाइयाँ ।"

रचना हृद्य और मनोहर है। इसमें आइयां, पिलाइयाँ छाइयां बातियां और टोरियां आदि का प्रयोग विवेच्य है। एक पद देखिए—

"बोलत अनमोल पपिहरा पीव पीव ।
कहां गये बिछुराइ हमारे कन्त जीव ॥
कन्त गये परदेश सभे सुख लेइ गये ।
छतिअनि वजर केबार जंजिरा देइ गये ॥'

ग्रन्थ की भाषा खड़ी बोली के प्रारंभ-काल की है। संभवत ग्रन्थकार सदल मिश्र के समकालीन थे। ग्रन्थ अप्रकाशित है और बिहार के साहित्यिक इतिहास के लिए महत्त्वपूर्ण है। ग्रन्थ-संकलयिता श्री गणेश चौबे को यह ग्रन्थ श्री तारकेश्वर प्रसाद (मोतीहारी चम्पारन) के लोकगीतों की कापियों में मिला। इसके साथ ही चम्पारन जिले के अनेक अज्ञात तथा बेतियाराज से संबंधित कवियों की भी रचनाएँ हैं। दूलमदास, चिंतामनि, माधोदास, हरिदास, माखनलाल, सुन्दर, आनंद (बेतिया के महाराजा), नवलकिशोर (बेतिया के महाराजा), रामनारायन (दामोदरपुर-गोविन्दगंज) और नवल प्रमुख कवि हैं, जिनके पद इस संग्रह में हैं। 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे (बंगरी मोतीहारी, चम्पारन) के सौजन्य से प्राप्त।

६३. सूरज पुरान— ग्रंथकार—×। लिपिकार—× अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृ०-सं०—१०। प्र० पृ० पं० लगभग—१७। आकार—४½" × १०"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ— "श्रीगणेशायनमः श्री दोहा
वंदोचरनजोरीके भगती प्रेम लवलीन
महीमा आग अपार है जाहेवाग्वानप्रवीन

चोपाइ

सुरुजदेवताशुमींरोतोही शुमीरत ग्वानवुधीदेहुमोही
ज्रोतीस्वरूप आदीतवलवाना तेजप्रतापतुमअगोनीशमाना

तुमही आदी परमेशरश्वामी अलखनीरंजन अंतरजामी
वरनी न जाइजोतीके लीला बरमधुरंबरंपरमसुशीला''

मध्य—(पृ० सं० ५) "दोहा
तवमुनी बोलवचनशोहाए धरीपदकमलशुरनगाए
वहेमुनीशशुनुपंचनहमारे मोशेचुकीभएअतीभारे
एहअपराधछमहुप्रभुमोरी वीनतीनाथदुवोकरजोरी
तबप्रभुकहएशुनहुममवानी हाकेंलोगशकलगुनखानी''

अन्त—''धरमकथाचलीहेदीनराती नेमधरमचलीहेबहुभाती
वीप्रजेवाइ आपुतव खंहे नीश्चैनामशुर्ज के गेंहे
लक्षमीघरघरलेहीनेवाशा धरमकथातवहोएप्रगाशा
स्रोथावचनकोइनाकहीहे धमंबीच रशुजंतबकरीहे
द्वादशकलाजोतीलेकरीहे द्वादशकलालेहतबउगीहे
आदीततबहीआके पुरवजन्मके पातख कथाशुनतछएजइ
इति शुर्जंपुरानशपुरनोनाम: अष्टमो अध्याय:''

विषय—सूर्यकथा और व्रत के फल का वर्णन ।

टिप्पणी—ग्रन्थ-संख्या ७६ की टिप्पणी देखिए । ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण और अप्रकाशित है । 'चौबे-संग्रह' के लिए श्रीगणेश चोबे (बँगरी, मोतीहारी, चम्पारन) के सौजन्य से प्राप्त ।

६४. हनुमानचालीसा—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—× । अवस्था—अच्छी, पुराना कागज । पृ० सं०—४ । प्र० पृ० पं० लगभग—१४ । आकार—३½"×५ । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल-× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"श्रीगनेसायनम: ।। अथ श्रीहनुमानजीकोअस्तोत्रलिख्यते ।।
वालसमैरविभछकियोजवतीनोहुलोकभयोअधिआरो
अंसीत्रासभईसबको अतसंकटकाहुपैजातनाटारो
देवनआइकरीविनतोजवछोडिदियोरविकष्टनिवारो
कोनहिजानतहैजगमैंयहसंवटमोचननामतुमारो १"

मध्य—(पृ० सं० २)
"रावनत्रासदईसियको तवरछकसोकहिसोकनीवारो
तेहीसमैहनुमानमहाप्रभुजाइीमहारजनीचरमारो"

अन्त—' बेधसमेततवैमहिरावनलैरघुबीरपतालसिधारो
देवीकोपूजभलीविधिसोजवदानभ······ ·····''

विषय—हनुमान् की शक्ति और उनके जीवन से सम्बद्ध स्तोत्र-साहित्य । प्रसिद्ध जेगोयमान ग्रन्थ ।

टिप्पणी—प्रसिद्ध हनुमानचालीसा की खण्डित पाण्डुलिपि। अन्तिम पृष्ठों के खण्डित होने के कारण लिपिकार तथा लिपिकाल का ग्रन्थ में उल्लेख नहीं हुआ है। लिपि-शैली पुरानी है। 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे से प्राप्त।

६५. बेतियाराज-वर्णन—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन। पृष्ठ-सं० ४। प्र० पृ० पं० लगभग—८। आकार—३"×५"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ— "दोहा

गणपतिपदउरराखिके शिवाशीवशिरनाइ ॥
जगम्नाथरविवंदिके खिलतकहौंनृपगाइ ॥१॥
अवधनगर वरबेतिया घरघरमंगलचार ॥
फूलिरहेपुरकंजसम लखिनृपखिततमार ॥२॥
विधिवतनृपनवलाइके जिततितदियेटिकाइ ॥
मानोमघवाअवनिमे ठवरठवररहछाइ ॥३॥"

मध्य—(पृ० सं० ३)

"सकलदेशकेलोगसभ लखततमाशाआइ ॥
मंगलमयबेतिआभये शोभावरणिनजाइ ॥४॥
शुभगलगनलखिशुभघरि वसनअंगलियेलाइ ॥
श्वाससोधिनृपवरचले शुमिरतश्रीगणराइ ॥५॥"

अन्त—"धनिधनिनृपकाशहरवर धनिधनिधरमनरेश ।
धनिधनिकविकोविदकहे धनिधनिदेसविदेस ॥६॥
वनिवनिसभअमलाचले नामशकोंनहिगाइ ॥
जिमिशुरेशकाशंगमे विवुधनामनकहाइ ॥७॥"

विषय—बिहार के अन्तर्गत चम्पारन जिले के प्रसिद्ध और अनेक कवियों का आश्रयदाता बेतिया-राज्य का वर्णन।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ खण्डित है। यद्यपि आदि और अन्त में ग्रन्थकार का नामोल्लेख नहीं हुआ है किन्तु प्रथम पंक्ति 'जगम्नाथ-? रविवंदिके'—से प्रतीत होता है कि किसी जगम्नाथनामा कवि की यह रचना है। यह ग्रन्थ बिहार के साहित्यिक इतिहास के लिए महत्त्वपूर्ण है। 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे के सौजन्य से प्राप्त।

६६. सूर्यमाहात्म्य—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन, जीर्ण-शीर्ण खण्डित। पृष्ठ-सं० ३२। प्र० पृ० पं० लगभग—१४।

आकार—५ × ६" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी ।
रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ— "चौपाइ ॥
कहौंकथारविअमृतवानी ।। मग अस्थिरकरिसुनहुभवानी ।।
कुस्ठवरणहोइजाकेअंगा ।। सुनइमनुजसोसूर्यप्रसंगा ।।
रविदिनभोजनकरेअलोना ।। पुष्पसुवासचढ़ावैदोना ।।
विप्रवोलिरविहोनकरावै ।। सोइभस्मलैअंगलगावै ।।
निश्चैकुस्ठवरणछेजाइ ।। धनमहिमाआदित्य गोशाइ ।।"

मध्य—(पृ० सं० १७) "चौपाइ ।।
गिरिजाकहैदोउकरजोरे ।। एकसंदेहअपरमनमोरे ।।
उत्तरदिशिकहंउगर्हिगोशाइ ।। सो मोहिनाथकहहुसमुझाई ।।"

अन्त—"ज्येष्ठमासकोभावविवादी ।। तीनहि अंगुलजलअभ्यादी ।।
मासअसाढ़वरतकोधरई ।। तीनमिरिचऔलम्वसोकरई ।।
सावनमासवरतरविनीका ।। खांड़तीनपलहैसवहरिका ।।
भादोमासअमितसुखदाई ।। त्रैअंगुल........मुत्रहिखाई ।।"

विषय—सूर्य-माहात्म्य की कथा और व्रतफल आदि का वर्णन ।

टिप्पणी—ग्रन्थसंख्या ७६ की टिप्पणी के समान । इस ग्रन्थ में अन्य प्रतियों से पाठान्तर है । 'चौबे-संग्रह' के , लिए पं० गणेश चौबे के सौजन्य से प्राप्त ।

९७. विज्ञान-गीता—ग्रन्थकार—केशवदास । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज । जीर्ण-शीर्ण और खण्डित । पृ० सं० ७० । प्र० पृ० पं० लगभग—३६ । आकार—६" × ८$\frac{1}{3}$" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ— " ।। रति ।। नगस्वरूपिणीछंदु ।।
प्रसिद्धपापिकारिणी ।। असेषबंसहारिणी ।।
बिलोकि सम्मिता भई ।। किधौ असम्मतादई ।।२३।।
करैबिनासु जुवैरको ।। ताको नित्यनिवासु ।।
केसवदासप्रकास जग ।। ज्योंजदुबंसबिवासु ।।२४।।
कामकहमो तबकलहसौं ।। दिल्ली नगरी जाइ ।।
दंभहिदैरुपदेसुपुनि ।। प्रभुकेदेषहुपाइ ।।२५।।

इति श्रीमन्विविधश्र केषवराइविरचितायांचिदानंदमग्तायां बिग्यानगीतायांकामरतिकलहंसवादवनंनोनांम द्वितीयोप्रकाश: ।।२।। '

मध्य (पृ० सं० ५४) "।। विचार सवैया ।।

कौनहुँ आयोकहा कहि केसबकोअपुनौपरिपूरनकोहै ।।
वंधुअबंधुहियेपहिहेरतोजातैछुटैछितिसाधुसुटोहै ।।
आयोजहांतैहीजाउतहीअवचाकिमनोजयकाहूनमोहै ।।
नित्यअनित्यविचारुकरैचितसोईविचारुविचारमैसोहै ।।५३।।"

अन्त— "।। दोहा ।।

भक्तिजोगवरुभूमि ाइहविधसाधतसाध ।।
धेपार संसारकैयद्‌पिअनंत अगाध ।"
(इसके आगे के पृष्ठ नहीं हैं)

विषय—विज्ञान-गीता का भाषा-पद्य में वर्णन ।

टिप्पणी—कवि केशवदास की यह प्रसिद्ध रचना खण्डित है । प्रारम्भ का एक प्रकाश तो है ही नहीं, द्वितीय प्रकाश के भी बीच पद खण्डित हैं । अन्त में भी ग्रन्थ खण्डित है । ग्रन्थ की लिपि पुरानी और अस्पष्ट है । आदि और अन्त खण्डित होने के कारण लिपिकार और लिपि-काल का उल्लेख नहीं हुआ है । यह ग्रन्थ चौबे-संग्रह' के लिए प० गणेश चौबे के सौजन्य से प्राप्त हुआ ।

६८. रामचन्द्रिका— ग्रन्थकार—केशवदास । लपिकार— × । अवस्था—प्राचीन हाथ का बना, देशी कागज । पृ० सं० १०३ । प्र० पृ० पं० लगभग—२२ । आकार—१२" × ५½" । भाषा—हिन्दी । लिपि —नागरी । रचनाकाल प्रसिद्ध । लिपि काल—भादो वदी अष्टमी, सं० १७९३ वि० ।

प्रारम्भ—"श्रीगणेशायनम: ।। श्रीजाणकीवल्लभोजयते ।।
।। कवित्त ।। बालकमृणालनिज्यों तोरिडारै
.... उपकौं ।
विपतिहरतहरिपद्मिनिकेपातसमषकज्योंपतालपेलि
पठवेकलुखकौं ।।
दूरिकेकले....... .... .. सीससिसमराषतहैकेसोदास
दासके वपुखकौं ।।"

मध्य—(पृ० सं० ५२) "।। भुजंगप्रयात ।।
इहै लोकुएवकैसदासाधिजानैं

वलीवेगुज्यौंआपुहीइसमानै
करैंसाधनाऐकपरलोकहींकों
हरिश्चन्द्र जैसेंगएदैंमहींको
दुहैंलोककोंएकसाधैंसयानैं ।।
विदेहीनिज्यौंवेदवानीवषानै ।।
नठै लोकदोउहठो ऐक अैसें
त्रिसंकेहसैं ज्यौं भलेइ अनैसें २२"

अन्त—"चंचला ।। असेषपुन्यपापकोकलापआषमेवहाई
विदेहराजजोंसदेहभक्तरामको कहाई ।।
लहैसुभुक्तिलोकएहि अन्तमुक्तिहोइताहि ।।
पठै × नैकहैसुनैजुरामचंद्रचंद्रिकाहि ।।३६।।
इतिस्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामनि श्रीरामचंद्र चंद्रिकायां कुशलवादिपुत्रानांराज्याभिषेकवनंसिद्धादानंनाम एकोनचत्वारिंशतम. प्रकाश: ।।३६।। इतिकेशवदास श्रीरामचंद्रकापुस्त ।। सामास: ।।"

विषय—रामायण-कथा का तुलसीकालोत्तर शैली में वर्णन ।

टिप्पणी—सं० १६०० ई० के लगभग वर्तमान कवि केशवदास को यह प्रसिद्ध रचना है। इसके अबतक जितने हस्तलेख प्राप्त हुए हैं, उनमें इसका द्वितीय स्थान है । नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली प्रतियों में प्राचीनतम प्रति का लिपिकाल है सं० १६३१ वि० । मन्नूलाल पुस्तकालय, गया के संग्रहों का लिपिकाल है—सं० १८३५ और सं० १६३७ वि० । इस प्रति का लिपिकाल है—सं० १७६३ वि० । ग्रन्थ की लिपि पुरानी और अस्पष्ट है । यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह के लिए पं० गणेश चौबे (बँगरी, मोतीहारी, चम्पारन) के सौजन्य से प्राप्त हुआ ।

६६. रामायण (बालकाण्ड)—ग्रन्थकार—तुलसीदास । लिपिकार— × । अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज । पृ० सं० २३३ । प्र० पृ० पं० लगभग—१८ । आकार—१३"×५½" । भाषा—हिन्दी । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—सं० १६०६ वि० ।

प्रारम्भ— "।। चौपाई ।।
गुरुपदरजमृदुमंजुलअंजन ।। नयनअमियदृगदोषविभंजन ।।
तेहिकरीविमलविवेकबिलोचन ।। वरनौरामचरितभवमोचन ।।
वंदोप्रथममहिसूरचरना ।। मोहजनितसंसयसवहरना ।।

सूजनसमाजसकलगुनखानि ।। करीप्रणामसप्रेमसुवानि ।।
साधुचरीतसुभसरीसकपासु । निरसबिसदगुनमयफलजासु ।।
जो सहिदुषप्रछिद्रदूरावा ।। वंद्यनियजेहिजगजसपावा ।
मुदमंगलमयसंतसमाजु ।। जोजगजंगमतिर्थराजु ।
रामभक्तिजहासूरसरीधारा । स्वरसतिब्रह्मविचारप्रचारा।।"

मध्य— (पृ० सं० ११५) "। चोपाई ।।
सोमैचरीतकहाअसगाइ ।। सुनुषगपतीगोरीनामनलाइ ।।
सोसमादभएकहोबषानी ।। षगपतीसुनीप्रेमसुषमानी
जाहाकेसंइकतह पहुचाई ।। कीरेगरुउनीजधामसीधाई
जाहाकेलीषाताहासमाने ।। नीतीदुछहरघुकुलमनीजाने ।। '

अन्त— "निजमीरापावनिकरनिकारणर ... जुतुलसीकह्यो ।।
रघुविरचरीतअपारवारीधिपारकविकोविदलह्यो ।।
उपवित ... हउछाहमंगलसुनिहिजेसादरगावहि ।।
वैदेहि............ .. ....जनमसुषयावहि ।।
सुनिगाइकहोगीरीसकन्याधन्यअधि .. .. ।।
... . विवाहजेसप्रेमगावहिसुनहि ।।
तिन्हकहसदाउछाइ....... .. .. मजस ।।३६४।
इतिश्रीरामचरितमानसेसकलकलिकलुष ....
........बिज्ञानसंपादनोनामप्रथमोसोपानसंपूर्ण"

विषय—रामचरितमानस के बालकाण्ड को कथा ।

टिप्पणी—तुलसीदास-विरचित रामायण की सं० १९०९ वि० की पाण्डुलिपि । ग्रन्थ की लिपि पुरानी और अस्पष्ट है । प्रारम्भ के दो पृष्ठ खण्डित हैं। यह ग्रन्थ 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे के सौजन्य से प्राप्त हुआ ।

१०० रसिकप्रिया—ग्रन्थकार—केशवदास । लिपिकार—× । अवस्था - प्राचीन, जीर्ण-शीर्ण । पृष्ठ-सं० ५५ । प्र० पृ० पं० लगभग—२० । आकार—$८\frac{१}{७}" \times ४\frac{१}{४}"$ । भाषा—हिन्दी । लिपि — नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"देषिआगिलागीवृषभाणजूकेमन्दिरमेरे ....धाइकैं
जहातहासोरभारोभोरणरनानिनिकीसबहीकीछूठिगइलाज
हायमायकैं ।।
ऐसेमेकुअरकान्हसारोढआबाहिरैकैराधिकैजगाइओर
जुवतीजगाइकैं ।।

लोचणविशालचारुचिबुकलिलारचुम्बिचेथेकीसीबाल
लाललीनीउरलाइकै ॥"

मध्य—(पृ० सं० २८) "अथउत्तमालक्षणं ॥
मानुकरंअपमानतेतजैमानतेमानु ।।
पिउदेषंसुषपावइताहि उत्तमाजानु ॥

॥ अथउत्तमा ॥
होतकहाअवकेसमुझेसमुझेनतवैजवहेसमुझाए ॥
एकहिवंकविलोकमणिमाहअनेकअमोलविकैकविकाए ॥"

अन्त—"।' अथभारतीलक्षणनम् ॥
वरनिएयामेवीररसअरुसिगाररसहास ॥
कहिकेप्रबसब .. अथ... ... सो भारतीप्रकास ॥
काननिकनकपत्रचक्रचमकतचारुद्वयफजुभूलीझलकचिअतिसदाइ।
केशवछवीलोछत्रुसीसफूलसारथीसोकेसरिकोअउअध
राधिकारवीवनाइ ॥
निकेहीनवेसरिकोमोतिनकीनाव एकहिविलोकति
गोपालातोगएविकाइ ॥
लोचनविसासाभालजटितपराइला ...... मीननिकरेथ
मनमथराय ॥"

विषय—नायक, नायिका, रस-अनरस, हाव-भाव, शृंगार आदि का मनोरम वर्णन।

टिप्पणी—ग्रन्थ खण्डित, जीर्ण-शीर्ण और अस्त-व्यस्त है। प्रारम्भ के पृष्ठ खण्डित हैं तथा वर्त्तमान चार पृष्ठ अत्यन्त जीर्ण होने के कारण अपठनीय हैं। इसीलिए, प्रारम्भ की पंक्तियाँ पृष्ठ-संख्या १६ से उल्लिखित हुई हैं। अन्तिम भाग के भी खण्डित होने के कारण लिपिकाल का उल्लेख नहीं हुआ है। ग्रन्थ की लिपि पुरानी तथा अस्पष्ट है। 'चौबे-संग्रह' के लिए पं० गणेश चौबे (बँगरी, मोतीहारी, चम्पारन) के सौजन्य से प्राप्त।

प्राचीन हस्तलिखित संस्कृत—पोथियों का विवरण

१. मुहूर्त्तचिन्तामणि-ग्रन्थकर्त्ता—दैवज्ञानन्त सुत श्रीदैवराम। ग्रन्थ-लिपिकार—खुसिहाल। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृ० सं० ४६। प्र० पृ० पं० लगभग—१३। लिपि—नागरी। रचनाकाल -सं० १५२२। लेखनकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नम: ।। गौरीश्रव: केतक पत्र भङ्गमाकृष्य हस्तेन ददन्मुखाग्रे।
विघ्नं मुहूर्ताकलितद्वितीय दन्तप्ररोहो हरतु द्विपास्य: ।।१।।
क्रिया कलाप प्रतिपत्ति हेतुं संक्षिप्त सारार्थ विलास गर्भम्।
अनन्त दैवज्ञ सुतस्स रामो मुहूर्त चिन्तामणिमातनोति ।।२।।"

अन्त—"गिरीश नगरे वटे भुज भुजेषु चन्द्रर्मि तेशके। विनिरयदिमं खलु मुहूर्त चिन्तामणिम्।।
इति श्री दैवज्ञानन्त सुत दैव राम विरचिते मुहूर्त चिन्तामणौ गृहप्रवेश स्समाप्त.।।
समाप्तोयम्।
कार्तिके चासिते पक्षे धूर्माकिंगजमुके मिते विलेखि खुसिहालेन श्री मुहूर्त चिन्तामणि:।।
पाटलिपुत्रके।।"

विषय ज्योतिष-शास्त्र का, संस्कृतभाषा का, प्रसिद्ध ग्रन्थ। ग्रन्थ में सिद्धान्त से सम्बद्ध चित्र भी दिये हुए हैं।

टि०— लिपिकार के निवासस्थान तथा काल आदि का संकेत ग्रन्थ के आदि अथवा अन्त में स्पष्ट नहीं है। अन्त के श्लोक का 'धूर्माकं गजमुके मिते' स्पष्ट नहीं होता है। यह ग्रन्थ शिवचन्द्रजी आर्य (मोरजानहाट, छत्रपति तालाब, भागलपुर) से प्राप्त हुआ है। ग्रन्थ की लिपि पटना में हो की गई है; क्योंकि 'पाटलिपुत्रके' लिखा हुआ है।

२. रणदीक्षा-प्रकार—ग्रन्थकार—×। ग्रन्थलिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन देशी कागज। पृष्ठ-सं० ६३। प्र० पृ० पं० लगभग -१७। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"ततश्च व्याख्यान प्रकाशित देवताद्यर्थ विशेषामंत्रा: केचनाध्यात्मिकाधिदैविकाधिभौतिकानुपसर्गानिपाकर्तुं मनोरथपथप्रवर्तमानानर्थाश्च साधयितुं वाजसनेय संहिताया समुच्चीयते यद्यपि मंत्रानुकल्पाश्चिरंतन विविधप्रयोगसंबंधबधुरासंबंधा: संति तत्र तेषां मन्त्राणांप्रतीकोपादानमात्र कृतार्थत्वादवसान व्यवस्थितिरवश्यवोद्धव्या देवताद्यर्थ विशेषाश्च भाष्या। ....। तत्र तावत्प्रथमं सर्वमंत्राणांशिर: शेखरीभूतस्य प्रणवस्योपासनोच्यते यत्र ग्राम्य पशूनां शब्दो न श्रूयते तत्र गंगा-यमुना-तटादिपुण्यक्षेत्रेषु वृक्षैक स्थूणं प्राङमुखं कुशछन्न कुशध्वजं कुशपरिवेष्टितं गृहं कृत्वा कुशचीर: कुशवासा कुशयज्ञोपवीतः कुशहस्त: शाकयावक पयोभक्ष्येष्वन्यन्तमभोजन विजितेंद्रिय: पंचलक्षप्रणवंजपेत्। अस्य प्रणवस्य ब्रह्माऋषि: गायत्री छंद: परमात्मा-

देवता सकल कल्मष विनाशनद्वारा सर्वमंत्रसिद्ध् यर्थे विनियोग. इति विनियोगपूर्वंजपित्वा दशांशतिसाज्यं जुहुयात् ।। अत: सर्वदेवा सर्वमंत्राश्च सिद्धा भवंति अथ गायत्री साच प्रसिद्ध ऋष्यादिका अतश्चात्र केवलप्रातीतिक: [समुदायार्थो लिख्यते धीमहि ध्यायाम: चितयाम इति यावत् किं तत् भर्ग: तेज: भृज्यंते] अनेन । श्रुति स्मृति विहित कर्माणि फलप्रायकत्वद्वारेणेति भर्ग: भ्रस्जो पाके अस्मादोणादिक असुन प्रत्यय ग्रहिज्याव-घीत्यादिना संप्रसारणं कीदृशं वरेण्यं वरणीयं अभिलषणीयं ब्रह्मादिभिरपीत्यर्थ: वस्यतत् प्रथमाया पृष्ठ्याविपरिणामात् तस्य सवितुर्देवस्य सर्वे .. !"

अन्त—"अपि च एनं प्रथम: प्रथम प्रागेवाऽयैतिष्ठत् अधिष्ठित: अस्याश्वस्य रणन गधर्वं अगृह्णर । इत्याददेतमश्वं स्तौमीत्यभिप्राय: ।।२६।। अनेनाश्व सकृदाहुतीना मृष्य सहस्र जुहुयात् चतुरश्वयुक्तं रथं लभते ।३०।। असियम इति तिलाहुती: शतसहस्रं जुहुयात् विपापो भवति । ब्राह्मणमपिलक्षहोमेन तारयेत् ।। इतिप्रकार: ।। इति चतुर्थ पल्लव ।।"

विषय – शुक्ल-यजुर्वेद के चुने हुए मन्त्रों के अर्थ, व्याख्या आदि संस्कृत-भाषा में हैं। मन्त्रों के पूर्व उनके ऋषि, देवता तथा विनियोग आदि भी हैं।

टि०—१. प्रारम्भ के चार पृष्ठ नहीं हैं। ५वाँ पृष्ठ फटा हुआ है। प्रारम्भ की पंक्तियाँ पृष्ठ ६ से लिखी गई हैं।

२. ग्रन्थ का प्रारम्भ अथवा अन्त देखने से कर्त्ता एवं लिपिकार का पता नहीं चलता है।

३. ग्रन्थ कर्मकाण्डपरक है। हवन तथा बड़े बड़े यज्ञों के सम्बन्ध में लिखा गया है।

४. ग्रन्थकार ने इन वैदिक मन्त्रों की व्याख्या के सम्बन्ध में अपना अभिप्राय प्रकट किया है। किन्तु, पृष्ठ फटे होने के कारण स्पष्ट नहीं होता है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। यह ग्रन्थ श्रीशिवचन्द्रजी आर्य (छत्रपति तालाब, मीरजानहाट, भागलपुर) के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

३. श्रीदत्तात्रेयतन्त्र—ग्रन्थकर्त्ता—×। ग्रन्थलिपिकार—श्रीसरयूप्रसाद। अवस्था—प्राचीन, साधारण कागज। पृष्ठ-स०४०। प्र० पृ० पं० लगभग २२। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल ×।

प्रारम्भ—"श्रीगणेशायनम:। अथदत्तात्रय लिख्यते ।। श्री दत्तात्रय उवाच ।।
कैलासे शिखराशीन देव देवं महेश्वर
दत्तात्रय परिप्रछ शंकरं लोक शंकरं ।।१।
कृतांजलि पुटो भूत्वा पृच्छते [भक्तवत्सल: ।।
भक्तानां च हितार्थाय कल्पतन्त्रश्च कथ्यते ।।२।।
कलौ सिद्धि महाकल्पं तन्त्र विद्या विधानकं
कथयंति महादेव देव देवं महेश्वरम् ।।३।।
सन्ति ना ना विधा लोके मंत्र मंत्राभिचारिक ।।
आगमोक्ता पुराणोक्ता ज सोक्ता डामरो तथा ।।४।।"

अन्त—"पिता शैव: शैवी तदनु जननी च सुहृद: पिता शैव: शैवी कुलमरिफलं शैवमिति च रुचि: शैवेशास्त्रे शिवशरणपूजानुसरणं मुखे शैवी वाणी भवतु भगवन्मे शिव शिवं ।।५।
इति श्री दत्तात्रेय तंत्रे दत्तात्रेयईश्वर सम्वादे इन्द्रजाल समाप्ति ।।
यादृशं पुस्तकं दृष्ट्वा तादृशं लिखितं मया ।।
यदि शुद्ध मशुद्धं वा मम दोषो न दीयताम् ।।१।।
लिखितं पुस्तकं तन्त्रं सरयू प्रसादेन घीमता ।।"

विषय—तन्त्र-शास्त्र—इन्द्रजालविद्या, सर्पविषविमोचन, व्याघ्रभयनिवारण आदि विषय इसमें हैं। यथा ३८ पृष्ठ में—'अथ सर्प निवारणं ।।
अस्तिकं मुनिराजं च नमस्कार पुन: ।।२।।
स्वप्ने सर्पभयं नास्ति नान्यथा० ।।३।
गृहीत्वा पुष्यनक्षत्रे अमृते मूलकं हरेत् ।
यन्माला धारयेत् कण्ठे सर्प बाधा भयं न हि ।।४।।
अथ व्याघ्रभय निवारणं ।।
गृहीत्वा शुभनक्षत्रे धत्तुर मूलकं हरेत् ।।
धारयेद्दक्षिणे कर्णे वृश्चिकानां भयं न हि ।।"

टि०—१. सम्पूर्ण ग्रन्थ २२ 'पटल' में समाप्त है।
२. ग्रन्थकार का पता आदि और अन्त में, नहीं मिलता है। किन्तु, यह संकेत है कि ग्रन्थकार 'शैव' हैं।
३. लिपिकार ने अपना 'नाम' लिखने के अतिरिक्त, अपने सम्बन्ध में कुछ भी नहीं लिखा है। यह ग्रन्थ श्रीभागवतप्रसादजी खुशरूपुर, पटना) से प्राप्त हुआ।

४. गीतगोविन्द्—ग्रन्थकार—श्रीजयदेव कवि। ग्रन्थलिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन देशी कागज, फटा हुआ। पृष्ठ—सं० ७८। प्र० पृ० पं० लगभग—१३। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"विहरति हरिरिहसरसवसंते ।।
नृत्यति युवति जनेन समं सखि विरहजनस्य दुरंते ।। ध्रुपदं
उन्मद मदनमनोरथ पथिक वधूजनजनित विलापे ।।
अलिकुल संकुल सम समूह निराकुल वकुल कलापे ।।२।।
मृग मद सौरभ भरस वशंवद नयदल माल तमाले ।।
युवजन हृदय विदारण मनसिज नखरुचि किंशुक जाले ।।३।।
मदन महीपति कनकदंडरुचि केशर कुसुम विकाशं ।।
मिलित शिलीमुख पाटले पटल कृत स्मरतूण विलासं ।।४।।
विगलित लज्जित जगदवलोकन तरुणकरुण कृत हासे ।।
विरहिनि कृन्तन कुंतमुखाकृति केतकि दंतुर तासे ।।५।।"

अन्त—"श्री जयदेव भणित विभवद्धि गुणीकृत भूषणभारं ।।
प्रणमत हृदिविनिधाय हरिं सुचिरं सुकृतोदयसारं ।।८।।

विषय—श्रीराधाकृष्ण के विरह-वर्णन के साथ कश्मीर-सुषमा-वर्णन।

टि०—१. गेय पदों के पूर्व ध्रुवपद' आदि ताल-निर्देश किया हुआ है।

२. ग्रन्थ अपूर्ण है। प्रारम्भ के २ पृष्ठ नहीं हैं। मानिनी' वर्णन नाम दशम सर्ग समाप्त करके ११ सर्ग का कुछ अंश है। आगे के पृष्ठ नहीं हैं। प्रारम्भ के पृष्ठ फटे होने के कारण ऊपर का अंश पृष्ठ ८ से लिखा गया है। यह ग्रन्थ श्रीशिवचन्द्रजी आर्य (मीरजानहाट छत्रपति तालाव, भागलपुर) से प्राप्त है।

५. सारस्वतप्रक्रियाव्याकरणम्—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृ० स० ६६। प्र० पृ० प० लगभग—१४। लिपि नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ 'श्री गणेशाय नमः ॥ आनन्दैक निधिन्देवमन्तरायतमोरविम् ॥
दया निल्पनं वन्दे वरदं धिर दान नम् ॥१॥
वाग्देवतायाश्चरणारविन्द मानन्द सान्द्रे हृदिसन्निधाय ॥
श्री पुञ्जराजः कुरुते मनोज्ञां सारस्वतव्याकरणस्य टीकाम् ॥१॥
इह ग्रंथस्य कर्ता निरन्तरायाभीप्सितार्थसिद्धयेशिष्टाचारं प्रतिपालनायवेष्टदेवता-नमस्काररूपमंगलाचरणपूर्वकं श्रोतृप्रतिपत्ति द्वारा सप्रयोजनं चिकीर्षितं प्रति-जानीते। प्रणम्य परमात्मानमित्यादि ॥१। तत्र परमात्मानं प्रणम्य ॥ बालधी वृद्धिसिद्धये ॥ नातिविस्तराम् ॥ सारस्वतीं प्रक्रियां ऋजुं कुर्वे इत्यन्वय ॥ प्रक्रियन्ते प्रकृति प्रत्ययादि विभागेन व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः अनया इति प्रक्रिया ॥
सरस्वत्या प्रणीता या प्रक्रिया सा सारस्वती प्रक्रिया तां सारस्वतीं प्रक्रियां ऋजुं प्रयोगानुकूल सूत्रक्रमां कुर्वे करिष्ये वर्तमान समीप्ये वर्तमानवदेति सूत्रात्तत्करिष्ये इति स्थाने कुर्वे इति ॥"

अन्त—"आपतः स्त्रियाम् ॥ आकारान्तामान्न स्त्रियां वर्तमानादाप् प्रत्ययो भवति ॥ आपि विहिते। आपरीतसेध्वोंपः। जाया माया श्रद्धा धाना एवमादिषु स्त्रीप्रत्यय विशिष्टेषु बालानां लिङ्गविशेषज्ञानं भवतीति लिङ्गविशेषविजिज्ञार्थायेतियुक्तमेवोक्यतम् ॥ इत्यादिन्यादि शब्दात् ॥"

विषय—संस्कृत के प्रसिद्ध व्याकरण की टीका।

टि०—१ इस ग्रन्थ के टीकाकार ने ग्रन्थ की टीका करते हुए इसे सरल बनाने का यत्न किया है। यद्यपि टीकाकार ने अपना परिचय नहीं दिया है, तथापि प्रारम्भ के 'श्रीपुञ्जराजः' से प्रतीत होता है कि टीकाकार कोई पुञ्जराज हैं।

२ यह ग्रन्थ श्रीभागवतप्रसादजी (खुशरूपुर, पटना) के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

६. वाजसनेयसंहिता—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी। पृ० सं० ३१। प्र० पृ० पं० लगभग—१४। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"ये अग्नयः समनसोन्तराद्यावापृथिवीऽइमे।
शारदावृतूऽ अभिकल्पमानाऽइन्द्रमिवदेवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाङ्गिरस्वद्ध्रुवे-सीदतम ॥१६॥"

अन्त—"अभिगोत्राणि सहसा गाहमानो दयो वीरः शतमन्युरिन्द्रः ।।
दुश्च्यवनः पृतनाषाड्युद्धोस्माकक्षसेना अवतु अयुत्सु ।।३६।।"

विषय—यजुर्वेद की शाखा—वाजसनेय-संहिता, मूल ।

टि०-१ ग्रन्थ की लिपि अच्छी नहीं है । प्रारम्भ के १०१ पृष्ठ नहीं हैं । पृष्ठ १०२ से प्रारम्भ होकर पृष्ठ १३४ में समाप्त हो गया है ।

२ यह ग्रन्थ श्रीपरमानन्द सिंहजी (ग्राम-चन्दनपुरा, जमालपुर मुँगेर) के प्रयत्न से प्राप्त हुआ है ।

३. ग्रन्थ अपूर्ण है । अतएव, लिपिकार का नाम नहीं ज्ञात हो सका । मन्त्रों के साथ उदात्त, अनुदात्त, स्वरित-बोधक चिह्न भी दिये हुए हैं । ग्रन्थ के बीच-बीच में अध्याय समाप्त होने पर 'इति वाजसनेय संहिता पाठे' लिखा हुआ है । ग्रन्थ १७वें अध्याय तक ही है ।

७. **रुद्रयामलतन्त्र**—ग्रन्थकार—×। लिपिकार ×। अवस्था – प्राचीन देशी कागज । पृ० सं० ३१ । प्र० पृ० प० लगभग—२० । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"पूर्णगिरि पीठाय नमः । उड्डियान पीठाय नमः ।। कामरूप पीठाय नमः । जालंधर पीठाय नमः । इति संपूज्य षट्कोणो षडंगंसंपूज्य ।। त्रिखंडेन त्रिकोणाग्र दक्षोत्तरं संपूज्य ।। मध्ये ।। आधारशक्तये नमः । इति संपूज्य ।। त्रिकोण गर्भे यत्रिका संस्थाप्य नमः इति सामान्यार्घ्यं जलेनाभ्युक्ष्य । यंधूम्रार्चिषे नमः ।। रं उष्मायै नमः ।। लं ज्वलिन्यै नमः ।। वं ज्वालिन्यै नमः ।। शं विस्फुलिंगिन्यै नमः ।। षं सुश्रियै नमः ।। सं स्वरूपायै नमः ।। हं कपिलायै नमः ।। लं हव्यवाहायै नमः ।। दां कव्यवाहायै नमः ।। इति संपूज्य ।। '

अन्त—"चंचत् कांचन कंडलांग परामबद्धकांचीस्रजं ।
य त्वां चेतसि त्वद्गते क्षणमपि ध्यायंति कृत्यास्थिराम् ।
तेषां वेश्म सुविभ्रमादहरहः स्फारी भवत्यश्चिरं ।।
माद्यत्कुंजकणाति लातरतलाः स्थैर्य भजंते श्रियः ।।१०।।"

विषय—तन्त्रशास्त्र ।

टि०—१ ग्रन्थ अपूर्ण है । पृ० १६ से प्रारम्भ है । ४७ पृ० में समाप्त हुआ है ।

२.यह ग्रन्थ श्रीरामनारायणजी 'आर्य' (मन्त्री वैदिक पुस्तकालय, खुशरूपुर, पटना) के उद्योग से प्राप्त हुआ है ।

८. —ग्रन्थकर्त्ता - × । लिपिकार × । अवस्था—प्राचीन देशी कागज । पृष्ठ-सं० २२ । प्र० पृ० पं० लगभग × १४ । लिपि--नागरी । रचनाकाल—×। लिपिकाल— ×।

प्रारम्भ—"आचम्य प्रमुख उपविश्य प्रथम रक्षामारभ्य क्रमेण ।। ऊं गणपतिरसि । ऊं गौर्य्यसि । ऊं पद्मासि । ऊं शच्यसि । ऊं मेधासि । ऊं सावित्र्यसि । ऊं विजयासि । ऊं जयासि । ऊं देवसेनासि ।। ऊं स्वधासि । ऊं स्वाहासि । ऊ मातरः स्थ । ऊं हृस्तिरसि । ऊं पुष्टिरसि । ऊं तुष्टिरसि । ऊं आत्मकुल देवतासि । ऊं स्रोरसि । ततो पिंडमादय प्रथमरक्षामारभ्य ।। ऊंभूर्भुवः स्वःगणपति इहागच्छ इह तिष्ठ । ऊं भूर्भुवःस्वःगौरि

इहगच्छ इहतिष्ठ । ऊं भूर्भुवः स्वःपद्मे इहागच्छ इह तिष्ठ । ऊं भूर्भुवः स्वः शचि इहागच्छ इह तिष्ठ । ऊं भूर्भुव स्वः धेमेइहागच्छ इह तिष्ठि । ऊं भूर्भुवः स्वः सावित्रि इहागच्छ इह तिष्ठ । ऊं भूर्भुवःस्वः विजये इहाग........।"

अन्त—"ब्राह्मणः स्थापनं कृत्वा प्रणीता ह्युत्तरेपरम् ।
जलपात्र निधायाथ प्रणीतापूरणादिभिः ॥१॥
कृत्वाज्यभागपर्यन्तं वह्नौ पचाहुतिस्ततः ।
चरोः प्रजापतिर्हुत्वा भूयः पञ्चाहुतीश्चरोः ॥
प्रजापतिस्त्रिक्षकृते व्याहृत्यादि घृतैर्न्न च ॥"

विषय—इसमें ग्रन्थ का नाम नहीं है। ग्रन्थ में श्राद्ध तर्पण पिण्डदान, मातृकापूजा और जातकर्म—निष्क्रमण-संस्कार की विधि लिखी हुई है।

टि०—१. ग्रन्थ अपूर्ण है। प्रारम्भ के ४५ पृ० नहीं हैं। ४६ पृ० से प्रारम्भ होकर ६८ पृ० में समाप्त हो गया है। ग्रन्थ का अन्तिम भाग भी नहीं है। अतएव, ग्रन्थ के लिपिकार का पता नहीं है। अक्षरों से ज्ञात होता है कि इसके लिपिकार कोई बँगला-भाषा-भाषी पण्डित हैं।

२ यह ग्रन्थ श्रीरामनारायणजी 'आर्य' (खुशरूपुर, पटना) के उद्योग से प्राप्त हुआ है।

९. राजनीतिशास्त्रशतकम्—ग्रन्थकार—आचार्य चाणक्य। लिपिकार—भीष्मदास। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृ०सं० ६। प्रतिपृष्ठ पंक्ति लगभग—१२। आकार-प्रकार १३"×५"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लेखनकाल—संवत् १९२६ वैशाख, कृष्ण—पूर्णिमा, रविवार।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—'श्री गणेशायनमः ॥ नीतिशास्त्रं प्रवक्ष्यामि चाणुक्येन तु भाषितंयन विज्ञानमात्रेण बुद्धिर्विकास्यते नृणाम् १

प्रथमे नार्जिता विद्या द्वितीयरेनार्ज्जित धनन् तृतीये नार्ज्जितो धर्मश्चतर्थे किं करिष्यति कृते च लिप्पते देशस्त्रेतायां ग्रम एव च द्वापरे लिप्पते भर्ता कलौ कर्तव लिप्पते कृते त्वस्थ गताः प्राणं स्त्रेतायां मांस एव च द्वापरष्वंङ्यपाः प्राणः कलौ चान्नगता परम् ४"

अन्त की पंक्तियाँ—'संतोषस्त्रिषु कर्तव्य सुदारे भोजनेधने त्रिपु चैव न कर्तव्यो दान तपसि चाव्यतपेत् ।
सर्वव्यारम्भते काये मे कचित्तेन भाषितं एकाक्षर प्रदारं यो गुरुं नाभिवंदते
स्वानयोनि शतंगत्वा चांडालेष्वपिजायते ९८
जुगांते चलति मेरुः कल्पान्ते सप्तसागरः साधवः प्रतिपन्नार्था न चलंति कदाचनः
अध्वाजरादेहस्वतामनध्वावाजिनां जरा असंभोगा जरा स्त्रीणां संभोगः करिजरा १००

इति श्री राजनीतिशास्त्र शतकं समाप्तम् शुभं भूयात् ॥" (वस्तुतः यहाँ 'अध्वा जरा देहवतामनध्वा वाजिनां जरा असम्भोगो जरा स्त्रीणां सम्भोगः करिणां जरा॥' होना चाहिए। यही शुद्धपाठ है।)

विषय—साधारण व्यवहार के प्रसिद्ध नीतिश्लोक ।

टि०—१. ग्रन्थ पुरानी शैली में लिखा गया है। यत्र-तत्र अशुद्धियाँ भी हैं। लेखक ने श्लोकों को भी कई स्थानों में प्रचलित पाठ से भिन्न लिखा है। कहीं-कहीं छन्दोभंग भी है।

२. यह ग्रन्थ कबीरमठ, रोसड़ा के महन्त श्रीअवधदास साहबजी के सौजन्य से प्राप्त किया।

१०. पञ्चदशी—ग्रन्थकर्ता—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं० २५८। प्र० पृ० पं० लगभग—२५। आकार-प्रकार—१२"×५१/६"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल—×।

प्रारम्भ—"ओं श्री गणेशायनमः ॥ ओं नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ओं नत्वा श्री भारती तीर्थ विद्यारण्य मुनीश्वरौ प्रत्यक्तत्व विवेकस्य क्रियते पद दीपिका ॥

प्रारीप्सितस्य ग्रन्थस्याविघ्नेन परिसमाप्ति प्रचयगमनाभ्यां शिष्टाचार परिप्राप्तमिष्ट देवता गुरु नमकारलक्षणं मंगलाचरणं स्वेनानुष्टितं शिष्यशिक्षार्थं श्लोकेनोपनिवप्राति अर्थाद्विषय प्रयोजने च सूचयति नम इति।

(मोटे अक्षरों में)—ओं नमः श्री शंकरानन्द गुरुपादाम्बुजन्मने सविलासमहामोह ग्राहग्रासैककर्मणे १ ॥

तत्पादाम्बु रुहद्वंद्व सेवा निर्मलचेतसाम् सुखवोधाय तत्वस्य विवेकोयं विधीयते २"

अन्त—'तर्हि किमेतदित्याशंक्याह ब्रह्मविद्येति इयं ब्रह्मविद्या कथमुत्तनेशंक्याह ध्यानेनेति असंगतित्वे हेतुमाह विद्यायामिति भेदकोपाधिवर्जनादित्युक्तं तानि विभेदकोपाधिनाह शांतेति एतेषां परिहारः केनोपायेनेत्याशंक्याह योगाद्विवेकेति। फलितमाह निरुपायोति त्रिपुटीनाम मावाद्भूमानंद इत्युच्यर्थतः ग्रन्थमुपसंहरति (मोटे अक्षरों में) शांताघोराः शिलायाश्चभेदकोपाधयोमताः योगाद्विवेकतोवैषामुपायीनामकृतिः ।६२ निरुपायि ब्रह्मतत्व भासमाने स्वयं प्रये अद्वैते त्रिपुटित्रास्ति भूमानंनत उच्यते ६३ ब्रह्मानंदाभिये ..न्थे पंचमोध्याय ईरितः विषनानंदपते न द्वारेणांतः प्रविश्यतो ६४ प्रियाद्वारिहरोऽ नेन ब्रह्मानंदेन सर्वदा पायाच्च प्राणितः सर्वांन् स्वाश्रितान् बुद्धमासिनः ६५ (पतले अक्षरों में) ब्रह्मानंद इति ६४, ६५ इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीभारती तीर्थ विद्यारण्यमुनि विरक्तिकरण श्री रामकृष्णख्य विरचिते उपदेशग्रन्थविवरणे विषायानंदः पंचमोध्यायः ॥"

विषय—दर्शन (वेदान्त-दर्शन)।

टि०—१. वेदान्त के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पंचदशी' की टीका।

२. टीका अच्छी है। मोटे अक्षरों में मूल ग्रन्थ है। पतले अक्षरों में उसकी टीका है।

११. सूत्रपाठ—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं०—४। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार-प्रकार १४'×५३/४"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लेखनकाल—×।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—"श्री गणेशाय नमः ॥ अ इ उ ऋ लृ समानाः १ ह्रस्व दीर्घप्लुत भेदा-स्सवर्णाः २ ए ऐ ओ औ संध्यक्षराणि ३ नुयेस्वराः ४ अवर्णानामिनः ५ ह य व र ल ६ ञ ण म ङ भ ७ उ ठ ध घ म ८ ज ड द ग व ९ ख फ छ ठ थ १० च ट त क प ११ श ष स १२ अद्यामाभ्याम् १३ असंस्वरादिदिष्टिः १४ ॥"

अन्त की पंक्तियाँ—"दो द ति ७७ स्वरान्तो वा ७८ स्थायी ७९ दस्तस्यनोदश्च ८० स्वा-द्योदितश्च ८१ छार्थेपुतत्कत्त् के तुम् ८२ पूर्वकालेत्का ८३ समासे क्वप् ८४ पौनः पुन्येणास्पदं द्विश्च ८५ लोकाच्छेषस्य सिद्धिः ८६ ।
इति सूत्रपाठ सर्वसूत्र संख्या ६४ पंचसंधि ॥ षटलिंग पूर्व पाठ सूत्रपाठ अख्यात कृदन्त सूत्र पाठः ॥"

विषय— संस्कृत-व्याकरण ।

टि०—पाणिनीय व्याकरण से इतर किसी प्रसिद्ध व्याकरण के सूत्रों का संकलन प्रतीत होता है। यह ग्रन्थ अपूर्ण-सा ज्ञात होता है, यतः व्याकरण-शास्त्र के तद्धित, समास, स्त्रीप्रत्यय, तिङन्त और सुबन्त के लिए सूत्रों का समावेश इसमें नहीं है। यह ग्रन्थ, कबीरमठ, रोसड़ा (दरभंगा) के महन्त श्रीअवधदास साहबजी से प्राप्त किया है।

१२. सारस्वतप्रक्रियाव्याकरण— ग्रन्थकार- ×। लिपिकार-भीष्मदास वैरागी । अवस्था — ठीक, ग्रन्थ अपूर्ण । पृष्ठ-सं० १९ । प्र० पृ० पं०लगभग—२७ । भाषा—संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल – प्रसिद्ध । लेखनकाल—संवत् १९२७, आश्विन कृष्ण, अमावस्या, रविवार । आकार-प्रकार—१४३/४"×५१/२" ।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—"श्री गणेशानमः ॥ अथाख्यात प्रत्ययानिरूप्यंते धातोः वक्ष्यमाणाः प्रत्ययाः धोतोर्ज्ञेयाः भ्यादिः भूसत्तायामित्यादि शब्दोधातु संज्ञो भवति धातुत्वात्ति-पादयः स च त्रिविधः आत्मनेपदी १ परस्मैपद्युभयपदी चेति आदनुदात्तङितः अनुदात्तोङितश्च धातोरादित्यात्मने पदं भवति ञित्स्वरितेत्तवुभे ञितः स्वरितेतश्च धातोरात्मनेपदपरस्मैपदे भवतः आत्मगामि चेत्फलमात्मनेपदपरगामिचेत्फलं परस्मैपदं प्रयोक्तव्यमन्वर्थात् परतोऽन्यत् पर्वोक्त निमित्तविधुरादन्यस्माद्धातोः परस्मैपदं भवति न चेदपाम् तिबादीनामष्टादश संख्याकानामद्यानि न वचनानि परस्मैपद संज्ञानि भवन्ति पररायात्मने पदानि।"

अन्त की पंक्तियाँ—'कथंकारम् इत्थंकारम् भुवोभावे क्यप् ब्रह्मभूयं गंतः लक्षेरीमडव लक्ष-दर्शनांकनयोः लक्ष्मीः स्त्यायतेःस्त्रीत्वादृटिलोपः संयोगात्तस्यलोपः दित्वादीप्-थैस्यै शब्द संघातयोः स्त्री वर्णात्कारः रादिको वा रेफः रकारादीनि नामानि शृवण्तो मम पार्श्वनिमतः प्रसभताम्मेति रामनामाभिसंकया १ लोकाच्छेषस्यसिद्धिः यथा मातारादेः इति कृत्य प्रक्रिया स्वरूपान्तोऽनुभूत्यादिः शब्दो भूद्यत्रसार्थकः समस्करी शुभांचके प्रक्रियां चतुरो चिताम् १ अवत्ताद्धोयग्रीवः कमलाकर ईश्वरः सुरासुरनराकार मधयापीतपंकजः ॥२॥ इति श्री सारस्वती प्रक्रिया याद्दशं पुस्तके द्दष्टं ताद्दशं लिषतं मया यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न दीयते ॥ ॥ इदं पोस्तक लिषीतं भीष्मदासेन ॥"... । श्री सरस्वत्यै नमः । श्री गणेशाय नमः ।"

विषय—संस्कृत-व्याकरण की एक शाखा। सारस्वतप्रक्रिया सम्पूर्ण नहीं है। केवल तिङन्त-प्रकरण है।

टि०—ग्रन्थ में अधिक अशुद्धियाँ हैं। पाठभेद भी प्रतीत होता है। ग्रन्थ में, पूर्णविराम या अर्द्धविराम के प्रयोग का अभाव है। यह ग्रन्थ श्रीअवधदास साहबजी, महन्त कबीरमठ रोसड़ा (दरभंगा) के सौजन्य से प्राप्त किया।

१६. श्रीमद्भगवद्गीता—ग्रन्थकार—श्रीवेदव्यासजी। लिपिकार—रामभक्त। अवस्था—ठीक, देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—४२। प्र० पृ० पं० लगभग-२०। आकार-प्रकार—१०$\frac{3}{8}$" × ५$\frac{1}{5}$"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लेखन-काल-संवत् १९२२, मंगलवार, द्वितीया।

प्रारंभ की पंक्तियाँ—"श्री गणेशायनमः॥ अस्य श्री भगवद्गीतामालामंत्रस्य श्री भगवान्वेद ऋषिरनुष्टुप् छन्दः॥ श्री कृष्णः परमात्मा देवता अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषासेतिवीजम्॥ सर्वं धर्म्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रजेति शक्तिः॥ अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचेति कीलकम्॥ नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक इत्यंङगुष्ठाभ्यां नमः॥ न चैनं क्लेदयंत्यापो न शोषयति मारुत इति तर्जनीभ्यां नमः। अच्छेद्योयमदाह्योयमक्लेद्योशोष्य एव चेति मध्यमाभ्यां नमः॥ नित्य सर्वगतः स्थाणुरचलोयं सनातन इत्यनामिकाभ्यां नमः॥ पश्य मे पार्थ रूपाणि इति कनिष्टकाभ्यां नमः॥"

अन्त की पंक्तियाँ—"राजन् संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः विस्मयो मे महान् राजन्हृष्यामि च पुन पुनः ७६ यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः तत्र श्री विजयो भूतिर्ध्रुव नीतिर्मतिर्मम ७७

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्री कृष्णार्जुन संवादे मोक्ष संन्यासयोगो नामष्टादशोऽध्यायः १८॥ इति श्रीकृष्णर्जुन गीता संपूर्णः॥"

विषय-कर्मयोग-दर्शन।

टि०—पोथी की लिखावट में प्राचीन शैली अपनाई गई है। लिखावट अच्छी है। यत्र-तत्र अशुद्धियाँ रह गई हैं। पाठभेद भी है।

यह ग्रन्थ श्रीअवधदास साहबजी, महन्त, कबीरमठ, रोसड़ा, दरभंगा से प्राप्त किया।

१४. धातुपाठ—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—। अवस्था—अच्छी है, प्राचीन हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ संख्या—८। प्र० पृ० पं० लगभग-१८। आकार-प्रकार—१३" × ५$\frac{1}{3}$"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ- "श्री गुरवे नमः॥ भूसतापाम्॥ चितो सज्ञानेच्युतिर् आसेचने श्च्युतिर रक्षणे मंथ विलोडने कुथि पथि लथि मथि हिंसा संक्लेशनयोः षिधु गत्याम् षिधु शास्त्रे माङ्गल्ये च खदस्थैर्ये हिंसायां च गद व्यक्तां वाचि।"

अन्त की पंक्तियाँ—"कषि चलने लवि आस्रंसने पुण भ्रमणे मृणहिंसायाम् कुल संक्याने चिड़ भेदने विड भातौ खड आकांक्षांयाम् नुक्ष सेवने पुष वृद्धौ भूखज मंथने इति धातुगणपाठः॥०॥ श्री॥०॥"

विषय—संस्कृत-व्याकरण के धातु (क्रि ा) गणों की सूची तथा उनके अर्थ।

टि० १. इस पोथी की लिखावट बहुत अच्छी और साफ है। सभ अक्षर पृथक् पृथक् हैं। इस ग्रन्थ में भी वर्त्तमान मुद्रित ग्रन्थों से पाठभेद-सा प्रतीत होता है। सम्भवतः, कुछ धातु नहीं भी दिये गये हैं।

२. यह ग्रन्थ श्रीअवधदास साहबजी महन्त, कबीरमठ, रोसड़ा, दरभंगा के सौजन्य से प्राप्त किया।

१५. धातुपाठ—ग्रन्थक र—। लिपिकार–×। अवस्था–अच्छी, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ संख्या—५। प्र० पृ० पं० लगभग–२४। आकार-प्रकार—१४″×५⅓″। भाषा—संस्कृत। लिपि नागरी। रचना काल ×। लेखनकाल—×।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ 'श्र गणेशायनमः॥ भू सत्तायाम् चिती सञ्ज्ञाने च्युतिर् आसेचने श्च्युतिर् क्षरणे मंथ विलोडने कुथि पुथि लुथि हिसा संक्लेशनयोः षिधु गत्याम् षिधू शास्त्रे माङ्गल्ये च खद स्थैर्ये हिंसायां च गद व्यक्तायां वाचि रदविलेखने साद अव्यक्ते शब्दे अर्द्ध गतौ याचने च अत सातत्य गमने खादु भक्षणे अद अदिबंधने दुरादि समृद्धौ चदि अ ह्लादने।"

अन्त की पंक्तियाँ—"कपि चलने लवि आस्त्रंसने पुण भ्रमणे मृग हिसायाम् कुल संख्याने च्चिड़ भेदने खिड विडभाती खड अ कांक्षाय म् भुक्ष सेचने यूष वृद्धौ भखज मंथने इति धातुगणपाठः॥०॥ श्री॥"

विषय—संस्कृत-व्याकरण के धातुओं (क्रियाओं) की सूची।

टि०—ग्रन्थ प्राचीन है। लिखावट की शैली भी पुरानी है। यह ग्रन्थ श्रीअवधदासजी महन्त, कबीरमठ, रोसड़ा से प्राप्त हुआ है।

१६. वैराग्यशतक—ग्रन्थकार–श्रीभर्तृहरि। लिपिकार - भीष्मदास वैरागी, कबीरपन्थी। अवस्था—अच्छी है। पृष्ठ संख्या—११। प्र० पृ० पं० लगभग–२०। आक र-प्रकार–३″×५½″। भाषा–संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—संवत् १९१० आषाढ कृष्ण त्रयोदशी १३।

प्रारम्भ की प क्तियाँ–' श्रीगणेशाय नमः ओं तत्सद्ब्रह्मणे नमः अपार संसार समुद्र मध्ये संमज्जतो में सरणं किमस्ति गुरो कृपालो कृपया वदैत ......। (प्रश्नोत्तरी के कुछ भाग समाप्त करने के बाद) श्रीराम कृष्णायनमः अथ वैराग्य शतक मारभ्यते चूडोत्तं सितचन्द्रचारु कलिका चंचच्छिखा भासुरो लीलादग्धविलोलकामशलभः श्रेयोदशाग्र स्फुरन् अतस्कूर्जदयारमोहतिमिरप्रासरमुच्छेद यच्चेत सः समानयोगिनां विजयत ज्ञानप्रदीपो हरः।"

अन्त की पंक्तियाँ—"पाणीपात्रं पवित्रं भ्रमण परिगतं भैक्षमक्षय्यमन्नं विस्तीर्ण वस्त्रमाशा सुदशकमलमल्पमस्त्वल्पमुर्वी येषां निःसंगत नां करणपरिणति स्वांतः॥ संतोषिणस्ते धन्या संन्यस्त दैन्यव्यतिकरनिकराः कर्म निर्मूलयंतिः॥१००॥ इति श्री भर्तृहरियोगींद्र कृतौ वैर ग्यशतके अवधूतचर्या निरूपणे नाम दसम दसके॥इति श्री भर्तृहरिकृत वैराग्य शतकं संपूर्णम्।"

विषय—वैराग्यपरक, दार्शनिक, मननशील विचार। यह ग्रन्थ प्रसिद्ध है।

टि०— ग्रन्थ में दो प्रकार के कागजों और लिपियों का समावेश है। इससे प्रतीत होता है कि दो व्यक्तियों ने मिलकर ग्रन्थ पूरा किया है। प्रथम प्रश्नोत्तरी और वैराग्य शतक के दो पृष्ठ के अक्षर तो एक व्यक्ति के हैं और कागज भी एक समान है; किन्तु बाद के अन्य पृष्ठों के कागज और लिपि में भी अन्तर है। प्रथम के अक्षर स्पष्ट तथा सुपाठ्य हैं, किन्तु शेष अक्षर अस्पष्ट और 'घिचपिच' हैं। यह ग्रन्थ श्री अवधदास साहबजी, महन्त, कबीरमठ, रोसड़ा (दरभंगा) की कृपा से प्राप्त किया।

१७. श्रीमद्भगवद्गीता—ग्रन्थकार—श्रीवेदव्यासजी। लिपिकार वैष्णव श्री प्रेमदासजी। अवस्था—अच्छी है। ग्रन्थ के बीच के अक्षर, पानी गिरने से अस्पष्ट हो गये हैं। देशी कागज है। पृष्ठ-संख्या—२४। प्र० पृ० पं० लगभग—३०। आकार-प्रकार—१२″×६३⁄४″। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी रचनाकाल--×। लिपिकाल—संवत् १९७१ फाल्गुन कृष्ण एकादशी सोमवार।

प्रारम्भ की पंक्तियाँ—'ओं श्रीमते भगवनिम्बादित्याय नमो नमः। अस्य श्री भगवद्गीता माल-मंत्रस्य भगवान्वेदव्यास्य ऋषिः अनुष्टुप्छंदः श्रीकृष्णः परमात्मा देवता अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्चभाषसेतिबीजं ॥ सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रजेति शक्ति ॥ अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच इति कीलकं ॥
नैनं छिंदंति शस्त्राणि नैनं दहति पावक इत्यंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ न चैनं क्लेदयंत्यापो न शोषयति मारुत इति तर्ज्जनीभ्यां नमः।''

अन्त की पंक्तियाँ—"राजन्संस्मृत्य संवादमिममद्भुतं ॥ केशवाज्जु नयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः ॥७६॥
तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः ॥ विस्मयो मे महान् राजन् हृष्यामि च पुनः पुनः ॥७७॥
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्द्धरः ॥ तत्र श्री विजयो भूतिर्ध्रुवा निति मतिर्मम ॥७९॥
इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्म विद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णर्जुन संवादे मोक्ष-संन्यासयोगो नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥
लिखितं वंगदेशे हुलासीमध्ये नृसिंह ठाकुर समीपे ॥ लिखितं वैष्णव श्री प्रेमदास जो पठनार्थी से लिखितं ॥ शुभमस्तु मंगलं भवेतु ॥''

विषय—कर्मयोग दर्शन।

टि०— इसमें बहुत-सी अशुद्धियाँ हैं। लेखन, शैली प्रचीन है।
यह ग्रन्थ श्रीअवधदास साहबजी महन्त, कबीरमठ रोसड़ा (दरभंगा) से प्राप्त किया।

१८. अपरोक्षानुभूतिः—ग्रन्थकार—श्रीमच्छंकराचार्य। लिपिकार - ×। अवस्था प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—२०। प्र० पृ० पं० लगभग— ३२। आकार-प्रकार—

१४"×७३/४"। भाषा संस्कृत । लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लेखनकाल — × ।

प्रारम्भ—(पतले अक्षरों में) 'श्रीगणेशायनमः श्रीदक्षिणामूर्त्तये नमः ।। स्वप्रकाशश्च हेतुर्वः परमात्मा चिदात्मः चितस्वरूपः अपरोक्ष्यानुभूत्याख्यः सोहमस्मि परं सुखं ।।१।। ईशगुर्वात्मभेदद्यः सकल व्यवहारभूः औपाधिकः स्वचिन्मात्र सोऽपरोक्षानुभूतिकः ।।२।। तदेवममुसंधाय निर्विघ्नां स्वेष्टदैवतां अपरोक्ष्यानुभूत्याख्यामाचार्योक्तिं प्रकाशये ।।३।।

(मोटे अक्षरों में) श्री हरि परमानंदमपटेष्टारमीश्वरं व्यापक सर्वलोकानां कारणं तं नमाम्यहं ।।१।। अपरोक्षानुभूतिर्वैप्रोच्यते ।।"

अन्त—(पतले अक्षरों में) 'इदानीमुक्तं स्वाभिमतं योगमुपसंहरति राभिरिति किंचित्स्वल्पं पक्वादग्धाः मलाः रागादयो येषां तेषां हठयोगेन योगेन पातञ्जलोक्तेत प्रसिद्धे नाष्टांगयोगेन सयुतेयं वेदांतेक्तो योग इति शेषं स्पष्टं ।।४३।। अयमेव केषां योग्य इत्याकांक्षायां सर्वग्रंथार्थमुपसंहरन्नाह परिपक्वमिति येषां मतः परिपक्वं मलरागादि रहितमिति यावत् तेषामित्यध्याहारः

(मोटे अक्षरों में) राभिरंगैः समायुक्तो राजयोग उदाहृतः ।। किंचित्पक्वकषायाणां हठयोगेन संयुतः ।।४३।।

परिपक्वं मनो येषां केवलो पंचसिद्धिदः ।। गुरु दैवत भक्तानां सर्वेषां सुलभो भवेत् ।।४४।। इति श्रीमच्छंकराचार्य विरचित अपोरोक्षानुभूतिः सम्पूर्णो ।।राम राम।।

(पतले अक्षरों में) तेषां जितारिवद्वर्गाणां पुरुष धुरंधराणां केवलं पातंजलाभिमत योगनिरपेक्षः अयं वेदांताभिमत योगसिद्धिः दः प्रत्यगभिन्नब्रह्मापरोक्षज्ञान द्वारा स्व स्वरूपा वस्थान लक्षणमुक्तिप्रदः चकारोऽवधारणे नान्येषापरिपक्वमनसामित्यर्थः ।। ननु परिपक्व मनस्वमति दुर्लभमित्याकांक्षायांमस्यापिसाधकत्वादतोप्यतरंग साधनमाह गुरुदैवत भक्तानामिति जत्रादितिशीघ्रमित्यर्थ : सर्वेषमिति यत्नेन वर्णाश्रमादि निरपेक्षं मानुष्य मात्रं गृहीतव्यं ।। अतएव गुरुदैवत भक्ते रंतरं गत्वं तथा श्रुतिः यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।। तस्यै ते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशंते महात्मन इति ।।"

विषय—वेदान्त-दर्शन । 'अपरोक्षानुभूति' की 'ग्रन्थराज-प्रदीपिका' टीका-सहित ।

टि०— श्रीशंकराचार्य विरचित वेदान्त-दर्शन पर यह मूल ग्रन्थ टीका-सहित है । ग्रन्थ की टीका अच्छी है । मोटे अक्षरों में मूल ग्रन्थ है । मूल ग्रन्थ बीच में श्लोकबद्ध है । पतले अक्षरों में ग्रन्थ की टीका है ।

इस ग्रन्थ के टीकाकार श्रीविद्यारण्यजी हैं । ग्रन्थ और ग्रन्थकार के सम्बन्ध में टीकाकार के विचार इस प्रकार हैं —' पूर्णो य म परोक्षेण नित्यात्मज्ञानं का सि का अपरोक्षानुभूत्याख्यान ग्रन्थराज प्रदीपिका ।।१।। नमस्तस्मै भगवते शंकरचार्य रूपिणे ।। येन वेदांत विद्येयमुद्धता वेद सागरात् ।।२।। यद्ययं शंकरः साक्षाद्वेदांतानां भोजभास्करः नो निरस्त्तर्हि का कथं व्यासादि सूत्रितं ।।३।। अत्र

यत्संमतं किंचित्तद्गुरोरेव मे न हि ।। असंमतं तु यत्किंचि तःममैव गुरोर्नहि ।।४।।''
पोथी के अन्त में 'ज्ञानी-महिमा संग्रहश्लोक' नामक एक पृष्ठ का ६ पद्यों का ग्रन्थ है। टीकाकार ने इसकी भी टीका की है। इसमें तीर्थयात्रा आदि के विषय में लिखा गया है।

यह ग्रन्थ श्रीअवधदास साहबजी, महन्त, कबीरमठ, रोसड़ा (दरभंगा) की कृपा से पाया।

आथर्वणी पुरुष-सुबोधिनी— ग्रन्थकर्त्ता × । लिपिकर्त्ता—वैष्णव श्रीगोमतीदासजी। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज पर, सभी पृष्ठ अलग अलग हैं। पृष्ठ संख्या—१५। प्र० पृ० पं० लगभग—३०। आकार-प्रकार—१३" × ६"। भाषा संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल – ×। लिपिकाल—संवत् १८७९, कार्त्तिक, कृष्ण प्रतिपदा, गुरुवार ।।

प्रारम्भ—"ओं श्री राधाकृष्णाभ्यां नमः ओं अस्य श्री विष्णु पंरस्तोत्रमंत्रस्य श्री नारद ऋषिरनुष्टुम् छंद श्री विष्णु परमात्मा देवता अहं विजं सोहं शक्ति ओं ह्री कलकं मम सर्व देह रक्षणार्थे जपे विनियोगः नारद ऋषिये नभ शिरसि अनुष्टुप् छंदः से नम मुखे श्री विष्णुः परमात्मा देवताय नमः हृदये अह बीज गृह्ण सोहं शक्तिः पादयः ओ ह्री कीलक पादाग्रे ओं ह्रां ह्रीं ह्रं ह्रैं ह्रौं ह्र।''

अन्त— "अवर्णो मंडल पवंरूप शेषो न जानाति विष्णु न जानाति मरुतो न जानाति ब्रह्मा न जानाति रुद्रो न जानाति चन्द्रसूर्य्यो न जानाति इंद्रो न जानाति वरुणो न जानाति दशदिग्पालो गण गंधर्व मुनि किंकरोचेति ।। इत्याथर्वणी पुरुष सुबोधिन्यां तत्त्वबोधन्यां पंचदशो प्रपाठकः ।।१५।।

लिखित गौडदेशे हूलासी मध्ये श्री श्री ठाकुर नृसिंह जी समीपे श्री श्री महंत राधिका दासजी के स्थानमध्ये गङ्गा श्री वेतनातटे कार्तिक मासे कृस्नपक्षे तीथौ प्रतिपदाया गरुवासरे सन् १८ स उन्यासी ७९ लिखितं वैस्नव श्री गोमती दासजी पठनार्थ वैस्नव प्रेम दास ।।''

विषय—इस ग्रन्थ में श्रीकृष्ण के जीवन की चर्चा प्रतीत होती है। कृष्ण के जीवन की अनेक घटनाओं का वर्णन है। कृष्ण को लक्ष्य में रखकर स्तुति भी की गई है। इसमें कुछ तन्त्र से भी सम्बद्ध विषय प्रतीत होता है।

टि०—इस ग्रन्थ में ऐसे अक्षर लिखे गये हैं, जिन्हें पढ़ने में कठिनाई मालूम होती है। ग्रन्थ का विषय और नाम दोनों का तुलनात्मक अध्ययन अपेक्षित है। यह ग्रन्थ, कबीरमठ, रोसड़ा (दरभंगा) के महन्त से प्राप्त किया।

२०. गीतगोविन्द—ग्रन्थकार - जयदेव। लिपिकार—वैष्णव प्रेमदास। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ संख्या – १५। प्र० पृ० पं लगभग—२८। आकार-प्रकार—१२" × ६"। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—सं० १८७१, भाद्र कृष्ण-द्वादशी सोमवार।

प्रारम्भ-"ओं श्रीमते भावन्निम्वादित्याय नमः ।। मर्घैर्मेदुरमंवरं वनभुवः श्यामाग्तमालद्रुमैनक्तं भीरुरयंत्वमेव तदिमं राधे गृहं प्रापय । इत्थं नंदनिदेशतश्चलितयोः प्रत्यध्वकुंज द्रुमं राधा माधवयोर्जयंति यमुना कूलेरहः केलयः ।।१।। वाग्देवता चरित्र चित्रीत चित्र सदत्रा पद्मावती चरण चक्रवर्ती ।। श्री वासुदेव रति केलि कथा समेतमेतं करोति जयदेव कविः प्रबंधं ।।१।।

यदि हरिस्मरणे सरसं मनो यदि दिलास कलासु कतूहलं ।।
मधुर कोमल कांत पदावली ऋणु तदा जयदेव सरस्वतीं ।।३।।"

अन्त—"श्री भोजदेव प्रभवस्य रामादेविसुस्यास्य सदा कवित्वं ।।
पराशरादि प्रीयवर्ज कंठे सुप्रीत पीतांवरमेतदसु"।।

विषय—साहित्य । कृष्ण-विषयक काव्य ।

टि० - यह ग्रन्थ १२ सर्गों और २४ प्रबन्धों में समाप्त हुआ है । ग्रन्थ के अन्त में कवि ने अपना भी परिचय दिया है ।

यह ग्रन्थ श्री अवधदास साहब महन्त, कबीरमठ, रोसडा (दरभंगा) से प्राप्त किया है ।

२१. आत्मबोध - ग्रन्थकार—श्रीस्वामी शंकराचार्य । लिपिकार— × । अवस्था—अच्छी, हाथ का बना देशी कागज । पृष्ठ-संख्या १० । प्र० पृ० पं० लगभग—३५ । आकार — × । लिपि—नागरी । भाषा —संस्कृत । रचनाकाल—प्रसिद्ध लिपिकार— × ।

प्रारम्भ-(पतले अक्षरों में) "ओं श्री गणेशायनमः श्री गुरवेनमः शतमख, जितपादंशतपथमनसोगोचराकारं विकसितजलरुहनेत्रमुमाछायां कमाश्रये शंभुं ?

इह भगवान खलु शंकराचार्यः उत्तमाधिकारिणं वेदांतप्रस्थानत्रयं निर्मायदवलोकने समर्थानां मंदबुद्धिनां अनुग्रहार्थं सर्व वेदांत सिद्धांतसंग्रहं आत्मबोध्याख्यं प्रकरणं निर्द्दिदर्शयियुः तं प्रतिजानीते तपोभिरिति कृच्छ्रचांद्रायण नित्यनैतिक उपासना धनुष्ठानरूपैस्तपोभिः क्षीणानिपापानिरागद्यंतः करणदोषा येषां ते नित्यनैत्तिकैररेव कुर्वाणे दुरिताक्षायमाप्नोतीति वचनात् अतएव शांतानाम क्षोभिताशयानां वीत रागिणां इहायुत्रार्थ फलभोगरहितानांमुमुक्षूणांसंसारग्रंथि भेदनेक्रम प्रयत्नानां· यथोक्त साधन संपन्ननां अयमात्मबोधभिदीतयते विधिमुखेनावश्यकतया प्रतिपाद्यत इत्यर्थ : १

(मोटे अक्षरों में) ओं तपोभिः क्षीणपापानां वीतरागिनां मुमुक्षूणामपेक्ष्योय यात्मबोधोभिधीयते ।।१।।

बोधोहि साधनेभ्योहि साक्षात्मोक्षं क साधनं पाकस्य वह्ववत्ज्ञानं विनामोक्षो न सिध्यति ।।२।।

अविरोधितयाकर्म विद्यात्विनिवतयेत् विद्याविद्यांनिहंप्येवतेजस्तिमिरसंघवत् ।।३।।

(पतले अक्षरों में) ननु तपोमंत्र कर्मयोगाधने कसाधनेषु सत् सुमोक्ष प्रतिबोध एव किमितिप्राधान्येनोच्यत इत्यत आह ।। बोधो इति तपोमंत्र कर्मयोगादिसाधनानि पररंपश्याक्रमेण ज्ञान द्वारा मोक्षं साधयंति ज्ञानं तु स्वजन्म मात्रादेवा ज्ञानं निःशेष नाशयित्वामुमुक्षुं स्वराज्येऽभिषेचयति अतोन्यसाधनेभ्यो ज्ञानस्यप्राधान्म मुक्त

तदेव दृष्टांतेन दृढयति पाकस्येति यथालोके पाचन क्रियायाः काष्ठजलभांडादि साधनेषु सत्स्वपिवह्निविना पाको न सिध्यति तद्वत् ज्ञानं विना मोक्षो न सिध्यतीत्यर्थः ॥२॥"

अन्त— (पतले अक्षरोंमें) "पुनस्तद् ब्रह्म ज्ञानार्थं श्लोकत्रयेण पृथक् पृथक् निरूपयति यदिति यद्वस्तु भासा अर्कादिभिर्भास्यते ततद्भास्यैरर्कादिभिर्न भास्यते न तत्रसूर्योभाति न चंन्द्रतारकंनेमाविद्युतो यांति कुतो यामाग्निस्तमेवभात यनुभाति सर्वस्य भासा सर्वमिदं विभाति इति श्रुतेः येन सर्वमिदं भूतभौतिकं भावरूप जगद्भातितद्ब्रह्मेत्यत वधारयेत् जानीयात् ६१॥ तप्तापसः पिडवत् स्वयमेववांतर्वह्निर्त्यव्यभासयन्निखिल ब्रह्मा प्रकाशत इत्याह स्वयमिति स्वयमंतर्गत मतस्पष्टार्थः ६२ पुनस्तदेवाहजगद्विल क्षणमितिसर्वे ब्रह्मैव सत्यं तथापि जगद्रूपेणपश्यति तदा न गृह्यते इत्याह जगद्वैलक्षण्येन तत्कार्यत्वेन विचार्य्यतच्चज्ञातु शक्य ब्रह्मणोत्पन्न विद्यते यदिततोन्यत् दृश्यते यत्किचनतन्मृषैव मरुमरीचिका जलवदित्यर्थः ६३ पुनस्तदेव स्फुटं निरूपयति दृश्यत इति चक्षुपा दृश्यते श्रोत्रेण श्रूयते यन्मनसास्मर्यतयद्वाचा अभिधीयेतत्तत्त्व ज्ञानात्सर्वं ब्रह्मैव सच्चिदानदमद्वयं ब्रह्मणोऽन्यन्न किंचिदस्तीत्यर्थः ॥६४॥

(मोटे अक्षरों में)

अतएव स्थूलमह्लस्वमदीर्घमजमत्ययं अरूप गुणवर्णाख्यं तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत् ६० ॥
पद्मासाभास्यनेर्कादिर्भास्यैर्यन्नावभास्यते येन सर्वमिद भाति तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत् ६१ ॥
स्वयमतर्गतं व्याप्यभासयन्निखिलं जगत् ब्रह्म प्रकाशतेवह्निप्रतप्तायःपिडवत् ६२ ॥
जगद्विलक्षणं ब्रह्मब्रह्मणोन्यन्नकिंचन ब्रह्मान्यद्भातिचेन्मिथ्या यथा मरुमरीचिस ६३ ॥
दृश्यते श्रूयतेयद्यद्ब्रह्मणोन्यन्नकिचन तत्वज्ञ।नाच्चतद्ब्रह्म सच्चिदानन्दमद्वय ६४
सर्वगं सच्चिदात्मान ज्ञानचक्षुनिरीक्षते अज्ञान चक्षुर्नेक्षेत भास्वतं भानुमंधवत् ६५
स्मरणादिभिस्संदीप्तो ज्ञानाग्निपरितापित. जोवसर्वमलान्मुक्त. स्वर्णवित् द्योतयेत्स्यं ६६
हृदार्कशोधितोह्यात्या वोधमानस्तमोपहृत् । सर्वव्यापी सर्वधारी येन सर्वं प्रकाशते ६७
दिग्देश कालाधनपेक्ष्य सर्पंग शीतादिभिन्नित्य सुखनिरजनं
य. स्वात्मतीर्थं भजते विनिष्क्रिय. ससर्ववित्सवगतो मृतो भवेत् ४६

(पतले अक्षरों में) ननु यदि सर्वागतं ब्रह्मततत्सर्वेः किंन पश्यत इत्याशंक्य न क्षुरादिभिर्नगृह्यत इत्येनयाश्रुत्या प्रतिपादयति न चक्षुषा गृह्यते नापिवाचा नान्यैर्देवैस्तपस्या कर्मणा वा ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्वस्ततस्तुतं पश्यति निष्फलंध्याय मन इति सर्वगमिति यः सतज्ञानचक्षुः सर्वगतमपिसच्चिदानन्दं ब्रह्म पश्यति यस्त्वा ज्ञानचक्षुः सम् पश्यति यथा प्रकाशमानमपिमनु अंधो न पश्यति ज्ञानप्रसादेनचक्षुषा विशुद्धसत्वः निवृत्ताविद्यः सदा सर्वत्र ब्रह्मैव पश्यति न चक्षुषा पश्यति कश्चिदेनं हृदा मनीषामनसाभि क्लृप्तो मृतास्ते भवंतीति श्रुत्यापि तस्य प्रमाणतरविषयत्वमवधार्यतेत्यर्थः ६५ एवमुक्तरीत्यानुभवसंपन्नस्यापितदामासरहितस्य वासना वशात् किंचिदज्ञानं संभवति तत्परिहारार्थं पुनः स्मरणादि कुर्यादित्याह स्मरणादिति जीव प्रत्यगात्मा एतत्प्रकरणार्थ स्मरणादिभिर्मननादिभिरुच्चैर्दीप्तः प्रकाशितः ज्ञानमेवाग्निस्तेन परितापितो भाति शोभते इत्यर्थः सर्वसंसा मूल-

भूता ज्ञानमलान्युक्तः स्वयमेव सम्यक् प्रकाशते यथाग्निपारितापितः स्वर्ण-
औपाधिकं उर्वनादिकं हित्वा स्वरुपेणा प्रकाशते तद्वदित्यर्थः ६६ ।। एवं संशोधितो
जीव परमात्मा हृदयाकाशेनुदितः सन् तप अज्ञानमुपसंहरन् भानुवत्पूवस्वेरूपः
प्रकाशत इत्याह हृदिति बोधएवमनुः सर्वस्याधारभूतत्वात्सर्वव्यापि सर्वधारी
च शेषं स्पृष्टं ६७ न ग्वात्मनोज्ञान प्रतिबंधक दुरितपरिहारार्थं प्रयागादि तीर्थं
यस्नोद्योगः कर्तव्य इत्याशंक्या आत्मतीर्थस्नातस्य न किंचित्कर्तव्यमित्याह
दिग्वेदेशेति यो विनिक्रियः परमहंसः स्वात्मतीर्थं भजते सर्वविरसर्वज्ञः सर्वत्र
परमात्मस्वरूपत्वात् अमृतोयुक्तो भवेत् कथंभूतं स्वात्मतीर्थं दिग्देशकाल द्यन
पेक्ष्यमेव सर्वगंशीतादि द्वंद्वदुःखानिहस्तीतिशीतादिहन्निप्यसुखं मोक्षानंदप्रायकत्वात्
इतस्तोर्थेषु तद्विपरीतं द्रष्टवं तस्मादात्मतीथे स्नातस्य न किंचिदवशिष्यत
इतिभावः ६९

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य गोविंदभगवत्पूजपादशिष्य श्रीमच्छंकराचार्य्य
विरचितात्मबोध संपूरनम् ।

विषय दर्शन ।

टि०--१.यह ग्रन्थ अनुसन्धेय है । श्री शंकराचार्य के 'आत्मबोध' की बड़ी ही विशद व्याख्या
इस टीका में की गई है । टीकाकार ने अपने सम्बन्ध में कुछ भी नहीं लिखा है ।
मूल ग्रन्थ मोटे अक्षरों में, बीच में है । व्याख्या पतले अक्षरों में है । लिपिकार
के नाम का भी ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में निदेश नहीं है । लिपिकार कोई कबीर-
पन्थी साधु प्रतीत होते हैं, यह पोथी के प्रारम्भ में 'गुरुवेनमः' से स्पष्ट होता है ।

२.पोथी की समाप्ति के बाद ३ पृष्ठ का 'तत्त्वबोध' नामक लघुकाय मूल ग्रन्थ है ।
यह भी श्रीशंकराचार्यजी का ही है । इसमें मोक्ष-प्राप्ति के साधन का समुल्लेख है ।
ग्रन्थ ध्येय है । अन्त में 'इति श्री तत्त्वसार संदीपनक्रमचिंतनम्' लिखा है ।

३.लिपि की शैली प्राचीन और अस्पष्ट है ।

यह ग्रन्थ कबीरमठ, तेघड़ा (मुँगेर) से प्राप्त किया ।

२२. श्रीमद्भगवद्भक्तिरत्नावली—ग्रन्थकार—परमहंस विष्णुपुरी । लिपिकार—वैष्णव
श्रीप्रेमदास । अवस्था अच्छी, प्राचीन, देशी कागज । पृष्ठ-संख्या–१९ । प्र०पृ ०प०
लगभग–३० । आकार—× । लिपि—नागरी । रचनाकाल फाल्गुन शुक्ल, २
द्वितीया १३५५ शक सं०, मंगलवार । लिपिकाल · चैत्र, शुक्ल ९ नवमी, शु सं०
१८९८, शनिवार ।

प्रारम्भ–''ॐ श्रीमते भगवन्म्वादित्यायनमः ।। ॐ ऊपक्रामंतु भूतानि पिशाचा सर्वतो दिश ।
सर्वेषामविरोधेनब्रह्मकर्मसमारभेत । अपसर्प्पंतुये भूता ।। जे भूताभूमिसंस्थिता
विघ्नकर्तारस्ते नश्यंतु शिवाज्ञया ।।

ॐ अपवित्रं पवित्रो वा सर्वास्थांगतोपिवा ।। यः स्मरेत् पुंडरिकाक्षं सवाह्याध्यांतर
शुचिः ।।

ॐ पुंडरीकाक्षाय नमः ॐ ॐकारस्य ब्रह्मा ऋषिः परमात्मा देवता गायत्री छदः ।
अभिषेके विनियोगः ।।

ॐ भूर्णदिमहाव्याहृतीनां प्रजापति ऋषिः ।। अग्निर्वायु सूर्यो देवता ।। गायत्री त्रयष्टुपछंदासि ।।

अथाभिषेक मंत्र ।। ॐ विष्णु विष्णु वाक् वाक् ।। प्राण प्राण ।। चक्षु चक्षु ।।
श्रोत्रं श्रोत्रं ।। नाभी हृदये । कन्ठ ।। शिर ।। शिखा । बाहुभ्यां ।। यशोवलं ।।
इति महाकाव्य ।।

ॐ आत्मा उपपातकदुरितक्षयार्थं ।। ब्रह्मा प्राप्त्यै प्रातसंध्योपासनमहं करिष्ये तत्सवितुरिति प्रजापति ऋषि सविता देवता गायत्री छंद ।। अभिषेके विनियोगः
ॐ पुनातु । ॐ भूः पुनातु ।। ॐ भुव : पुनातु ।।
ॐ स्वः पुनातु ।। ॐ मह पुनातु । ॐ तपः पुनातु ।। ॐ सत्यं पुनातु ।। ॐभूर्भुवः स्व पुनातु ।।
ॐ तत्सवितुर्विरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योन प्रचोदयात् ।।
ॐ सर्व पुनातु ।। तत्र उदकं ग्रहित्वा ।। ॐ भूर्भुवः स्व रितिभुवः प्रक्षिपेत् ।।''

अन्त—''एकादशे उद्धववाक्यं भगवत प्रति ।। तापत्रयेणाभिहितस्य घोरे संतप्यमानस्यभवा विधनीश ।।
पश्यामि नान्यक्षरणं तवांघ्रिद्वद्वातपमृताभिवर्षनात ।।९।।
दशमे मुचुकुंदवाक्यं भगवतं प्रति ।। चिरमिह वृजिनर्तिस्यप्यमानोनुतापैरवितृस्य षड्मित्रोलधवशांतिः कथचित ।।
शरणदशमुपेतस्त्वत्पदाबज परात्मन्न भयभृतमशोद्वं पहिमापन्नमीश ।।१०।।''

विषय—श्रीमद्भागवत का संक्षेप ।।

टि०—१. ग्रन्थकार श्रीविष्णुपुरीजी ने ग्रन्थ की समाप्ति पर निम्नस्थ शब्दों में अपना अभिप्राय प्रकट किया है —
''विष्णुपुरी वाक्यं ।। एवं श्री श्रीरमण भवतायत्समुत्तं जितोहं चांचलयेवा सकलविषये सारनिर्द्धारणे वा ।।
आत्माप्रजाविभव सदृशैस्तत्र यत्तौर्यमेतैः ।। साक भक्तै रगति सुगतेतुष्टि मे हित्वमेव ।।११।।
साधूनां स्वत एव संमतिरिह स्यादेव भक्त्यार्थिना मालोच्य ग्रन्थनश्रमंच च विदूषामस्मिन्यवेदातुरः ।।
ये केचित्परकृत्युपश्रुतिपरास्तानर्थं येमत्कृतिं मुयोषिक्ष्यवदंत्ववद्य मिहचेत्सावासनास्यास्यति ।।१२।।
एष स्यामहमल्प बुद्धि विभावोव्ये कोपिकोपिध्रुवम् मध्ये भक्तजनस्य मत्कृतिरियं नस्यादवज्ञास्पदं ।।
किं विद्यासरधः किमुज्वलकुला किं पौरुषा किं गुणाः ।। स्तत किं सुन्दर मादरेण ससिकैर्नापीयतेतन्मधुः ।।१३।।
इत्येषा बहुयत्नतः कृतवता श्री भक्ति रत्नावली तत्प्रीत्यैवतर्थैवसं प्रकठितातत्कांति मालामया. ।।

यत्र श्रीधरसंत मौक्ति लिखते नूनाधिकं यत् भूतं तत् क्षंतु स्वधियोइंथ स्वरचना, लध्वस्यमे चापलं ।।१४।।"

२. ग्रन्थकार ने ग्रन्थ-रचनाकाल और स्थान के सम्बन्ध में –"महायज्ञशर प्राणशशांके गुणते शके फाल्गु शोपक्षस्य द्वितीयायां सुमंगले ।।१५।। वाराणस्यामहेशस्यसन्निधौहरिमदिरे भक्ति रत्नावली सिद्वा संहिता कांति मालया ।।१६।। इति श्रीमत्पुरुषोत्तमचरणारविंद कृपांमकरदविंदु: प्रोन्मीलितविवेकतैर मुक्त परमहसविष्णुपुरी ग्रीथीतायां श्री भागवतामृताधिलध्व श्री मद्भगवद्भक्तिरत्ना- वल्यां भगवतशरण नाम त्रयोदशा विरचण ।।१३।। संपूर्न । शुभमस्तु मंगलं ।।" लिखा है। इससे प्रतीत होता है कि ग्रन्थकार बनारस के निवासी थे।

३. ग्रन्थ की भाषा यत्र-तत्र ठीक नहीं है। व्याकरण की अशुद्धियाँ तो हैं ही, साहित्यगत दोष भी हैं। यह ग्रन्थ श्रीमद्भागवत के आधार पर लिखा गया है, जैसा कि ग्रन्थकार ने स्वयं स्वीकार भी किया है। नारद, शुकदेव, ब्रह्मा, नारायण, व्यास, शुकदेव आदि के परस्पर वार्त्तालाप, प्रश्नोत्तर आदि के रूप में दार्शनिक चर्चाएँ हैं। ग्रन्थ अनुसन्धेय है।

४. लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है। प्रतीत होता है, ग्रन्थ में विशेष अशुद्धियाँ लिपिकार के प्रमादवश हैं। ग्रन्थ को समाप्त करते हुए लिपिकार ने लिखा है—"लिखितं वैंष्णव श्री प्रेमदास ।। शेई पठितं ।। शन्संमत अठारस ।।१८।। अठासठ ।६८। चैत्रमासे शुक्ल पक्षे रामनवम्यां शनीवासरे ।। श्रीमते भगवन्तिम्वाकार्य नमोनम. श्री राधाकृष्णाभ्यां नम ।।"

५. यह ग्रन्थ श्रीकबीरमठ, तेघड़ा (मुँगेर) के साधुजी के सौजन्य से प्राप्त किया।।

२३. व्याकरण और छन्द—ग्रन्थकार — ×। अवस्था–अच्छी, देशी कागज। पृष्ठ-संख्या १०: प्र० पृ० पं० लगभग -२५। लिपि—नागरी। रचनाकाल— ×। लिपिकाल - ×।

प्रारम्भ—"श्रीमते रामानुजाय नम: वंदे ब्रह्मा शिवं वंदे वदेवौ सरस्वती लक्ष्मी वंदे हरिवादे वन्दे सिद्धार्थ देवतां।
सूत्रसप्तसतंयस्मै ददौ साक्षात्सरस्वती अनुभूतिस्वरूपाय तस्मै श्री गुरवेनम. २
अल्पाक्षर मसंदिग्धं सारवद्विश्वतोमुखं अस्तोभ्यमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदी विदु: ३
संज्ञा च परिभाषा च विधिर्नियम एव च प्रतिषेधो विकारश्च षड्क्षिघं सूत्र लवणं ४
अतिदेशोनुवादश्च विभाषाच निपातन एतच्चतुष्टयं शिक्षा दशधा कैश्चिदुच्यते ५'

अन्त—"आर्योतरार्द्धं तुल्यं प्रथमार्द्धमपि प्रयुक्तंचेत् कामिनि ताम्रुपगीतिं प्रकाशयते महाकवय ५ हे अमृतवाणि अमृद्वाणी यस्या सा अमृतवाणी तस्या संबोधने हे अमृतवाणि तदानीं तस्मिन्काले छंदोविद: छंदशास्त्र
वेत्तर: तांगीतिं भाषते तदानी कदा यत्र यस्मिन्काले आर्यापूर्वार्द्धं समपूर्वंच तद्धंच पूर्वार्द्धं आर्यायां

पूर्वार्द्ध त्रिशत्मात्रकं SSSSIISISIIIIISIISIIS तेन सम तुल्यं द्वितीयमपि नुत्तरार्द्ध- यपिचेत्त प्रयुक्तं भवति

SSISSSSSIIISISSS ४

हे कामिनी कामोस्या अस्यां वास्तीति कामिनी तत्संबोधने हे कामिनि महाकवस्ता- मुपगीतिं प्रकाशयंते कथयंति तांकां यत्र चेत् यदि अर्यातरार्द्धतुल्यं आर्यायाः यदुत्त- रार्द्धं सप्तविंशत्मात्रकं SIISIISSISISSSISIIS तेनतुल्यं प्रथमामपि प्रयुक्त भवति SSISISSIISIISISSS ५ ।''

विषय—१. इस ग्रन्थ में श्रीअनुभूतिस्वरूपाचार्य-विरचित 'सारस्वतव्याकरण' के सूत्रों की अपूर्ण सूची और अपूर्ण छन्द-संग्रह है। दोनों ग्रन्थों के अपूर्ण होने के कारण ग्रन्थ और लिपिकार के नाम नहीं हैं। छन्दोग्रन्थ सटीक है।

२. पोथी के अन्त में १६वें पृष्ठ पर 'गवाक्' शब्द के रूपों का विवरण दिया हुआ है, जो ग्रन्थ से ही सम्बद्ध है। संक्षिप्त धातुपाठ भी है।

३. ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट नहीं है और प्राचीन है। ग्रन्थ सोनपुर के कबीरमठ से प्राप्त हुआ है।

२४. राजेन्द्रस्तोत्रम्—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था – अच्छी, प्राचीन देशी कागज। पृष्ठ-सं० ६। प्र० पृ० पं० लगभग—२६। लिपि—नागरी। रचना- काल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—''श्रीमते रामानुजायनमः ।। माया ह्री देव देवस्य विष्णोरमिततेजसः ।। श्रुत्वा संभूतयः सर्वा गदतस्तव सुव्रत ।।१।।

यदि प्रसन्ना भगवान मनु ग्राह्योस्मि वा यदि ।। तदहं श्रोतुमिच्छामिनृणां दुःस्वप्न- नाशनं ।।१।।

स्वप्ना हि सु महाभाग दृश्यंते ये शुभाशुभं ।। फलानि तत्प्रयच्छंति तद्‌गुणान्येव भार्गवः ।।३।।

तादृक् पुण्यं पवित्रं च नृणामतिशुभप्रदं । दुस्वप्नोश्च शमं याति तन्मे बिस्तरतो वद ।।४।।

शौनक उवाच ।। इदमेव महाभाग पृष्ठवांस्ते पितामह ।। भीष्मं धर्मभृतां श्रेष्ठं धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ।।५।।

युधिष्ठिर उवाच ।। जितं ते पुडरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।। नमस्तेस्तु हृषीकेश महापुरुष पुवजः ।।६।।

आद्यं पुरुषमीशानं पुरुहुतं पुरातनं ।। ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म व्यक्ताव्यक्तं सनातन ।।७।।''

अन्त—''य इदं शृणुयान्नित्यं प्रातरुथाय मानवः ।। प्राप्नुयात्परमं सिद्धिं दुःस्वप्नं तस्य नश्यति ।।४०।।

गजेन्द्रमोक्षणं पुण्यं सर्वपापप्रणाशनं ।। श्रावयेत्प्रातरुत्थाय दीर्घमायुरवाप्नुयात् ।।४१।।

श्रुतेन हि कुरुश्रेष्ठ स्मृतेन कथितेन च ।। गजेन्द्र मोक्षणंचैव सद्यः पापात्प्रमुच्यते ।।४२।।

मया ते कथितं राजन् पवित्रं पापनाशनं ।। कीर्त्यश्च महाबाहो गजेंद्रस्य महात्मनः ।।४३।।
चरितं पुण्य कर्माणि पुष्करें वद्धते यश ।। प्रीतिमा....''

विषय—भक्ति (स्तोत्र)-साहित्य ।

टिप्पणी—१. यह पुस्तिका महाभारत का ही एक अंश प्रतीत होती है । इसके प्रारम्भ या अन्त में ग्रन्थकार, लिपिकार और समय आदि का निर्देश नहीं है ।

२. ग्रन्थ की लिपि प्राचीन और अस्पष्ट है । ग्रन्थ सोनपुर के कबीरमठ के महन्तजी की कृपा से प्राप्त हुआ है ।

२५. **भागवत-तत्त्वसार-सन्दीपन**—ग्रन्थकार—× । लिपिकार—× । अवस्था—प्राचीन हाथ का बना देशी कागज । पृष्ठ सं० ६६ । प्र० पृ०पं० लगभग—२६ । भाषा संस्कृत । लिपि--नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल--× ।

प्रारम्भ—"हे मुने पुरातीतभवेपूर्वस्मिनुयन्मनि अहंवेदवादिनां कस्याश्चन दास्याः पुत्र इतिशेषः पुत्रोभवं सोहं प्राढृषिवर्षाकाले निर्विवीक्षतां योगिनां भगवत्पादारविंदशरणं योगंयेषामस्तोतियोगिनः तेषांप्रपत्तियोगिनां शुश्रूषणे स्वामिनी निस्नपित बालक एवतैद्विजैरनुमोदितः तेषांशरणा-गतयोगिनां उच्छिष्टलेपाभंसक्तस्नं भुंजेस्यत्तस्मात् अपातकिल्विषः अस्मिन्कल्पेब्रह्मपुत्रोस्मीत्यर्थः श्री नारद.अहंपूर्वजन्मनिप्रपन्न प्रसाद... ।"

अन्त—"मार्कंडेयः सीसाक्षात्कार भगवतंवरदं वरमप्रार्थ्यपरमपद मस्ययाचितो भूत्वातत्पादारविंदशरणं गत्वाप्रपत्ति रेवपरमपदं ददातीति प्रपत्यनुसंधान मेवचकारतस्मात् प्रपन्नानां भगवंतपरम्पदं तथाचितव्यंप्रपतिरेवपरमपदं ददातीतिप्रपत्यनुसंधानमेवकर्तव्यं अस्मिन् प्रबंधे यत्र यत्र देवादयः ऋषयः राजानः भगवतं शरणंवदते तत्रतत्रते द्वयमंत्रोच्चारणंजग्युरिति वेदितव्यं तैरुचारणंजग्युरितिवेदिव्यं तेरुच्चारण मंत्रं सी वेदव्यासः रहस्यमंत्रस्य प्राकृतनोचितमितिशरणं पपावितिश्लोकरूपेण कृतवान् तर्हिचेत् प्रह्लादादयः विभीषणादयः दुर्वासादयः मार्कंडेयनारदादि....।"

विषय—भक्ति-काव्य ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ श्रीमद्भागवत महापुराण की टीका है । ग्रन्थ के खण्डित होने के कारण (प्रारम्भ और अन्त के पृष्ठ फटे होने से) ग्रन्थकार, लिपिकार तथा रचनाकाल, टीकाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चल पाता है। टीका की भाषा और शैली प्राचीन एवं अपरिष्कृत है । ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट और साफ है । किन्तु, अक्षरों से लिपि की प्राचीनता स्पष्ट प्रकट होती है । यद्यपि काल-निर्देश का अभाव है, तथापि पोथी लगभग एक सौ वर्ष की प्राचीन प्रतीत होती है । यह पोथी श्रीअवधेन्द्रदेव नारायण, दहियावाँ, छपरा से प्राप्त हुई है ।

२६. रीतिशास्त्र और स्तोत्र—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं० ३७। प्र० पृ० पं० लगभग—३२। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्रीगणपतिर्जयति ।। यत्सत्यंत्रिपुलोकेष्विति ।। यत्सत्यंसागराणामिति ।। यत्सत्यं कृष्णधेनूनामिति। ऊँ नमो भगवति कूष्मांडिनीति ।। **महादेवं** नमस्कृत्येति ।। एवमनेन मंत्र पीठोस्ति तस्याक्षरस्यसप्तवारंजपेत् ।। ततः शुद्धमानसः सप्तवारत्रयंमक्षं निपातयेत् ।। तत शुभशुभंब्रूयान्नात्रकार्या विचारणा। तस्यपुत्रं निपतति यः श्रद्धासमन्वितो भक्तियुक्तो भवति तथाहि ।।१११।।

पदं पदं पदंचैव पतितः शोभनस्तदा ।। शुभं तु दृश्यते तत्र सर्वारंभेषु चिंतितं ।। संचार्थलाभोवा व्यवहारे समागमे ।। शोभनंचैव वक्तव्यं होराज्ञादस्यचिंतकैः ।।११२।। पदं पदं द्विकं चैव ।।"

अन्त—"मुखेन चंद्रकांतेनमहानीलैः शिरोरुहैः ।।
पादाभ्यांपद्मणभ्यांरेजेरत्नमयीवसा ।।१५।।
तद्वक्त्रं यदिमुद्रिताशशिकथातच्चेत् स्मितंका सुधा
तच्चक्षुर्यदिहारितं कुवलयैस्ताश्चेद्गिरोदिङ्मधु ।।
धिक्तं दर्पधनुर्भ्रुवौयदिचतेकिंवाबहुब्रूमहे ।।
यत्सत्यंपुनरुक्तवस्त्रविमुखः सर्गक्रमोवेधसः ।।११६।।
सौरभ्यंमृगलांछनेयदिभवेदिंदीवरेवक्त्रं ।। ता
माधुर्यंयदिविद्रुमेतरलताकंदर्पचापोयदि ।।
रंभायां यदिविप्रतीपगमनंप्रासोपमानंतदा ।
तद्वक्त्रंतदीक्षणंतदधरस्तद्भ्रूस्तदुरूयुगं ।।१७।।
यतोयतोंगादपयातिकंचुकस्ततस्ततः स्वर्णमरीचिवीचयः ।।
यतो यतोस्यानिपतंति दृष्टयः स्ततस्तः स्यामसरोजवृष्टयः ।।१८।।
अकृशंनितंब भागेक्षामं मध्येसमुन्नतं कुचयोः ।।
अत्यायतंनयनयोर्मम जीवितमेतदायाति ।।१६।।
आव्याजसुंदरीतां विज्ञानेनाद्भुतेन योजयता ।।
उपकल्पिता विधात्रा बाणः कामस्य विषदग्धा ।।२०।।
वेणी षिडंबय मत्तमधुव्रतालीमंगीकरोति गुणमैंदवमास्यमस्याः ।।
बाहू मृणाललतिकाश्रियमाश्रयेतेपुंखानुपुंखयति कामशरात्कटाक्षः ।।२१।।
तदातदंगम्यबिभर्तिबिभ्रमंविलेपनामोदमुचः स्फुरद्भुवः ।।
दरस्फुरत्कांचनकेतकीदलासुवर्णमभ्येतिसौरभयति ।।२१
भ्रूपल्लवंधनुर ....।"

विषय—काव्य।

टिप्पणी—१. यह ग्रन्थ संस्कृत-साहित्य के नायिका-भेद से सम्बद्ध प्रतीत होता है। खण्डित तथा अन्त के पृष्ठ के नहीं होने के कारण ग्रन्थकार और लिपिकार के नाम आदि का पता नहीं चलता है। ग्रन्थ के बीच में भी कहीं ग्रन्थकार ने अपने विषय में उल्लेख नहीं किया है।

२. ग्रन्थ सुपठ्य है। इसमें नारी के विभिन्न अंगों का बड़ा ही सुन्दर और साहित्यिक वर्णन किया गया है। जैसे पृ० ३३ में—

"अथरोमावली।
गंभीरनाभिद्रुमसंनिधाने रराज नीला नवरोमराजी ॥
मुखेंदुभीतस्तनचक्रवाकद्वंद्वोज्झिताशैवलमंजरीव ॥१६॥
लावण्यामृतसंपूर्णनाभिकूपात्प्रवर्तिता।
रेजे कुल्येव रोमाली सेक्तुं यौवनकाननं ॥७॥
अथनाभिः ॥
मन्ये समाप्त लावण्य रसगर्भेमृगीदृशां ॥
अपूरयन्वेगवतो नाभिरंध्रंचतुर्मुखेः ॥७॥
कुचकुंभौ समालंव्य तरंती कांतिकां निम्नगां ॥
प्रमादतस्ततोभ्रष्टाद्दष्टिर्नाभौ निमज्जति ॥६॥"

एक स्थान पर और भी देखिए कि कवि ने कैसा वर्णन किया है—

"अथ स्त्रीसेवाप्रकारः ॥
सेवनं योषितां कुर्याद्बुधोबुद्ध्या यथाक्रमं ।
बालरूढ़ातियोग्यानामृतरागविभावनात् ॥१॥
बालेतिगीयतेनाम यावद्वर्षाणिषोडश ॥
तस्मात्परंचतरुणीयावतस्त्रिशतिर्भवेत् ॥२॥
तदूर्ध्वमतिरूढास्याद्यावत्पंचाशतं भवेत् ।
वृद्धा तत्परतो ज्ञेया सुरतोत्सववंचिता ॥३॥
निदाघशरदोर्बालापथ्यांपर्यंकणो भवेत् ॥
हेमंते शिशिरे योग्या प्रौढा वर्षावसंतयोः ॥४॥
नित्यं वा सेव्यमानापि बालावर्धयतेबलं ॥
क्षयं नयति योग्या स्त्री प्रौढा जनयते जरां ॥५॥"

पूरे ग्रन्थ में नारी-सम्बद्ध कामशास्त्र की चर्चा की गई है। प्रतीत होता है, यह रतिशास्त्रविषयक कोई रचना है। इसमें रघुवंश कुमारसम्भव, शिशुपालवध आदि के भी श्लोक उद्धृत हैं।

३. ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, किन्तु प्राचीन है। यह ग्रन्थ प्रो० श्रीभागवत प्रसादजी, एम्० कॉम०, गया कॉलेज, गया से प्राप्त हुआ।

२७. महाभारत और भागवत के मिश्रित खण्ड—ग्रन्थकार—× । लिपिकार-- × । अवस्था– प्राचीन, देशी कागज । पृष्ठ-सं० ८५ । पृ० पृ० पं० लगभग –३२ । भाषा—संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"शुको यदाह भमवन्विष्णुरातापाश्रृण्वेत
सौणोणामोसिमासिना नावसति सप्तकः ।।२७।।
तेषां नामानि कर्माणि संयुक्तानामधीश्वरैः ।।
ब्रूहिनः श्रद्धधानानां ब्रूह्यसूर्यात्मनो हरेः ।।२८।।
सूत उवाच ।। अनाद्य विद्यया विष्णोरात्मनः सर्वदेहिनां ।।
निर्मितो लोकेपु परिवर्तते ।।२६।।
एक एवहि लोकानां सूर्य्य आत्माहिकृद्धरिः ।।
सर्ववेदक्रियामूलमृषिभिर्बहुधोदितः ।।३०।।
कालो देशः क्रिया कर्ता कारण कार्यस्यागमः ।।
द्रव्यं फलमिति व्रह्म तवधोक्तो जुपा हरिः ।।३१।।"

अन्त—"तावार्य्यमाणाः पतिभिः पितृभिर्भ्रातृबंधुभिः ।।
गोविंदापहृतात्मानो न न्यवर्त्तंत मोहिताः ।।
अंतर्गृहगताः काश्चिद्गोप्योलब्धविनिर्गमाः ।।
कृष्णं तद्भावनायुक्तादध्युर्मीलितलोचना ।।६।।
दुःसहश्रेष्ठविरहतोव्रतापधुनाशुभाः ।।
ध्यानप्राप्ताच्युताश्लेष निवृत्यात्माणमंगलाः ।।१०।।
तमेव परमात्मानंजारबुद्ध्यापिसंगताः ।।
जहुर्गुणमयं देहं सद्यः प्राक्षोण बंधना ।।११।।
राजोवाच ।। कृष्णं विदुः परं कातं नतु ब्रह्मतया मुने ।।
गुणप्रवाहो परमस्तासां गुणधियां कथं ।।
श्री शुक उवाच ।। उक्तं पुस्तादेतत्ते चद्यः सिद्धि यथागतः ।।
द्विषन्नपि हृषीकेशं किमुताप्लोक्षजप्रियाः ।।१३।।
नृणांनिःश्रेयसार्थाय व्यक्तिर्भगवतो नृप ।।
अत्ययस्याप्रमेयस्य निर्गुणस्य गुणात्मनः ।।१६।।"

विषय—भक्ति-काव्य ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ में अनेक छोटे-छोटे उपग्रन्थों का संग्रह है । उपग्रन्थों के प्रारम्भ और अन्त के अंश खण्डित होने के कारण उनके नामों का पता नहीं चलता । इसी प्रकार ग्रन्थकार और लिपिकार के नाम का भी संकेत नहीं मिलता है ।

पूरे ग्रन्थ में निम्नांकित उपग्रन्थ हैं (इनके पृष्ठ भी अलग-अलग हैं, किन्तु नये क्रम से पृष्ठ दे दिये गये हैं।)—

(इसमें लिखा है—सन्संमत् १८७१ ॥ शुभमस्तु ॥)

इस ग्रन्थ की जिल्द में पृष्ठ इधर-उधर हो गये हैं। ग्रन्थ—सं० ३७ के अन्त में निर्दिष्ट संवत् लिपिकाल का है। लिपि स्पष्ट, किन्तु प्राचीन है। लिपिकाल १६वीं शताब्दी है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है।

यह ग्रन्थ श्रीकेदारनाथजी चौरसिया (गया) के सौजन्य से प्राप्त किया। ग्रन्थ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संग्रह में सुरक्षित है।

२८. **रत्नमालिका**—ग्रन्थकार –श्री कंदाल भावनाचार्य्य। लिपिकार— × । अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० ६४। प्र० पृ० पंक्ति लगभग—२८। भाषा संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल – मार्गशीर्ष, कृष्ण-सप्तमी, सं० १८०७ वि०।

प्रारम्भ—"यत्पादारविंदानंदवांछया श्री ललनापित्तपः आचारतेतत्पादारविंद अस्य लभतेअस्य भाग्यविशेषं न विद्महेत्यर्थः एवं प्रकारेण नागपत्नीषु शरणंगतासुसर्तापु भगवान् श्री कृष्णः एककालीयः शरणागतोन भवति तथापि शरणागतानां स्त्रियां याचितं विफलं चेतमशरणागतरक्षण कृत्तस्य अंतराय इति श्रीपशुर्मनुष्यः पक्षीवा येच वैष्णव संश्रयः तेनैवते प्रयास्यंतितद्विस्नोः परमपदमिति ६१ शास्त्रार्थ विरोधं नवतीतिदिव्हचित्ते निधाय भागवता पराधिनमपिनागराजंररक्ष अनेन स्त्री शरणंगच्छति चेत्ततत्पति पुत्रमित्रभृत्यसेवकादयः भगवतारक्षणं प्राप्ताः पतिश्च भार्यायाः रक्षितः भर्तारि विभ्रतिमार्या इत्युक्तेन शरणागत्पापश्चिर क्षणं प्राप्नोति पुरुषः शरणं गच्छतिचेत् पुत्रमित्रकलत्रसेवकपश्वादयः भगवतः रक्षणं प्राप्य परमपदं आप्नुरिति सूचितं।"

अन्त—"गृहस्थसंन्यासलक्षणंच रहस्यत्रयार्थंचज्ञान भक्तिवैराग्याणिच श्री वैष्णवपादरजो वैभवंच श्री पादतीर्थवैभवंचश्रीवैष्णवाचारांश्च प्रपन्नाचारांश्च एकांतिनामाचारांश्च परमैकांतिनामायारांश्च अन्याश्रमस्य रूपंच अवधूताश्रमस्वरूपंच विशदीकृतं शोधनेकृतेसति प्रकाशयति श्रीमद्रामानुजमुनिचरणारविंदध्यानाल्लब्धज्ञानिनः श्रीकंदाल भावनाचार्याभिधानोऽहं एतां शरणागतरत्नमालिकां श्रीमहाभागवत पुराणे आलोड्य श्रीवेदव्यासमुनिना यथा कृष्णं तदैव कृतवानस्मि एषा शरणागतरत्नमालिका श्रीवैस्नवानां प्रपन्नानां अनुदिनमनुसंधेया अस्या अनुसंधानमात्रेण अस्तु इत्युक्तपरमार्थिकशरणागतनिष्ठां.....भूत्वा भगवतः दिव्यश्रीपादारविदानंदंलब्ध्वा देहांते परमपदं प्राप्नोति . ....२ श्रीनिवासांघ्रिसद्भक्तं श्रीरंगगुरुमाश्रये १ श्री रामानुजाचार्य दिव्याज्ञा प्रतिवासरमुज्झतां दिगंतव्यापिनी भूयात्साहिलोकहितैषिणी २ कावेरीवर्द्धतांकालेदर्षंतु वासव. श्रीरंगनाथोजयतु श्रीरंग श्रीश्चवर्द्धतां ३ श्रीमन् श्रीरंग श्रीयमनुपद्‌ वामनुदिनंसंबद्धयें अज्ञ' सर्वज्ञहेरनिसक्तिसर्वशक्तिन्कारुणिकः ४ सापराधंत्वत्परतंत्रं स्वतंत्रं परिपाहि श्रीशैलपूर्णार्णवदुग्धसिंधु सुधाकराय ५ सुधाकरात्माजयत्येपनारायण देशिकार्य्यः वदेत्यदावेंकट देशिकेंइं श्रीमद्वादिभयंकरगुरवेनमः ६ श्रीमतेरामानुजायनमः ।"

विषय—भक्ति-काव्य । वैष्णवमत-सम्बन्धी सैद्धान्तिक विवेचन ।

टिप्पणी—१. यह ग्रन्थ किसी वैष्णव मत के सिद्धान्त-सम्बन्धी ग्रन्थ की टीका है । इसमें यत्र-तत्र अन्य दार्शनिक तथा श्रीमद्भागवत-सम्बन्धी प्रमाण दिये गये हैं । ग्रन्थ अनुसन्धेय है ।

२. ग्रन्थ में ग्रन्थकार का नाम नहीं है, किन्तु अन्त के 'श्रीकंदालभावनाचार्य्याभिधानोऽहं एतां' आदि वाक्य से प्रतीत होता है कि कोई कन्दालभावनाचार्य्य नामक वैष्णव ने भागवतपुराण के आधार पर लिखित ग्रन्थ की 'रत्नमालिका' नाम की टीका की है । टीका की शैली प्राचीन तथा असम्बद्ध है ।

३. ग्रन्थ के लिपिकार ने अपने नाम का उल्लेख नहीं किया है । ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट तथा प्राचीन है । लिपि शैली मध्यकालीन मालूम होती है । यह ग्रन्थ श्रीअवधेन्द्रदेव नारायण, दहियावाँ (छपरा) के सौजन्य से प्राप्त हुआ ।

२६. नैषधचरित टीका—ग्रन्थकार—श्रीहर्षकवि । टीकाकार- श्री पं० नारायणजी । लिपिकार × । अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज । पृष्ठ-संख्या—१२८ । प्र० पृ० पं० लगभग—२२ । रचनाकाल—× । टीकाकाल—×। लिपिकाल—×। भाषा—संस्कृत । लिपि—नागरी ।

प्रारम्भ—"महेति ।। नाम प्रसिद्धौ साधवः स्वनामना ददते कथयंति । ईदृशी महाजना नामाचारपरम्परा यतः । अतः कारणात् तत्स्वनाम अभिधातु ं वक्तु ं नोत्सहेनेच्छामि । कुलं कथितं नाम न कथनीयमित्यर्थः । अत्र हेतुः किल यस्मा ज्जनः आचारमुचं पुरुषं पुनर्विगापयति निंदति । अतो न कथ्यत इत्यर्थः । आत्मनाम गुरोर्नाम नामापि कृपणस्यच । आयुःकामी न गृह्णीयाज्ज्येष्ठापत्यकलत्रयोरिति सदाचारोमूलं । आददते आङो दो नास्यविहरणे इति तङ् ।।१३।। अद इति अयंनलोऽदः पूर्वोक्तंवचनमालप्योक्त्वातुष्णींबभूव । किंभुजः शारदो निपुणः हिंसाप्रदोवाऽतएवाहिताः शत्रवस्तेषामपकारकः । क इव शारदः शरत्सम्बन्धी शिखीव मयूरहता । यथाहीनां सर्पाणां तापं करोति एवं-भूतोमयूर प्रावृषि रुतं कृत्वा शरदि मूकी भवति । अथानंतरंच... ।"

अन्त—"मदन्येति । ममअन्यस्मैनत्वव्यतिरिक्तापवरायवित्कर्तृकदानं प्रति जह्दिश्यपितुर्नियोगेनेत्यादिकल्पनाशंकातर्कः एषा तावत् कल्पनात्वदीयते दिवे दिवे... ......चेत्तर्हित्वं निशोपि रात्रेपि सोमाच्चंद्रादितरोन्यः कांत प्रियस्तस्य शंकां अस्यवेदस्य अग्रेसरंपुरोवर्ति.....कुरुवेदस्याग्रेसरः आदौ अंकारो भवति रात्रेश्चंद्रादन्यः कांतो न तथा नलातिरिक्तो ममेत्यर्थः···· कातृकंदानंवा अग्रेसरं पुरोग्रतोग्रेषुसर्तेरिति अजाद्यदंतमितिपूर्वनिपात कृत्वाग्रशब्दस्य परनिपातकरण सप्तम्येकवचनेन. .....दंतत्वार्थं यूयं तदग्रसरमित्यादयः प्रयोगाच्चवाग्रतः सरति अग्रेणेवेति समर्थनाय ।। सरोजिनीति हे हंस सरोजिन्याः कमलिन्याः मानसरागः अंतःकरणानुराग-स्तस्य वृत्तेः सद्भावस्यस्थितेः अनर्केण सूर्यादन्येन सह सम्पर्कं सम्बन्धं अतर्कयित्वा अविचार्य तवेयं ममान्येननलव्यतिरिक्तेन पाणिग्रहः परिणयस्त ... ।"

विषय—संस्कृत-काव्य ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्रसिद्ध 'नैषधचरित'-काव्य की टीका के रूप में लिखा गया है। टीकाकार ने सर्गों के अन्त में अपना परिचय निम्नांकित शब्दों में दिया है 'इतिश्री वेदरकरोपनामश्रीमन्नरसिंहपंडितात्मजनारायण-कृते नैषधीयप्रकाशे तृतीयः सर्गः । शुभमस्तु ।।' टीका का 'नैषधीय-प्रकाश' नाम है। टीका अच्छी है। इसमें व्याकरण की टिप्पणियाँ भी यथास्थान दी गई हैं। टीका की शैली प्राचीन है। ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। ग्रन्थ खण्डित है। प्रारम्भ के पृष्ठ फटे होने के कारण प्रारम्भ की पंक्तियाँ पृष्ठ संख्या ५ से दी गई हैं। सभी सर्गों की पृष्ठ संख्या पृथक्-पृथक् दी गई है। इसमें १, ५, ६, ७,

९, १०, ११, १६, १७, १८, १९ और २०वाँ सर्ग नहीं हैं। जो सर्ग हैं, उनके भी पृष्ठ बीच-बीच में फटे हैं और कुछ तो बिलकुल नहीं हैं। दूसरे सर्ग में केवल पाँच ही पृष्ठ हैं। पूरे पृष्ठ मिलने पर इस ग्रन्थ की एक अच्छी टीका का उद्धार हो सकता है। यह ग्रन्थ श्रीअवधेन्द्रदेव नारायण, दहियावाँ (छपरा) के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

२०. रामकृष्णकाव्यम्—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, देशी कागज पृष्ठ-सं० ४०। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। भाषा—संस्कृत। लिपि नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री रामतो मध्यमतोदिवेनधीरोवुशंवश्यवतीवराद्वाः धारावतीवश्यवशं-निषेधी नचेदितो मध्यमतोमराश्रीः =॥५॥ (मूल) अथमायापक्षस्य समञ्चं स्थातुं न शक्नोतीति शंङ्कयानुसंधानेन मायातिरस्कारादत्युक्तं तन्त्रात्मज्ञाने महानामसः श्रीराम सेवायातुविद्याप्राप्तीः तप्राप्तिकालश्वज्ञान निराशाद्रति विषमाया रथेन्द्रज्त्रयाह श्री रामुद्रुतिवा इत्यर्थः वासयुष्मा-नृषीरः येतानिशं श्रीरामतोमध्यमतो श्रीरामतो निमित्तभूताअर्ध्यं मध्ये अवसी समानं प्रपंचारूयं असोदिनाशितं स एव धीर इत्यर्थः। किं भूतात् श्रीरामतः वश्यवतीचरात् वश्यंनेतुं समर्थम्। वश्यंरूपं तद्वतीजानकी तस्याः वरात्। (टीका)"

अन्त—"सभवस्यभवंक्षयैकहेतोर्सिसंतसप्लेशविधासयतोस्पहार्थम्॥ रिपुराध.... प्रकृतिप्रत्ययोरिवानुबन्ध॥ अथदीपितया.....।"

विषय—काव्य। जीवन-चरित्र।

टिप्पणी—१. यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है। मूल ग्रन्थ श्रीरामकृष्ण-काव्य है और साथ में ग्रन्थ को टीका भी है। राम और कृष्ण के जीवन पर मुक्तक-रचना की गई है। संस्कृत-साहित्य में इस नाम की तथा इस प्रकार की किसी अन्य रचना का पता नहीं है। ग्रन्थ विवेच्य और अनुसन्धेय है।

२. ग्रन्थ की लिपि अत्यन्त अस्पष्ट और प्राचीन है। खण्डित होने के कारण ग्रन्थकार, टीकाकार तथा लिपिकार के न तो नाम का ही पता चलता है और न रचनाकाल या लिपिकाल का ही। ऐसा प्रतीत होता है कि यह ग्रन्थ अवश्य १७ वीं-१८ वीं शताब्दी में लिखा गया है। यह ग्रन्थ श्रीअवधेन्द्रदेव नारायण, दहियावाँ (छपरा) के सौजन्य से प्राप्त किया।

३१. सिद्धान्तचन्द्रिका—ग्रन्थकार—श्रीरामाश्रमाचार्य । लिपिकार गुरुप्रसाद दीक्षित । अवस्था-- अच्छी, प्राचीन देशी कागज । पृष्ठ-सं० १६ । प्र० पृ० पं० लगभग---२२ । भाषा—संस्कृत । लिपि— नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल— वैशाख वदी पंचमी, सं० १९२१, मंगलवार ।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः कृत्कर्तरि वक्ष्यमाणः प्रत्ययः कृत्संज्ञकः स च कर्तरि तृवुणौ धातोः यत्ता कृतः वसादेः क्र इट् भविता कुट् कौटिल्ये कुटिल गोपायिता गोपिता गोप्ता सहिता सोढा एषिता एढा युवोरनाकौ याचकः पाचकः भावकः दोषकः घातकः जायते जनयतिवा जनकः जनिवध्योर्न-वृद्धिः घटकः मांतस्यसेटोर्नवृद्धिः दरिद्रायक कोटकः शमक नियामकः ।"

अन्त—"भावंनाद्यार्थप्रत्ययांतेव्यर्थेकृभ्वोत्क्त्वाणमौ नानाकृत्वानानाकृत्य गत नाना-कृत्वा नानाकारं विनाकृत्य विनाकृत्वा विनाकारं नानाभूय नानाभूत्वा नानाभावम् एकधाकृत्य एकधाकृत्वा एकधाकारं अनेकंद्रव्यमेकंभूत्वा एकधाभूय एकधाभूत्वा एकधाभावं प्रत्यय ग्रहणेकिंहिसात्कृत्वा तुष्णीं-शब्देभुवः त्काणमो तुष्णीभूयगतःतुष्णीभूत्वातुष्णीभावं अन्वकशब्देभुवः त्क्वाणामौ अनुकूलोगम्ये अन्वग्भूयास्ते अन्वग्भूत्वा अन्वग्भावं अअग्रत पार्श्वतः पृष्ठतोवानुकूलोभूत्वास्ते इत्यर्थः अनुकूल्ये किं अन्वग्भूत्वाति-पृष्ठतोभूत्वित्यर्थः वर्णात्कारः अकारः इकारः वकारः रादिफोवारेफः रकारः लोकाच्छेषस्यसिद्धिर्यथामतिरादेः ।

इति श्रीरामाश्रमाचार्यविरचितायां सिद्धान्तचन्द्रिकायामुत्तरार्द्धः समाप्तः शुभंभूयात् ।। श्री शिवाय नमः श्री सीतापतयेनमः ।"

विषय—चान्द्रव्याकरण ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्रसिद्ध संस्कृत-व्याकरण-ग्रन्थ है । अन्त में लिखा है—"यह पोथी शहर वनारस में दिवाकर छापाखाने में साकीन मोहल्ले भदैनी कालीमहल के पास शिवचरण के इहां चंद्रिकाकृतांतसहित छापावाकल गुरुप्रसाद दीक्षित व छापनेवाले मातादीन यः पोथी जिसको लेना होई सो चादनीचौक मे कुंजगली के फाटक के पछिम तरफ रामचरन के दुकान पर मिलेगी श्रीसम्वत् १९२१ मिति वैशाख वदी पंचमी वार मंगलवार तृतीय प्रहरे समाप्तम् ।" प्रतीत होता है, ग्रन्थ का लीथो-टाइप किया गया है, किन्तु लिपिकार ने 'व' के लिए (व़) 'व' के नीचे बिन्दु देकर और 'ब' के लिए 'व' का प्रयोग किया है । ग्रन्थ में पूर्ण-विराम, अर्द्धविराम आदि चिह्न उपेक्षित हैं ।

यह ग्रन्थ मोकामा के शंकरवार टोला-निवासी पं० श्रीकेशवप्रसाद शर्माजी के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

३२. सिद्धान्तचन्द्रिका—(सुबोधिनी-सहित)—ग्रन्थकार—श्रीरामाश्रमाचार्य। टीकाकार—श्रीसदानन्द। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी है, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० १२१। प्र० पृ० पं० लगभग - ३६। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—वैशाख शुक्ल-तृतीया, सं० १९३५, रविवार।

प्रारम्भ—"ओं श्रीगुरवे नमः ओं नमस्कृत्य महेशानं मतं बुद्धापतंजलेः वाणीप्रणीत सूत्राणां कूर्वे सिद्धान्तचन्द्रिकां १ अइउऋऌसमानाः अनेन क्रमेणैतेवर्णाःज्ञेया ते च समानसंज्ञाः स्युः ॥२॥
नैतेपुसूत्रेपुसंधिरनुसंधेयोऽविवक्षितत्वाद्विवक्षितस्तुसंधिर्भवतीति नियमात् ह्रस्वदीर्घप्लुतभेदाः सवर्णाः एतेषां ह्रस्वदीर्घप्लुताः सजातीयाः परस्परं सवर्णा भण्यंते ऋऌवर्णौच एकमात्रो ह्रस्वः।
ओं श्री गणेशायनम, पुराणपुरुषंध्यात्वानत्वाचार्हतनायकम् सिद्धान्त चंद्रिकावृत्तिचर्करीयित्तरामहम् १ विद्यारत्नपयोनिधौखरतराम्नाये जगत्पूजके। श्रीभट्टारकसंपदंगुणगणै स्तुत्याधरन्पुण्यवान् ॥
पूज्यश्रीजिनभक्तिसूरिरधिपोवर्वर्तिविद्यानिधिः। सोयंशीतकरायते च यशसासूरायते तेजसा २"

अन्त—"चार्थे द्वन्द्व इति निपातनात्पुंस्त्वमपि ॥ शेषा निपात्याः कत्यादयः। का संख्या येषांते कत्ति दार्विकः शाशकः। दात्यौहः। दार्घसत्रः ॥ आयसः ॥ इतिश्री रामाश्रमाचार्य्यविरचितायां सिद्धान्तचन्द्रिकायाम् पूर्वार्द्धं सम्पूर्णम् ॥
अण् दित्यौहः इदं दात्यौहं वहोवौ इत्यौत्वं निपातनात् अण् दीर्घसत्रे भवं दार्घसत्रं अण्श्रेयसि भवंश्रायस आंग्णेति तद्धितप्रक्रिया। श्री मत्यानकवर्यं भक्ति विनया विख्यात कीर्त्ति प्रभा राजेन्द्रैः परिपूजिता सुकृतिनः पुंभाव वाग्देवता.मंतारोजगतां पतिगुण गणै विभ्राजमानाः सनत् संवेगादियुजो जयंतु सततं षड्शास्त्रविद्याविदः १ तेषां शिष्यः सदानंदस्तदनुग्रहभूषित। सिद्धांन्तचन्द्रिकावृत्तिं पूर्वार्द्धे चर्करीदिमम् ॥
इतिश्री सिद्धान्तचन्द्रिकाव्याख्यायां सदानंदकृतौ पूर्वार्द्धः समाप्तिमगात् ॥"

विषय—चान्द्रव्याकरण।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ जैन आचार्य सदानन्द कृत महत्त्वपूर्ण व्याख्या से संवलित है। इसकी लिपि पुरानी तथा अस्पष्ट है। यह ग्रन्थ मोकामा के शंकरवार टोला-निवासी श्रीकेशबप्रसाद शर्मा के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

३३. नलोपाख्यानम्—ग्रन्थकार—श्रीकालिकवि। लिपिकार –×। अवस्था—खण्डित, प्राचीन हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० १६। प्र० पृ० पं० लगभग—२०। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। आकार—१३"×५"। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"(टीका) नामानिचपठितानि वारं वारं गृहीतानिसन्नामानि गोविन्दादिनी यैस्तेपठितसन्नामानः यद्वा यस्मिन् मा लक्ष्मीः स सन्नास-निकटा समीपेनिकटासन्नसनिकृष्ट सनीऽवदित्यमरः तेना दूरदेशान्तर वर्तित्व विशिष्टा समीपस्थितेति यावत् आसन्न इति आङ उपसर्ग सहितः अयं निरुपसर्गः च पुनः पठित सन्नामानो भवभाजो नस्युः ३

(मूल) समनिन्दा नव ना सज्जन तालिकुलं यथैव दानं व नाशम् द्विरदा दाननाशं जगद्यलभते यतः सदा नाव नाशम् ४

(टीका) समेति जनत जनसमूहः यतो राज्ञः शं कल्याणं लभते प्राप्नोति च पुनः जगत् दानवानां दैत्यानां नाशं मृत्यु यतो लभते कीदृशी जनता सम निन्दा तवनाग स्तुतौ धातोल्युटि नवनं स्तुतिः निंदा च नवनं च निन्दा नवने समे निन्दा नवने यस्याः सा जगत् कीदृशं सदा अनवनाशं अनवरक्षणं तस्य आसा अनवाशा न विद्यते अवनाशा यस्यतत् अनवनाशं यथा अलिकुलं कर्तृहरित सकाशाददानवनाशं प्राप्नोति दानव दानजलं तस्य आशनं आशस्तप्रातराशं सायमाशश्चतद्वत् ४"

अन्त—"(मूल) गुरु महिमा परमास्तमंमयीनल एष व सतिमा परमाया प्रियया सापरमायाः स्वपुरुपमगुर्यत्रतं क्षमापरमायाः ।।५३।।

(टीका) गुर्विति एष नलः प्रियया भैम्या अमसहतस्वपुरं स्वनगरमापप्राप-स्वादभासन्निमधानार्थे सहार्थे इतिहेम चंद्रकीदृशः गुरुमहिमामहतोभावो-महिमागुर्वीमहिमायस्यसः एवं परमायास्तम्भीपरेषां शत्रूणां या माया तयाः स्तम्भीरिपकपट नाश इत्यर्थः कीदृशं स्वपरं परमाया उत्कृष्टायाः रमायाःलक्ष्म्याः वसतिस्थानं तत्किम् यत्रपुरे आयाः धनागमनानि क्षमा परसहिष्णुताशीलंतंनलमगुः प्रापुः ।।५३।।

(मूल) शशिनासमहासमहानगेरजनतासमहास्तमुदम् ।
अतिभासुरयासुरयाव्यहरद्यतनोत्सुरयागमपि ॥५४॥
इति वोधिनी टीका सहिते श्री कालिकृते रत्काव्ये नलोपाख्यानेप्रथमोच्छवासः ॥१॥"

(टीका) शशिनेति जनता जनसमूहः नगेर नलपुरे मुदं हर्षं समहास्तप्राप ओहतुः गतावित्यस्यधातोः प्रयोगः विगत्यथास्ते प्राप्त्यर्थज्ञानार्थश्चकिम्भूता जनता शशिना चन्द्रेणसमहासमहासस्य महस्तेजो यस्याः सा महश्चोत्सवतेजसोरित्यमरः एवं स महामहेन उत्सवेन सह वर्तमाना सा एव सुरया शोभतोरय शब्दो यस्याः सा सुरया पुनः जनतैव सुरया मदिरया व्यहरत चिक्रीड सुरयाग मपि सुरार्धनमपि व्यतनोत् अकरोत् कीदृश्या सुरया भासुरया स्वच्छया ५४ इति तत्वबोधिनीटीकायां ॥१॥"

विषय—संस्कृत-काव्य ।

टिप्पणी- १. यह ग्रन्थ खण्डित है । प्रारम्भ का १ पृष्ठ नहीं है । प्रथम उच्छ्वास की समाप्ति के पश्चात् दूसरे उच्छ्वास का १ पृष्ठ नहीं है । प्रथमोच्छ्वास के अन्त में ग्रन्थकार का नाम 'कालि' लिखा हुआ है । खण्डित होने के कारण लिपिकार का नाम तथा रचनाकाल, लिपिकाल, स्थान आदि का संकेत नहीं मिलता है ।

२. यह ग्रन्थ अप्रकाशित है । संस्कृत-साहित्य में, सम्भवतः इस ग्रन्थ का ग्रन्थकार श्रीकालिकवि का नाम नवीन है । ग्रन्थ में कवि ने श्लेष, अनुप्रास, यमक और अन्य विविध अलंकारों में समीचीन रचना की है। निम्नांकित श्लोकों में देखिए---

''अथरतिरेकान्तेन प्रापि नलो नात्र मन्दिरेकान्तेन ॥
ताम्पुनरेकान्तेन प्राप्तः वतारिपु मदातिरेकान्तेन ॥१॥
वभौ ससार सागरश्चकाश सार सद्र्धीः ।
मधुः ससार सारवस्तदा ससार सार्तवः ॥२॥''
किस प्रकार यमक और अनुपास का समन्वय कवि ने किया है ।

३. ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और पुरानी है । लिपि ठीक नहीं होने के कारण कहीं कहीं छन्दोदोष भी आ गया है । ग्रन्थ में 'य' के लिए 'ज्ञ' का प्रयोग किया गया है । शेष अक्षरों के प्रयोग भी सामान्यतः अन्य हस्त-लिखित पोथियों जैसे ही हैं ।

यह पोथी मोकामा (पटना) के शंकरवार टोला के प्रसिद्ध जनहितैषी पं० केशवप्रसाद शर्मा के सौजन्य से प्राप्त हुई ।

३४. महाविद्यास्तोत्र ग्रन्थकार— × । लिपिकार श्रीलक्ष्मणराम । अवस्था—अच्छी, पुराना हाथ का बना देशी कागज । पृष्ठ-सं १० । प्र० पृ० पं० लगभग—२५ । आकार—७" × ३½" । भाषा—संस्कृत । लिपि – नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल भाद्र, शुक्ल, तृतीया सं० १९२२, वि० गुरुवार ।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः ऊँ महाविद्यास्तोत्रस्य अर्यमा ऋषिर्देवी गायत्री छन्दः जगती श्री शदाशिव देवता श्री शदाशिव साहित्यर्थे जपे विनियोगः ऊँ महाविद्याप्रक्ष्यामि महादेवेन निर्मिताम् चिततो वा राष्ट्ररूपेण मान्त्रिणां हृदयंन........।"

अन्त—"ऊँ सिपांरक्षतु ब्रह्माणोसिरंरक्षतु माहेश्वरी मुखंरक्षतु कौमारीकंठंरक्षतु वैष्णवी भुजंरक्षतु वाराही ऊँ दूरंरक्षतुइन्द्राणी कटिरक्षतु चानुगपादौरक्षतु महालक्ष्मी ऊँ ह्रां ह्रीं ह्रुं क्लि द्रौं धुं हुं फट स्वाहा ऊँ नमो भगवते परिनामे महाविद्या महादेवस्य सन्निधौ एकविससिवारेणपस्त्रीतं विष्णुमायया आरणयश्चैव सर्वग्रहनिवारणं सर्वकार्येषु सिध्यंन्ति शान्तिकर्म्मविशेषितम् इति श्री महाविद्यास्तोत्रस्य समाप्तम् ॥'

विषय—तन्त्र-साहित्य ।

टिप्पणी- यह लघुकाय पुस्तिका तन्त्र-सम्बन्धी है । ग्रन्थ के प्रारम्भ के श्लोकों में इस तन्त्र का उपयोग बताते हुए सभी प्रकार के ज्वर-शमन तथा सर्वव्याधिविनाशार्थ लिखा है । यथा –"ऊँ वेलाज्वररात्रिज्वरतित्रज्वर तततिज्वर अग्निज्वर राक्षसज्वर भूतज्वर पिशाचज्वर दृष्टिज्वर स्फोटज्वर तित्रज्वर मातिप्रयोगादिविनाशायस्वाहा ऊँ अक्षिशूल कक्षिशूल वक्षशूल कर्णशूल घ्राणशूल गंडशूल गलशूल सिरशूल शिराद्धशूल सर्वाङ्गशूल विनाशायस्वाहा सर्वव्याधिविनाशाय स्वाहा सर्वशत्रु विनाशायस्वाहा सर्वस्फोटविनाशायस्वाहा ऊँ आत्मारक्ष परमात्मारक्ष अग्निरक्ष प्रत्यग्निरक्ष उतेषांवालकं वंधासि ।"

इससे प्रतीत होता है कि इन उपर्युक्त प्रयोजनों के लिए इस तन्त्र की सिद्धि की जाती थी । यह ग्रन्थ मोकामा (पटना) के शंकरवार टोला-निवासी पं० श्रीकेशवप्रसाद शर्मा के सौजन्य से प्राप्त किया।

३५. सन्ध्याविधि ग्रन्थकार—× । लिपिकार × । अवस्था—प्राचीन, जीर्ण-शीर्ण हाथ का बना, मोटा कागज पृष्ठ-सं० ५ । प्र० पृ० पं० लगभग—२२ । आकार—८½" × ४¼" । भाषा संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—सं० १७८८ वि० ।

प्रारम्भ—"ऊँ अस्य उपनयने विनियोगः। शिरसः प्रजापति ऋषि ब्रह्माग्निवायु सूर्यो देवता प्राणायामे विनियोगः। इति ऋष्यादिकं स्मृत्वावद्धासेन सम्मीलित नयनो मौनीप्राणायामत्रयं कुर्य्यात्॥ वारिणा पुनरात्मानं वेष्टयित्वा॥ वायोरादानकाले पूरक नामा प्राणायामः॥ तत्र नीलोत्पलदलश्यामं चतुर्भुजं विष्णुं ध्यायन्॥ दक्षिणहस्तांगुष्ठेन दक्षिण नाशापुटं निनुन्धन् प्राणवायुमाकर्षयन्॥ ऊँ भूः स्वाहा ऊँ भुवः स्वाहा ऊँ महः ऊँ जनः ऊँ तपः ऊँ सत्यं ऊँ तत्सवितुर्व्वरेणयं भर्ग्गो देवस्य धीमहि। धीयोयोनः प्रचोदयात्॥ ऊँ आपो ज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्॥ इति मंत्रत्रि उच्चरेत्॥ एवं धारणकाले कुंभकः तत्र कमलाखनं रक्तवर्णं च तम्मुखं ब्राह्माणं हृदिध्यायनमध्यभागः ल्यावामनाशपुटमपिनिनुन्धन्॥"

अन्त—"ऊँ भूर्भुवस्वर्नेत्राभ्यांवौषट ऊँ भूर्भुवः स्वरस्त्रायफट इति यथाशक्ति क्रमं हृदयः सिरसः शिखासर्वाङ्गनेत्रद्वये करतलेष्वंगन्यासं कृत्वावारत्रयं वामकरतलेदक्षिण करांगुलीभिस्तालत्रयपूर्वं कृतकं तर्ज्जन्यंगुलष्ठयोगेन सशब्दंदिग्बन्धं कुर्य्यात्॥ ततस्तेजोसिति देव ऋषयः शूलिदैवतं गायत्र्यावाहने विनियोगः। इति संध्याविधिः समाप्ता॥ शुभम्॥"

विषय—कर्मकाण्ड।

टिप्पणी—१. यह सन्ध्याविधि है। इसमें प्रचलित सन्ध्याविधियों से कुछ अन्तर है। प्राणायाम की विधि विस्तार से बताई गई है। ग्रन्थकार के नाम का उल्लेख ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में नहीं है।

२. इस ग्रन्थ के साथ ही प्रारम्भ में एक पृष्ठ का 'कृष्णकवचम्' नामक पुस्तक है। उसके अन्त में भी लिपिकार ने लिपिकाल 'सं० १७८८ वि०' लिखा है। सन्ध्याविधि के अन्त में ग्रन्थ के लिपिकाल की कोई भी चर्चा नहीं है। यह ग्रन्थ मोकामा (पटना) के शंकरवार टोला-निवासी पं० केशवप्रसाद शर्मा के सौजन्य से प्राप्त किया।

३६. अहिबलचक्रम्—ग्रन्थकार—×। लिपिकार ×। अवस्था—खण्डित, प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं० ४। प्र० पृ० पं० लगभग १८। आकार—१०$\frac{१}{५}$'' × ४$\frac{१}{४}$''। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल ×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः अथ अहिबलम् चन्द्र क्षेत्र सूर्य्य क्षेत्र विचार करना अथ प्रथमे चन्द्रक्षेत्र एतानिनक्षत्राणि शोध्यछन्ददेनाह रेवति० सतभि० अश्व० आद्रा० श्लेषा० भरणी० पुनर्व० पुर्वाषा० पुर्वभाद्रपद० कृत्तीका० पुष्प० श्रवणा० उत्राषा० इति चन्द॥

अथ सूर्य्यक्षेत्र एतानि नक्षत्राणि—वर्ण उपजातिकछंदेनाह ।।०।। रोहिणी० पूर्वाफाल्गुणी० चित्रा० अनुराधा० उत्रभाद्रपद० मृगशिरा० उत्राफाल्गुणी० वाति० ज्येष्ठा० मघा० हस्त० विशाषा० मुल० इति सूर्य्यः ।। अथटिकास्वानुभावे पुर्वाभिमुखंसीबबलम् टीका अर्थ यस्मिन्समये महा नक्षत्रप्राप्तोरवितत्समयमारभ्य० ।।"

अन्त—"सूर्यः स्वर्ण १ स्थुल । चन्द्रौप्य २ भौमेताम्र ३ बुधेपीतर ५ गुरुणांराङ्गा ५ सुक्रेकांस्यं ६ शनौलोह ७ राहुणांसीसं ८ केतुनां जस्ता ९ तात्कालेचन्द्रवदेत् ।"

विषय—ज्यौतिष-शास्त्र ।

टिप्पणी—१. यह लघुकाय पुस्तिका ज्यौतिष-शास्त्र से सम्बन्ध रखती है। इस नाम का ग्रन्थ श्रीलोमश ऋषि-प्रणीत ज्यौतिष-शास्त्र में प्रसिद्ध और प्रकाशित है। इसमें यत्र-तत्र पाठभेद तो प्रतीत होता ही है, साथ ही, टीका भी है। ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में ग्रन्थकार या लिपिकर का नाम नहीं है। ग्रन्थ खण्डित है। अन्त में ग्रन्थ की समाप्ति के बाद निम्नांकित पंक्तियाँ लिखी हैं—(एक रेखा खींचकर उसके नीचे) "गोक्षीरण तु संपेष्य तिलकोद्रव राजिका चूर्णबीजं च संपेष्य निशायां च निद्धिस्थलम् भ्रष्टोलोपो भवेत् यत्र प्रातस्तत्रनिधिद्रिशेत् ।।१।। आर्जुनस्य कदंबस्य बकस्य (भुलेश्वरी) खदिरस्यच ब्रह्मवृक्ष (ब्रह्मवृक्षनाम अवरा) पत्राणि कांजिकेनैवपेषयेत् निशायां लेपयेत्भूमौ कल्प्यमंत्रेण मंत्रये प्रातेर्लोपो न पत्रास्ति तत्रेव निधिमादिशेत् ।।२।। उमादिमात्रि संयुक्तं किरातं तत्र पूजयेत् तत्र होमो प्रकर्तव्यो निशायां घृत गुगुलैः प्रभाते तद्विदीर्ण चेन्निधिः स्तव सुनिश्चितः ।।३।। (ऊँ नमो भगवते रुद्राय कल्पलेपांजनं दरशय दरशय स्वाहा ठः ठः) अनेन येषांजनमंत्रमंत्रयेत् ।।इति।।"

२. ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। लिपिकार ने अन्य हस्त-लिखित लिपियों-जैसा ही व, ब, य और ज का प्रयोग किया है। ग्रन्थ पठनीय है।

यह पोथी मोकामा (पटना) के शंकरबार टोला-निवासी पं० केशवप्रसाद शर्मा के सौजन्य से प्राप्त हुई।

३७. सारस्वतप्रक्रिया--ग्रन्थकार – श्रीअनुभूतिस्वरूपाचार्य। लिपिकार— × । अवस्था — अच्छी; प्राचीन, हाथ का बना मोटा देशी कागज। पृष्ठ-संख्या २६।

प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—११½″×४½″। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः प्रणम्य परमात्मानं वालधी वृद्धि सिद्धये
सारस्वती मृजुं कुर्वे प्रक्रियान्नाति विस्तरां १
इंद्रादयोपि यस्यातं नययुः शब्द वारिधेः
प्रक्रियां तस्य कृत्स्नस्य क्षमौ वक्तुं नरः कथं २
तत्रतावत्संज्ञा संव्यवहाराय संगृह्यते अ इ उ ऋ लृ सामानाः अनेन प्रत्याहारग्रहणाय वर्णाः परिगणयंते तेषां सामान संज्ञा च विधीयते। नैतेषु सूत्रेषु संधिरनुसंधेयोऽविवक्षितत्वात् विवक्षितस्तु संधिर्भवतीति नियमात्।"

अन्त—"सह सदृशंसाकं सार्द्धसमं योगे तृतीया सह शिष्येण गतो गुरुः सदृशंचैत्रो मैत्रेण शाकं नयनाभ्यां श्लक्षणाः दंताः सार्द्धं धनिभिः धृतः साधुः समंचन्द्रेणोदितो गुरुः नमः स्वस्ति स्वाहा स्वधा अलं वषट् योगे चतुर्थी च वक्तव्या नमो नारायणाय स्वस्तिराज्ञे सोमाय स्वाहा पितृभ्यः स्वधा अलं मल्लोमल्लायवषट् इंद्राय ऋते आदि योगे पंचमी ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः अन्योगृहाद्विहारः निर्द्धारणे षष्ठी निर्धारणं क्रिया गुणजातिभिः समुदायात् पृथक्करणं षष्ठी क्रियापणां मध्ये भगवदाराधकः श्रेष्ठः गवां कृष्णा संपन्ना क्षीरा एतेषां क्षत्रियः शूरतमः स्वाम्यदि योगे षष्ठी सप्तम्यो गोषु स्वामी गोष्ठाधिपतिः गवां स्वामी गवामधिपतिः कर्तृकार्ययोरक्तादौ कृति षष्टी।"

विषय—संस्कृत-व्याकरणशास्त्र।

टिप्पणी—यह संस्कृत-व्याकरण का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सारस्वत-प्रक्रिया' है। यह ग्रन्थ मुद्रित और प्रचलित है। किन्तु, इस ग्रन्थ के साथ इसमें जो टीका दी गई है, वह नवीन प्रतीत होती है। ग्रन्थ की लिपि पत्थरों के अक्षरों (पुरानी लीथो) में लिखी गई है। ग्रन्थ खण्डित है। टीकाकार और लिपिकार का नाम ग्रन्थ में नहीं है। ग्रन्थ में मूल और टीका दोनों समान अक्षरों में लिखे हुए हैं। यह ग्रन्थ श्रीरामप्रसाद शर्मा बड़हिया (मुँगेर) के सौजन्य से प्राप्त किया।

१८. गीतगोविन्दकाव्यम्—ग्रन्थकार—श्रीजयदेव कवि। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन हाथ का बना, मोटा देशी कागज। पृष्ठ-संख्या—९। प्र० पृ० पं० लगभग—१७। आकार—१३″×१५″। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—प्रसिद्ध। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—(मूल) "श्रीगणेशाय नमः मेघैर्मेदुर्मम्बरम्वनभुवः श्यामास्तमालद्रुमैः नक्तम्भीरुरयंत्वमेवतदिमं राधेगृहम्प्रापय ।। इत्थं नन्दनिदेशतश्चलितयोः प्रत्यध्वकुञ्जद्रुमम् राधामाधवयो जयति यमुनाकूले रहः केलयः ।।१।।"

(टीका) "श्रीगणेशाय नमः भद्राय भवतां भूयात्कृष्णः सद्भक्तिभावितः ।। कालिंदीजल संसर्गिमेघश्यामोऽति सुन्दरः १ पिपासूना भक्तियोगाय श्रीकृष्णचरिताऽमृतम् ।। लिख्यते जय देवेन गीत गोविन्द पुस्तकम् ।।२।। इहकविः प्रारिप्सितस्य ग्रन्थयनिर्विघ्नेनपरिसमाप्त्यर्थं श्रीकृष्णस्मरणरूपं वस्तुनिर्देशलक्षणं ।।३।। मंगलं तावदाचरति ।। मेघैरिति राधाभाधवयोः रहः केलयो यमुनाकूले जयन्तीत्यन्वयः राधाकृष्णयोः रहः केलय एकान्त क्रीडा यमुनातीरे जयन्ति सर्वोत्कर्षेण वर्तन्ते कथं भूतयोः राधा माधवयोः प्रत्यध्वकुञ्जद्रुर्मम् अध्वनि मार्गे कुञ्जे लतागृहे द्रुमेवृक्षे च इत्यमरः इत्थं इति नन्दनिदेशतो नन्दाज्ञयाचलितयोः प्रस्थितयोः यद्वा अध्वकुञ्जद्रुमान् प्रत्युद्दिश्य चलितयोः इतीति किमूहे राधे अम्वरम् अकासं मेघैर्मेदुरंसान्द्रं व्याप्तमित्यथ वनभुवस्तमाल वृक्षैश्यामाः अयंकृष्णः नक्तं रात्रौ भीरुः भयेन शीलत्वात् ततस्तस्मात्कारणात् त्वमेव इमं परोवर्तिनं कृष्णं गृहे प्रापय नय एवं प्रकारेण नन्दस्य अन्यस्मिन् विश्वासाभावात् ।।१।।"

अन्त—(मूल) "वसंत रागेणरूपकताले ।। ललित लवंगलता परिशीलन कोमल मलय समीरे ।। मधुकर निकरकरंवित कोकिल कूजित कुञ्ज कुटीरे विहरति हरिरिह सरस वसंते नृत्यति युवतिजनेन समंसखि विरहि जनस्य दुरन्ते १ उन्मद मदन मनोरथ पथिक वधू जनजनित विलापे अलिकुल संकुल कुसुम समूह निराकुल वै कुल कलापे २ मृग मदसौरभ रभसवशं वदन वदल मालत माले युवजन हृदय विदारण मनसिज नखरुचि किंशुक जाले ३ मदन मही पतिकनक दण्डरुचि सर कुसुम विकासे लिलित शिलीमुख पाटलि पटल कृतस्मरतूर्ण विलासे ४ विगलित लज्जित जगदवलोकन तरुण करुण कृतहासे विरहिनिकृंतन कुंत मुखाकृति केतकि...तुरिताशे ५"

"माधवि का परिमल ललिते नवमाल्लिकयाति सुगंधौ ।। मोहन कारिणि तरुणा कारण वंधौ ६ स्फुरदति मुक्तलतापरि रंभण मुकुलित पुलकित चूते ।। वृन्दावन विपिने परिसर परिगत यमुना जल पूते ७ श्रीजयवदे भणिमिद मुदयति हरिचरण मृतिसारं ।। सरस वसंत समय पर वर्णन मनुगत मदन विकारम्८

(टीका) श्री जयदेवेति श्री जयदेव कवेरिदं भणितं उदयति उदयं प्राप्नोतीत्यर्थः हरिचरणयोः स्मृतिरनुचितन सारोमुख्यं यत्र सरसं सुमनोहरं वसंत समय वर वर्णनं यत्र अनुगतोऽनुस्मृतोऽनुकृतो मदनविकारः काम-विलासो यस्मिन् ८"

विषय—संस्कृत-काव्य ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्रसिद्ध गीतगोविन्द का खण्डित भाग है । प्रकाशित ग्रन्थ से इसकी टीका कुछ और ही प्रतीत होती है । ग्रन्थ की टीका-शैली प्राचीन, अस्पष्ट तथा ग्रन्थिल है । ग्रन्थ खण्डित होने के कारण टीकाकार तथा लिपिकार के नाम का संकेत नहीं मिलता है । यही कारण ग्रन्थ के लिपिकाल के लिए भी है । ग्रन्थ की लिपि और कागज देखने से ग्रन्थ सौ वर्ष से अधिक पुराना प्रतीत होता है । ग्रन्थ का मूल भाग मोटे अक्षरों में और टीका पतले अक्षरों में है । यह ग्रन्थ श्रीवासुदेवप्रसाद गुप्त, नवीन प्रकाशन-मन्दिर, लक्खीसराय (मुंगेर) द्वारा प्राप्त किया । ग्रन्थ परिषद् के संग्रह में सुरक्षित हैं ।

३९. सिद्धान्तचन्द्रिका—ग्रन्थकार—श्रीरामाश्रमाचार्य । टीकाकार—पं० सदानन्दजी । लिपिकार—× । अवस्था अच्छी, हाथ का बना देशी कागज । पृष्ठ-सं०५५ । प्र० पृ० पं० लगभग—२४ । आकार—११$\frac{१}{५}$" × ४$\frac{१}{३}$" । भाषा—संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—(मूल) "श्रीगणेशायनमः कृत्कर्तरिवक्ष्यमाणा प्रत्ययः कृत्संज्ञकास्तेच कर्तरि भवंति तृ वुणौ धातोः पक्ता कृतः वसादेः कृत इट् कुटिता एधते इति एधिता गोपायिता गोपिता गोप्ता साहिता सोढा एषिता एष्टा युवोरनाकौ पाचकः भावकः आतोयुक् दायकः घातकः जनकः घटकः दरिद्रायकः कोटकः शमकः नियामकः क्रमेः कर्तर्य्याद्विषयात्कृतइटन प्रक्रन्ता ।।

(टीका) श्री गणेशायनमः श्री सरस्वतैनमः प्रतोष्टय्य जगन्नाथं सदानंदेनसन्मुदा सिद्धान्त चन्द्रिका वृत्तिः क्रियते कृत प्रकाशिका १ कृत्कर्तरि उत्सर्गतः कर्त्तरीतिवोध्यं तृवुणौधातोदेतौतः कर्तरितृपप्रतये भारुपचतीति विग्रहेचोःकुरितिकः वृत्तद्धितेति नाम संज्ञायांस्यादिविभक्तिः ।।"

अन्त—(मूल) "उजेर्वलंवलोपः ओजः श्रिञ्शिरः किञ्चशिरः अर्तेरुरः उरः अर्तेर्व्याधौनुट् अर्शः उदकेनुट् अर्णः इण आगसि एनः स्तुरीप्यां तुट्

स्रोत: रेत: पातेरुदकेत्युट् पाथ: अदेर्मक्तेधनोमुच अन्ध: आप उदके-ह्लस्वोनुम्भौ अम्भ: नसेर्दिविभ: नभ: इण आगेऽपराधे आग: ।।

(टीका) नभ: नभो व्योम्निनभौ मेघे श्रावणे च पतत् ग्रहेघ्राणेमृणाल सूत्रे च वर्षासुच नभ: स्मृतं इति विश्व: नभ: खं श्रावणौ नभा इत्यमर: नभतु नभसा सार्द्धमिति द्विरूपकोश: इण आगपराधे इण गतावस्मादसु: स्यात् अपराधेवाच्येधोतेराणोदशस्य आग: पापापराधयो-रिति विश्व: आगोपराधो मनुश्चेत्यमर: अनेर्हुक अमगत्यादावस्मादसु: स्यात् धातोर्हुगागमश्च अमंति गच्छंत्यधस्तादनेनेति अहं दुरितं रमेश्च रमुक्रीड़ायामस्मादसु: स्यात् छातोर्हुगागमश्चरह: वेग: देशे वाच्यरमेरसु: स्यात् धातोर्मस्यहश्चरह रहस्तत्वेरते गुह्ये इति मेदिनि रंज्यादे: किंतु असुस्यात् सचकित् रंजरागेकित्षभोलप इतिनालोप: रज: रज: क्लीवं गुणांतरे आर्तवेच परागे च रेणुमात्रेपि दृश्यते इति मेदिनी कप्रत्यये अकारांतोपि रजोपिरजसा सार्द्ध स्त्रीपुष्प गुण धूलि-ष्वित्य जयकोश: ।"

विषय—संस्कृतव्याकरण-शास्त्र ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्रसिद्ध 'सिद्धान्तचन्द्रिका' की टीका है । टीकाकार ने ग्रन्थ के सरल रूप को और भी विकट तथा कठिन बना दिया है । ग्रन्थ का मूल भाग मोटे अक्षरों में और टीका-भाग पतले अक्षरों में लिखा है ।

ग्रन्थ की टीका अस्पष्ट और असम्बद्ध है । लिपि भी अस्पष्ट और पुरानी शैली के अनुसार है । ग्रन्थ खण्डित है । प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार के नाम तथा टीका के काल (समय) का संकेत स्पष्ट नहीं है । यह ग्रन्थ श्रीशंकरप्रसादजी बरबीघा (मुँगेर) के सौजन्य से प्राप्त किया ।

४०. अष्टाध्यायी—ग्रन्थकार—श्रीपाणिनि मुनि । लिपिकार—श्रीमहादेवभट्ट तिलक अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज । पृष्ठ-सं० ४७। प्र० पृ० पं० लगभग—२२ । आकार—११$\frac{१}{५}$" × ४$\frac{१}{७}$" । भाषा—संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल—चैत्र, शुक्ल १३, सं० १९३४, (प्रारम्भ) आषाढ़, कृष्ण, सोमवार, सं० १९३४ वि० (समाप्त) ।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनम: ।। श्री पाणिनीयाय नम: ।। येनाक्षर समाम्नायमधि-गम्यमहेश्वरात् ।। कृत्स्नं व्याकरणम्प्रोक्तं तस्मैपाणिनये नम: ।। येन धौतागिर:पुंसांविमलै: शब्दवारिभि: ।। तमश्चाज्ञानजम्भिन्नन्तस्मै पाणिनये नम: ।।२।। योगेन चित्तस्यपदेनवाचाम्मलंशरीरस्य च वैद्यकेन ।। यो पाकरोत्तम्प्रवरम्मुनीनाम्पतञ्जलिरानतोऽस्मि ।।।३।"

अन्त—"उदात्तदनुदात्तास्यस्वरितः ८।४।६६ नौदात्तस्वरितोदयमगार्ग्यकाश्यप गालवानाम् ८।४।६७ अ अ ८।४।६९ रषाभ्यामुभौष्टुनोदोऽष्टौ। इत्यष्टमाध्यायस्यचतुर्थः पादः ॥ इत्यष्टमोध्यायस्समाप्तः शुभम् ॥

विषय—संस्कृत-व्याकरण शास्त्र।

टिप्पणी—यह श्रीपाणिनि मुनि का प्रसिद्ध अष्टाध्यायी ग्रन्थ है। इसे काशी के 'होजकटरा' मुहल्ले के 'श्रीरामदास दासाव' के मकान में 'श्रीहजारीलाल गनेश प्रसाद' ने लीथो में मुद्रित किया है। यह जिस हस्तलिखित ग्रन्थ से तैयार किया गया है, उसके लिपिकार हैं पं० महादेवभट्ट तिलक। ग्रन्थ की लिपि, शुद्ध, स्पष्ट और सुन्दर है।

यह ग्रन्थ बरबीघा (मुँगेर)-निवासी समाजसेवी श्रीशंकर प्रसादजी के सौजन्य से पाया।

४१. हनुमत्कवचम्—ग्रन्थकार—श्रीरामभद्र चिन्तामणि। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना मोटा देशी कागज। पृष्ठ-सं० ७। प्र० पृ० पं० लगभग—१६। आकार—६१/३" × ४"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—आश्विन, कृष्ण, सं० १९३१ वि०।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः ऊँ अस्य श्री पञ्चमुखहनुमन्मन्त्रस्यब्रह्माऋषिर्गायत्री छन्दः पञ्चमुखविधि हनुमान्देवता ह्रीं वीजं सः शक्तिः क्रौं कीलकं कुकवचं ह्रौं आस्त्रायपफट् इतिदिग्वंधनम् इश्वर उ वाच अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामिश्रृराउसर्वार्गि सुन्दरी यत्द्भुतं देवदेवेशिध्यानंहनुमतः प्रियम् १ पञ्चवक्त्रमहाभीमंत्रियज्वनयनैर्युतं बाहुभिर्दशभिर्युक्तंसर्वाकामाथ सिद्धिदम् ॥२॥"

अन्त—"षटवारंपठे नित्यंसर्वदेवशीकरं सप्तवारंपठेन्नित्यं सर्वसौभाग्यदायकंम् अष्टवावंपठेन्नित्यं ईष्टकामार्थसिद्धिदम् नववारं त्रिसप्तकेन राज्यभोग्य समारभेत् दसवारंत्रिप्तकेनत्रैलोक्यज्ञानदर्शनम् एकादशवारं पठेन्नित्यं सर्वसिद्धिभवेन्नरः कवचं स्मरेणैव महालक्ष्मी समन्वितः।"

विषय—स्तोत्र-मन्त्र।

टिप्पणी—इस लघुकाय ग्रन्थ में हनुमान् के विभिन्न रूप और गुणों की चर्चा है। स्तोत्र के अतिरिक्त पूजाविधि भी है। यत्र-तत्र कुछ ऐसे भी पद हैं, जो पूजा की प्रक्रिया में तन्त्र की पद्धति से लिखे गये हैं। ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट है और लिपि-शैली पुरानी है। ग्रन्थ सम्पूर्ण है,

किन्तु प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार का नाम नहीं है। ग्रन्थकार का नाम भी स्पष्ट नहीं है। ग्रन्थ के अन्त में—"इति श्री रामभक्त चिन्ता मनोक्तं" लिखा है। इससे ग्रन्थ और ग्रन्थकार दोनों का बोध हो सकता है। यह ग्रन्थ बरबीघा (मुँगेर)-निवासी श्रीशंकरप्रसादजी के सौजन्य से प्राप्त किया।

४२ मूर्याणंवकर्मविपाक-राशिफल—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० १७। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—९$\frac{1}{3}$" × ४$\frac{1}{2}$"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"अथ वृषराशि: कथ्यते नारद उवाच शृणु राजन् विचित्रं त्वं वृष राशिषु यत्फलं तत्फलं च वदिष्यामि तवाग्रे च नृपोत्तम १ धर्मात्मा ब्रह्मणो हयेक वसते न गरे शुभे पवते वेद शास्त्राणि त्रिकालज्ञ: शुचिर्भवेत् २ भिक्षा भोज्यं च कुर ते सवि प्रोग्राम याजक: एक दातु प्रिया स्तस्य प्रेत हस्तेषु भोजनं ३ आनी तं बद्धधा इत्यं सखादा भोजमं कृतं अणु मात्रं न दत्तं वै लुब्धोमलयुतस्तथा ४ अपरं शृणु शेषस्य यत्कर्म कुरु ते द्विज: द्यूत कर्म रतो नित्यमानीतं हाटकं परं ५ एवं वहुतिथे काले सवि प्र: पंच तां गत: यम पाशैदृढं बध्वा आक्षिप्तो बहुकर्दमे ६"

अन्त—"ब्राह्मणस्य सुर्वर्णस्य प्रतिमा कारयन्नरै: ।। गां सचैव सवत्सां च पंच रत्नानि संयुता ।।२०।। ब्राह्मणाय प्रदीयं ते तेषां दोषो विनश्यति ।।२०।। नारद उवाच ।। के न कर्म भवेल्लक्ष्मी राज्यं के न कर्मणा वशवृद्धि भवत्केन तन्म विस्तरतो वद ।।२३"

विषय—ज्यौतिष-शास्त्र।

टिप्पणी—१. यह ज्यौतिषशास्त्र से सम्बद्ध खण्डित ग्रन्थ है। इसमें जो भाग है, उसका सम्बन्ध राशियों के फल से हैं। ज्यौतिषशास्त्र में इस नाम का ग्रन्थ प्रकाशित रूप में अबतक देखने में नहीं आया है, किन्तु श्रीमोतीलाल बनारसीदास, जो प्रसिद्ध पुस्तक विक्रेता हैं, उनके ग्रन्थ-सूची-पत्र में एक ग्रन्थ 'वृद्ध-सूर्यार्णव कर्मविपाक' नाम का है। जिसका मूल्य बारह रुपये दिया गया है। सम्भव है, उक्त बड़े ग्रन्थ का यह कोई संक्षिप्त रूप हो अथवा इसका खण्डित भाग।

२. ग्रन्थ के खण्डित होने के कारण ग्रन्थकार और लिपिकार के नाम नहीं

ज्ञात हो पाते हैं। ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। यह ग्रन्थ बरबीघा (मुँगेर)—निवासी श्रीशंकरप्रसादजी के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

४३. **लघुजातकम्**—ग्रन्थकार—×। टीकाकार—श्रीमथुरानाथ। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, हाथ का बना जीर्ण-शीर्ण, कागज। पृष्ठ-सं० १८। प्र० पृ० पं० लगभग—२८। आकार—१०" × ६१/४"। भाषा—संस्कृत-हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—×।

प्रारम्भ—"अथ मुहुर्तप्रदीप अथ कालवेला विचार आद्योष्ट भागो दिवसाधिपस्य ततः परं षट् ६ परिवर्तनेन यस्मिन्विभागेरविसुन्द्रवेला काय्यषु सर्वत्र न सोभना सा ८१ पंच युग्म रसा रार्मा मुनिवेदाख्य सूर्य्यतः॥ कालवेला शनेर्वारे प्रातः सायं द्वयोर्भवेत् ८१ रात्रौ पंच परावृत्या वारवेला विनिर्मिता॥ रवेरुद्वेगवेला। चन्द्रस्यामृतवेला। भौमस्य रोगवेला। बुधस्यलाभवेला। गुरोः शुभवेला। शुक्रस्य चलवेला। शनेः कालवेला। इति वेलानामानि अथ रजोदर्शनम् वैशाखे फालगुणे माघे मार्गाख्यश्रावणश्विने पक्षे शुक्ले शुभाहे च सिद्धि लग्ने तवादिवा ८४ श्रवस्त्रयेनुराधायांरवति द्वितये मृगे हस्तत्रये च रोहीणयां यष्पुभे चोत्तरासुच सितवस्त्रं सुभंस्त्रीणां प्रथमे पुष्पदर्शनम्।"

"अथ जन्म के बस्त में खडगा पिता घर रहा या विदेश रहा इए विचार कहते हैं चक्र इति। जन्म लग्नकों चंद्रमा देषत रहै देव ते होयतो उस्के पित्ता जन्मे समय परदेश कहना। औ वुध शुक्र के विच में चंद्रमा होय तो तौवभि पीता परदेश हिमें कहना। या जन्म लग्न में शनैश्चर होय तौ भी परदेश कहना। औ जन्म लग्न से सात ७ ए घर में मंगल होंय तौ भि परदेश ही में कहना।"

अन्त—"अथ जातक स्वरूप चन्द्रमा मंगल साथ होय तो कटज्ञ होय। याने बाजार की चीजों का वेचनेवाला होय। औ बुध के साथ होय जो प्रिब बोलनेवाला होय। औ बृहस्पति से युक्त होय तो अपने कुल में सबसे अधिक होय। औ शुक्र के युत होय तो वस्त्र के व्यवहार को जाननेवाला होय। फुल खेलानेवाला होय। औ शनैश्चर से युक्त होय तो पुनर्भू से पैदा करै कहना। पुनर्भू वह कहलाति है। जो विवाहित पति के छोड़ के तवियत से अपने विरादर फीर करे वह अक्षत हो या क्षत हो उसका सस्कार फीर करे वही मंगल बुध इत्यादि दसापर है। औ वुध वृहस्पति साथ रहै इत्यादि उस वषत जिसका जन्म होय।

तिस्का स्वरूप एक आर्या करके कहते हैं। मल्लेति मंगल बुध के शाथ होय तो मल्ल होय। और मंगल वृहस्पति के साथ मे होय तो मगर का रक्षक होय। औ शुक्र से युक्त होय तो परदारा में रत्त रहै। औ शनैश्चर से युक्त होय तो दुःख से युक्त होय।"

विषय—ज्यौतिष।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ खण्डित, पर महत्त्वपूर्ण है। इसमें मूल ग्रन्थ की हिन्दी-टीका भी है। यद्यपि यह ग्रन्थ प्रकाशित है, किन्तु इसकी टीका भिन्न है। ग्रन्थ के प्रारम्भ और अन्त के पृष्ठों के फटे रहने और लिपि के अस्पष्ट होने के कारण ग्रन्थकार एवं लिपिकार का नाम ज्ञात नहीं होता। टीका संक्षिप्त और सुन्दर है। यत्र-तत्र टिप्पणी-मात्र दी गई है। ग्रन्थ की अवस्था जीर्ण-शीर्ण है।

ग्रन्थ की लिपि-शैली प्राचीन है। लिपि के अस्पष्ट और पुरानी होने के कारण मूल ग्रन्थ पढ़ने में कठिनाई होती है। लिपि से प्रतीत होता है कि ग्रन्थ १९वीं शताब्दी के अन्तिम अथवा २०वीं शताब्दी के प्रथम चरण में लिखी गई है।

यह ग्रन्थ बरबीघा (मुँगेर) निवासी श्रीशंकरप्रसादजी के सौजन्य से प्राप्त किया।

४४. **वाल्मीकिरामायण**—ग्रन्थकार—महर्षि वाल्मीकि। लिपिकार—पं० प्रताप—नारायणजी। अवस्था—अच्छी; प्राचीन, हाथ का बना मोटी देशी कागज। पृष्ठ-सं० ११। प्र० पृ० पं० १६। आकार—८½" × ४"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचना-काल—×। लिपिकाल—फाल्गुन, शुक्ल, १३, सं० १९१९ वि०, सोमवार।

प्रारम्भ—"श्री राजराजेश्वराय महाकारुणिकाय रघुनन्दनाय नमः॥ जयति रघुवंशतिलकः कौशल्या हृदयनन्दनो रामः दशवदन निधनकारी दाशरथि पुंडरीकाक्षः ॥१॥ कूजन्तं रामरामेति मधुरंमधुराक्षम् ॥ आरुह्य कविता शाखांवन्देवाल्मीक कोकिलम् ॥२॥ वाल्मीकेर्मुनिसिंहस्य कविता वनचारिणः॥ शृण्वन् रामकथानादं को न जाति परांगतिम् ॥३॥ यः पिवन् सततं रामचरितामृत सागरम् ॥ अतृप्तरतं मुनिं वन्दे प्राचेतसमकलमषम् ॥४॥"

अन्त—"नवा...क्षुद्भयं किंचिन्न तस्कर भयं तथा नगराणिव राष्ट्राणि धनधान्य युतानिच नित्यं प्रमुदिता सर्वे यथाकृत युगे तथा

अश्वमेध शतैरिष्ट्वा तथा बहु सुवर्णकैः गवांकोट्ययुतं दत्वा विद्वद्भ्यो विधिपूर्वम् असंख्येयं धनं दत्वा ब्राह्मणेभ्यो महायशाः सर्ववंशाछत गुणान् स्थापयिष्यति राघवःचातुर्वर्णर्यं च लोके स्मिन्स्वेस्वे धर्मे नियोक्ष्यति दशवर्ष सहस्राणि दश वर्ष सतानि न रामोराज्य मुपासित्वा ब्रह्मलोकं प्रयास्यति इद्रं पवित्रं पापघ्नं पुण्यं वेदैश्चसंयुतम् यः पठेद्रामचरितं सर्वपापैः प्रमुच्यते एतदाख्यानमाप्रख्यं पठन रामायणं नरः स पुत्रपौत्रः सगणः प्रेत्यस्वर्गेमहीयते पठन् द्विजो वागृषभत्वमीयात्स्या त्क्षत्रियो भूमिपतिःत्वमीयात् वणिज्जनःपणयपतित्वमीयातज्जन- श्चशूद्रोपिमहत्वमीयात् इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकिये आदि- काव्य बालकांडे नारद वाक्ये संक्षेपवर्णनोनाम प्रथमः सर्गः ।"

विषय—रामकाव्य ।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्रसिद्ध आदिकाव्य वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड का प्रथम सर्गमात्र है। ग्रन्थ के लिपिकार ने यत्र-तत्र कुछ पाठान्तर भी दिया है, ऐसा प्रतीत होता है। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट है।

यह ग्रन्थ बरबीघा (मुँगेर)-निवासी श्रीशंकरप्रसादजी के सौजन्य से प्राप्त किया।

४५. स्वरूपोपनिषद्—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, हाथ से बाँस का बना देशी कागज। पृष्ठ-सं० ४। प्र० पृ० पं० लगभग—१४। आकार—६" × ३⅓"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल--×। लिपिकाल—सं० १७९० वि०।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः ।। प्रातः काले समुत्थाय गुरुस्मरणानंतरंगुरू- पदिष्टज्ञानेन सहज सिद्ध मजथाजपं तत्तदेवताभ्यः समर्प्पयेत् ।।तत्क्रमः।।
ॐ अद्याहोरात्रोच्चरितमुच्छवासतिश्वासात्मकं षट्सताधिकमेक- विंशतिसहस्र संख्याकार जपाजपंमूलाधारस्वाधिष्ठान मनिपूरकानादे विशुद्धाज्ञाब्रह्मरंध्रेषु ।। षट्दल ।। दशदल ।। द्वादशदल ।।
श्री गणेशाय नमः ।। अथस्वरूपोपनिषत् ।।
अहमेव परंब्रह्म वासुदेवाख्यमव्ययं
इतिस्यान्निश्चितो मुक्तोबद्ध एवान्यथा भवेत् ।।१।।
अहमेवपरं ब्रह्म न चाहं ब्रह्मणः पृथक् ।।
इत्यवं समुपासीता ब्रह्म न चाहं ब्रह्मणिश्रितः ।।२।।"

अन्त—"मयिसर्व्व लयं याति तद् ब्रह्मास्म्यहमद्वयं ।।
सर्वज्ञोहगनन्तोहं सर्व्वेशः सर्व्वशक्तिमान् ।।२४।।
आनन्दः सत्यबोधोहमिति ब्रह्माणडचिन्तमं ।।
अयं प्रपंचो मिथ्यैव सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।।२५।।
इति स्वरूपोपनिषत्समाप्तम् ।।"

विषय—उपनिषद्-साहित्य ।

टिप्पणी—यह लघुकाय पुस्तिका प्रसिद्ध और प्रचलित उपनिषदों से भिन्न है। इस नाम की किसी भी उपनिषद् का पता प्रायः अबतक नहीं मिला है। इसमें केवल-मात्र ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन किया गया है। ग्रन्थ में मौलिकता का अभाव है। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, किन्तु प्राचीन है। ग्रन्थ के अन्त में सं० १७९० लिखा हुआ है। यह समय-निर्देश ग्रन्थ के निर्माण-काल के लिए है अथवा लिपिकाल के लिए, यह स्पष्ट नहीं है। ग्रन्थकार और लिपिकार ने ग्रन्थ में यथासम्भव अपने नाम और समय आदि का कोई भी निर्देश नहीं होने दिया है। ग्रन्थ में यदि सं० १७९० का समय लिपि का है, तो ग्रन्थ अवश्यमेव प्राचीनतम है। ग्रन्थ बाँस के बने कागज पर लिखा हुआ है और वह जीर्ण-शीर्ण हो गया है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है।

यह ग्रन्थ वरबीघा (मुँगेर)-निवासी श्रीशंकरप्रसादजी के सौजन्य से प्राप्त किया।

४६. **विष्णुपंजरस्तोत्र**—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—प्राचीन, हाथ वना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं० ५। प्र० पृ० पं० लगभग—१२। आकार—५" × ३" भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—पौष, शुक्ल ५, सं० १८१९ वि०, बृहस्पतिबार।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नमः ॐ अस्य श्री विष्णुपंजरस्तोत्रमन्त्रस्य नाद्रऋषिः अनुष्टुप् छंदः श्री विष्णुः परमात्मा देवता अं वीजः सोहं शक्तिः अंह्री कीलकं ।। ममसर्व दे आत्म रक्षार्थे जपे विनियोग ।। नारद ऋषयेनमः शरसि ।। अनुष्टपछंदसे नम ।। मुखे ।। श्री विष्णु परमात्मा देवतायै नम ।। हृदये अहं बीजं गुह्ये ।। सोहं शक्तिपादयो ।। अंह्री कीलकं पादाग्र ।।"

अन्त—"विद्यार्थी लभते विद्या मोक्षार्थी लभते गति ।।
आपदो हरत नित्यं विष्णुस्तोत्रंस्तु सर्वदा ।।२३।।
जले विष्णु स्थले विष्णु र्विष्णु पर्वतमः स्तके ।।

ज्वालमालाकुले विष्णु ।। सर्वविष्णुमयंजगत् ।।२४।।
यस्त्विदं पठते स्तोत्र विष्णुपंजरमुत्तमं ।।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोके स गछति ।।२५।।
"इति श्री ब्रह्माण्डपुराणो इन्द्रनारद संवादे विष्णु पंजरस्तोत्रं समाप्तं ।।"

विषय—तन्त्र-साहित्य ।

टिप्पणी—यह लघुकाय पुस्तिका तन्त्र से सम्बन्ध रखती प्रतीत होती है । इसके प्रारम्भ में तान्त्रिक प्रक्रियाएँ लिखी हैं और अन्त में स्तोत्र-पाठ का फल दिया गया है । यह ग्रन्थ प्रकाशित और प्राप्य है । इसकी लिपि प्राचीन है ।

यह ग्रन्थ शेखपुरा (मुँगेर) के श्रीव्रजनन्दनप्रसाद सिंह से प्राप्त हुआ ।

४७. रुद्रयामलतन्त्र—ग्रन्थकार—×। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, पुराना, देशी कागज । पृष्ठ-सं० ५ । प्र० पृ० पं० लगभग—१६ । आकार—६$\frac{9}{10}$" × ४" । भाषा—संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल—× । लिपिकाल—आषाढ, शुक्ल, १५, सं० १९३७ वि० ।

प्रारम्भ—"श्रीगणेशायनमः अथ महाविद्यास्तव पुरश्चरण पटल विधिलिख्यते
शिव त्ताण्डव तात्रोन्क्तं शिव उवाच
भूत प्रेत पिशाचाश्च डांकिन्यां ब्रह्मराक्षसः
पाठयेत्सप्तरात्राणी ७ हवनं त्रय मुत्तमम्
शांकल्या पायसः श्चैव कटु तैलं सषर्प्पस्तथा
दिवामेकं त्रयं षाष्ठी ६३ पाठं सर्वसिद्धिः
महा होमं दशांशेन दशां सेत्तर्प्पणं तथा
दशां से ब्राह्मणं भोज्यं दशां से चैव दक्षिणम्"

अन्त—"अथ डामर तांत्रोक्तो महाविद्या पुरश्चरण विधानम्
प्रथम गणेश आवाहनं पूजनं
महादेव अष्टमूर्ते शक्ति विष्णु अंजनी कुमार
उतक्रमेण आवाहनं पुजनं च तथा विधिः
अरुणं पुष्पं अरुणं वस्त्रं श्वेत पुष्पं श्वेत वस्त्रं
पित्तपुष्पं पीत वस्त्रं उणवस त्रंगोघृते च शाकल्यम्
इति डामर तांत्रे महाविद्या पुरश्चरण पटल विधि समाप्तम् ।"

विषय—तन्त्रशास्त्र ।

टिप्पणी—इस नाम का तन्त्र-ग्रन्थ दो भागों में प्रकाशित और प्राप्य है । किन्तु, यह उससे भिन्न-सा प्रतीत होता है । सम्भव है, यह उसका संक्षिप्त रूप हो । इसमें क्रमशः ये भाग हैं—१. महाविद्यास्तवपुरश्चरण पटल विधिः, २. प्रेतशान्ति महाविद्यास्तव पुरश्चरण विधिः, ३. महाविद्यास्तवपुरश्चरण विधिः, ४. क्रोडा तंत्रे महाविद्यापाठ फलम्, ५. लिंगार्चा विधिः, ६. वाराहतंत्रोक्त लिंगार्चा विधिः, ७. क्रोडातंत्रे पात्र विधिः । ग्रन्थ अनुसन्धेय है । ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, किन्तु प्राचीन है । प्रारम्भ या अन्त में लिपिकार का नाम नहीं दिया गया है ।

यह ग्रन्थ शेखपुरा (मुंगेर)-निवासी श्रीव्रजनन्दनप्रसाद सिंह के सौजन्य से प्राप्त किया ।

४८. विज्ञाननौका, सिद्धान्तबिन्दु—ग्रन्थकार—श्रीशंकराचार्य । लिपिकार—पं० ज्वालादत्त त्रिपाठी । अवस्था—अच्छी, मोटा, देशी कागज । पृष्ठ-सं० १० । प्र० पृ० पं० लगभग × १२ । आकार—५$\frac{1}{4}$" × ३"$\frac{1}{3}$ । भाषा—संस्कृत । लिपि—नागरी । रचनाकाल—प्रसिद्ध । लिपिकाल—× ।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः तपोयज्ञ दानादिभि शुद्ध बुद्धि विरक्तो
नृपादौ पदे तुछ बुद्धया
परित्यज्य सर्वं यदाप्नोति तत्वं
परंब्रह्म नित्यंतदेवाहमस्मि १
दयालुं गुरुं ब्रह्म निष्ठं प्रशांतं
समाराध्य भक्त्या विचार्यस्वरूपं
यदाप्नोति तत्वं निदिध्यास्य विद्वान् परंब्रह्म० २
यदानंदरूपंप्रकाशस्वरूपं निरस्त प्रपंचं परिछेदशून्यं
अहंब्रह्म वृत्यैक गम्यं तुरीयं परं ब्रह्म ० ३"

अन्त—"अविव्यापकत्वाद्धित्तत्वप्रयोनात्स्वतः शुद्धभावादनन्याश्रयत्वात्
जगतुच्छमेतत्समस्तंतदन्यस्तदे० ९
नवैकंनदन्यद्वितीयंकुतः स्यान्नवाकेवलत्वं न वा
केवलत्वं न शून्यंनचाशून्यमद्वैतकत्वात् कथं सर्व
वेदांतसिद्धं ब्रवीमिः १०
इति श्री सिद्धांत विंदुसंप्रणम्"

विषय—वेदान्त-दर्शन ।

टिप्पणी—यह श्रीशंकराचार्य का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसकी मुद्रित प्रति प्राप्य है, किन्तु सम्भवतः सम्प्रति वह दुर्लभ है। इसमें ग्रन्थकर्त्ता ने वेदान्त-मत के अनुसार ब्रह्म के रूप को सिद्ध किया है। दो ग्रन्थ—विज्ञाननौका एवं सिद्धान्तविन्दु—एक साथ ही हैं। किन्तु, प्रतीत होता है कि शंकराचार्य के प्रसिद्ध ग्रन्थ का या तो यह लघु रूप है या उस नाम पर अन्य किसी की रचना है। ग्रन्थ अनुसन्धेय हैं। 'विज्ञाननौका' के अन्त और 'सिद्धान्तविन्दु' के प्रारम्भ की पंक्तियाँ क्रमशः निम्नलिखित रूप में हैं—

"यदानंदसिंधौ निमग्नः पुमान्
स्यादविद्या विलासैः समस्तं प्रपंचं
सदातस्फुरन्यद्भुतं तन्निमित्तंपरंब्रह्म ०८
स्वरूपानुसंधान रूपां स्तुतियः
पठेदादराद्भक्ति भावै र्मनुष्यः
श्रृणोतीह नित्यं समासक्त चित्तो
भवोद्विष्णुरत्रै चवेदप्रमाणात् ९
इति श्री मछंकराच्चार्य विरचितं
विज्ञान नौका संपूर्ण"

"न भूमिर्नतोयंनतेजोन वायु-
र्न खं नेद्रियं वा न तेषां समूहः
अनैकांतकत्वात् सुषुप्तैक शुद्ध
स्तदेको विशिष्टः शिवः केवलोहं १
न वर्णन वर्णाश्रमाचार धर्मा-
न मे धारणा ध्यान योगादयोपि
अनात्माश्रयौहं ममाध्यासहाना तदे० २"

'विज्ञाननौका' में 'ब्रह्म' के रूप की और 'सिद्धान्तविन्दु में 'शिव' के रूप की विवेचना या चर्चा की गई है। ग्रन्थ की लिपि स्पष्ट, किन्तु प्राचीन है। लिपिकार ने ग्रन्थ के अन्त में लिपिकाल का कोई भी संकेत नहीं किया है। केवल "लिषितं ज्वालादत्त त्रिपाठिना पठनार्थं पडराजस्य राम राम राम" लिखा हुआ है। ग्रन्थ की लिपि तथा कागज देखने से ज्ञात होता है कि ग्रन्थ एक सौ वर्षों से अधिक प्राचीन है।

यह ग्रन्थ शेखपुरा (मुँगेर)-निवासी श्रीव्रजनन्दनप्रसाद सिंह के सौजन्य से प्राप्त किया।

४६. शिवताण्डवतन्त्र—ग्रन्थकार— ×। लिपिकार— ×। अवस्था—अच्छी; हाथ का बना, मोटा, देशी कागज। पृष्ठ-सं० २०। प्र० पृ० पं० लगभग—२२। आकार—५" × ३"। भाषा—हिन्दी। लिपि—नागरी। रचनाकाल— ×। लिपिकाल—आषाढ, कृष्ण, षष्ठी, सं० १८९३ वि, सोमवार।

प्रारम्भ—"श्री गणेशायनमः श्री वटुक भैरवाय नमः ॥
मेरु पृष्ठे सुखा सीनं देव देवं त्रिलोचनम्
शंकरं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम्
श्रीपार्वत्युवाच भगवन्सर्व धर्मज्ञ सर्वशास्त्रागमा दिषु
आपदुद्धारणं मन्त्रं सर्वसिद्धि प्रदंनृणां २
सर्वेषां चैव भूतानां हितार्थम्वाञ्छितम्मया
विशेषतस्तु राज्ञां वै शांति पुष्टि प्रसाधनम् ३
अंगन्यास करन्यास देहन्यास समन्वितम्
वक्तुमर्हसि देवेश ममहर्ष विवर्द्धनम् ४
ईश्वरवाच शृणुदेवि महामन्त्रमापदुद्धारहेतुकम्
सर्व दुःख प्रशमनं सर्वशत्रु विनाशनम् ५
अपस्मरादि रोगाणां ज्वरादीनां विशेषतः
नाशनं स्मृति मात्रेण मन्त्रराजमिमम्प्रिये ६"

अन्त—"फणिधर फणिनाथो देव देवाधि नाथः
क्षितिधर क्षितिनाथो विरवेताल नाथः
निधि पति निधि नाथो योगीनी योग नाथो
जयति वटुकनाथः सिद्धिदः साधकानां १
अनील कमल वक्त्रं रक्त वर्ण मौनी कृतं
कृतमनोज्ञ मुखारविंद्य कल्याण कीर्तिकमनीय
कपालपाणिं वन्देमहावटुकनाथमभीष्टसिद्धिम् २"

विषय—तन्त्रशास्त्र।

टिप्पणी—यह ग्रन्थ तन्त्रशास्त्र से सम्बद्ध श्रीबटुकभैरवस्तोत्र है। इसमें 'देविरहस्य' नाम का भी ग्रन्थ है। ग्रन्थ अनुसन्धेय है। ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और लगभग ११७ वर्ष प्राचीन है। इस नाम का ग्रन्थ तन्त्रशास्त्र में यथासम्भव नहीं है, किन्तु एक स्थान पर लिखा हैं—"इति श्री रुद्रयामले तन्त्रे विश्वसारे आपदुद्धारूपं भैरवस्तोत्रं समाप्तम्"। इससे प्रतीत होता है कि यह रुद्रयामल-तन्त्र का ही कोई भाग है। ग्रन्थ में

लिपिकार का नाम-निर्देश भी नहीं है। यह ग्रन्थ शेखपुरा (मुँगेर)-निवासी श्रीव्रजनन्दनप्रसाद सिंहजी के सौजन्य से प्राप्त किया।

५०. षट्पञ्चाशिका—ग्रन्थकार—भीष्मदत्त। लिपिकार—×। अवस्था—अच्छी, प्राचीन, हाथ से बना, देशी कागज। पृ० सं० १६। प्र० पृ० पं० लगभग—१८। आकार—११$\frac{१}{५}$"×४$\frac{१}{५}$"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—अगहन, शुक्ल त्रयोदशी, सं० १८५८ वि०; सं० १७२३ शक-शालिवाहन।

प्रारम्भ—"(टीका) श्री गणेशायनमः ॥ सत्तामय माचारो यच्छास्त्र प्रारंभेष्वभिमत देवता नमस्कारं कुर्वन्ति अवन्त्याचार्य्य मगद्विज वराह मिहिराचार्य्यात्मज पृथयशसाः संन्क्षिप्त ब्रह्म विद्यां सुविस्तरैः कर्त्तुकामः ॥ आदादेव भगवतः सूर्य्यस्य नमस्कारं स्व नामा ख्यापनं० चाह० ॥ प्रणि पत्येति ॥
(मूल) प्रणिपत्य राव मुन्द्धा बारह मिहिरातमजेन सद्य श सा० ॥
प्रश्ने कृतार्थ गहना परार्थ मुद्दिश्य पृथु यश सा० ॥१॥"

अन्त—"(मूल) अशंकाः ज्ञायते द्रव्यं द्रेष्काणैस्तस्करादयः ॥ राशिभ्यः काल दिग्देशो व यो जातिश्च लग्न पात् ॥५६॥ (टीका) एवं अंशकाज्ञायते द्रव्यं द्रेष्काणैलग्नत्रिभागैस्तस्कराः माताश्चौरांस्मृताः ॥ यादृशी द्रेष्काणस्याकृतिस्तादृशीतस्करा-कृतिर्वक्तव्या० यथामेषस्य प्रथमद्रेष्काणपुरुषः कृश्नः रक्तनेत्रश्चौरः॥ द्वितीयः स्त्री लोहिताम्वरा० स्थूलोदरी० दग्धपदा० द्वितीयोनरः कलापिंगला गलशकटकमणीयकुशलौवृहत्यादितिःमिथुनस्य प्रथमः स्त्री रूपान्विता रजस्वला० हीनप्रजा० मरणकार्येकृत क्रमात, द्वितीये पुरुषः उद्यानसंस्थः धनुर्पाणीः॥ तृतीयेसु पुमान् रक्तविभूषितः पंडितः धनुर्पाणिः॥ कर्कटस्य प्रथमः पुरुषो वीरः हस्तीशरीरः शूकरमुखः द्वितीयः स्त्री यौवनोपेता आररापसंस्था० ॥ तृतीयः पुरुषः सर्प्पवेष्टितो लौह सुवर्ण भरणावितः॥ सिंहस्य प्रथमः संकुलीहस्तः शाल्मलिसंस्थो गृद्धजम्बुकमुखः द्वितीयः पुरुषः धनुर्पाणिः उन्नता-ग्रनासः॥ तृतीयोजनः कुंचितकेशः चतुर्हस्तः ॥ कन्यायाः प्रथमः पुरुषः आशनवीथो संस्थाः ॥ द्वितीयः पुरुषो गृद्धतुल्यमुखो घटोन्वितः क्षुधितः तृषितश्च ॥ तृतीयः पुरुषो दीर्घमुखो धनुर्पाणिः ॥ वृश्चिक प्रथमः स्त्रीभग्नानना स्थानच्युताः सर्प्पविद्धपादाः मनोरमाः ॥ द्वितीयः स्त्री भर्त्तृकृते भुजंगावृत्त

शरीरा:....। तृतीय पुरुष: वनछाया पृथुल चिवुको वन्य: ।। धनुषो प्रथम: पुरुषोधनुर्हस्त: ।। द्वितीये स्त्री स्वरूपा गौ उवर्णा: ।। तृतीये पुरुषो दण्डहस्त: कुष्ठी ।। मकरस्य प्रथम: पुरुषो लोमश: स्थूलदंता: रौद्रवदना ।। द्वितीये स्त्री श्यामा लंकारार्चिता ।। तृतीये पुरुषो दीर्घमुखो धनुर्पाणि: ।। कुंभस्य प्रथम: पुरुषो गृद्धवदन तुल्य: सकम्बल: ।। द्वितीये स्त्री रक्ताम्बरा तृतीये पुरुष: श्याम: सरोमहर्षण: ।। मीनस्य प्रथम पुरुषो नैस्थ: द्वितीय स्त्री गौरा:० तृतीयेनग्न पुरुष: भीरु: सर्प्पवेष्टितो० इति० एते वृहज्जातके० शुभमस्तु सिद्धिरस्तु शुभं भूयाल्लेखक पाठकयो: ।। शुभ संवत् १८५८ शाके शालिवाहनस्य गताब्दा: १७२३ ।। अग्रहणस्यासिते पक्षे त्रयोदश्यां गुरुबासरे० ।। पट्पंचाशिका समालेखि भीष्मदत्तेन धीमता ।। श्री रामोऽवतुतराम्"

विषय—ज्यौतिषशास्त्र।

टिप्पणी—यह ज्यौतिष का प्रसिद्ध ग्रन्थ षट्पंचाशिका की टीका है। इसमें टीकाकार ने टीका की प्राचीन प्रणाली से काम लिया है और उसे बोझिल बना दिया है। इस उपयोगी टीका का अनुसन्धान अपेक्षित है। ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त में टीकाकार का नामोल्लेख नहीं है। ग्रन्थकार श्रीवराहमिहिराचार्य के पुत्र हैं। टीका की भाषा में भी यत्र-तत्र अशुद्धियाँ हैं। ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और पुरानी है। ग्रन्थ का लिपिकाल लगभग १५० वर्ष प्राचीन है। इस टीका के अनुसन्धान से सम्भव है, मूल ग्रन्थ और ज्यौतिषशास्त्र के कुछ मन्तव्यों पर नवीन प्रकाश पड़े।

यह ग्रन्थ पं० श्रीगिरीशदत्त पाण्डेयजी, ग्रा० पण्डित लोगों का रामपुर, महाराजगंज (छपरा) के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

५१. जातकाभरणम्—ग्रन्थकार—श्रीदैवज्ञ ढुण्ढिराज। लिपिकार—श्री पं० महादेवजी। अवस्था—अच्छी; प्राचीन, देशी कागज। पृष्ठ-सं० ८५। प्र० पृ० पं० लगभग—१०। आकार—१०३/४"×५४"। भाषा—संस्कृत। लिपि—नागरी। रचनाकाल—×। लिपिकाल—माघ, कृष्ण, द्वादशी, सं० १९१४ वि; शाके १७७७, गुरुवार।

प्रारम्भ—"श्री गणेशाय नम: श्री देसदाहं हृदयारविंदे पादार विंदे वरदस्य वंदे मंदोपि यस्य स्मरमेन सद्यो गीर्वाणवंद्योयमतां समेत १ उदारधी मंदर भूधरेण प्रमथ्य होरागम सिधु राजम् श्री ढुंढिराज: कुरु ते किलार्थामार्याभमलोक्ति रत्नै: २"

अन्त—"कामं स्वामी प्रेम बृद्धिस्तनस्थै वक्ष्ये देशा व स्थिते प्रात्य हष पत्युश्चिंता नंदवृद्धौच नाभौ गुह्यस्थे स्यान्मन्मथाधिक्यमुच्चैः ३० गोदावरी तीर विराजमान पार्थाभिधानं पुटभेदनंचयत् सद्गोल विद्यामलकीर्त्तिभाजां मत्पूर्वजानां व सती स्थलं तत् ३१ तत्रस्थ दैवज्ञ नृसिंह सुनुर्गजाननाराधनताभिधान श्री ढुंढिराजो रचयांबभूव होरागमेनुक्रममादरेण ३२ इति श्री दैवज्ञ ढुंढिराज विरचिते जातका भरणे स्त्री जातकाध्याय शुभमस्तु सिद्धिरस्तु शुभंभूयात्"

विषय—ज्यौतिषशास्त्र।

टिप्पणी—१. यह ग्रन्थ गोदावरी-तीरस्थित पार्थिवपुर पुरग्राम के पण्डित श्रीढुण्ढिराज शास्त्री द्वारा विरचित है। यह अद्यावधि अप्रकाशित है। इसमें जन्मपत्री-निर्माण-विधि के साथ-साथ, जन्म से सम्बद्ध ग्रहों और राशियों पर विचार करते हुए, उनके फलाफल का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण दिग्दर्शन कराया गया है। ग्रन्थ की भाषा सरल और रचना हृद्य है। सम्पूर्ण ग्रन्थ पद्य में है। यदि इस ग्रन्थ का अनुशीलन और प्रकाशन किया जाय, तो सम्भव है, ज्यौतिष-सम्बन्धी प्रकाशित अन्य ग्रन्थों पर नवीन प्रकाश पड़े।

२. ग्रन्थ की लिपि अस्पष्ट और प्राचीन है। लिपिकार ने यत्र-तत्र ऐसी अशुद्धियाँ की हैं, जिनसे ग्रन्थ की भाषा और विषय में दोष आ गये हैं। ग्रन्थ पठनीय है।

यह ग्रन्थ पं० श्रीगिरीशदत्त पाण्डेयजी, ग्राम पण्डित लोगों का रामपुर, महाराजगंज (छपरा) के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

परिशिष्ट

- ● अज्ञात रचनाकारों की कृतियाँ
- ●● ग्रन्थों और ग्रन्थकारों की अनुक्रमणिका
- ●●● महत्त्वपूर्ण हस्तलेखों के समय तथा अन्य प्रकाशित खोज-विवरणिकाओं में उनके उल्लेख का विवरण

परिशिष्ट—
अज्ञात रचनाकारों की कृतियाँ

(ग्रन्थों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गई क्रम-संख्याएँ हैं)

क्र० सं०	ग्रन्थों के नाम	विषय	रचनाकाल	लिपिकाल	विशेष
१.	आत्मप्रबोध (३६)	दर्शन			
२.	गरुडबोध (२३—ग)	कबीर-साहित्य		सं० १९३२ वि०	
३.	तुलसीमालोपनिषद् (३०)	धर्म			
४.	भक्तविवेक (६८)	भक्ति			
५.	भौपालबोध (७—ख)	दर्शन		१२७८ साल	
६.	रमल (८९)	ज्यौतिष		सं० १९४१ वि०	
७.	लक्ष्मीचरित्र (७१)	भक्ति		सं० १९११ वि०	
८.	विचारसागर (३१)	दर्शन			
९.	विष्णुपुराण (८२)	कृष्ण-चरित्र		११३१ साल	
१०.	सतनाम (७—क)	भक्ति		१२७८ साल	
११.	सतनाम (१२)	दर्शन			
१२.	समुद्रि (८८)	ज्यौतिष		सं० १९४२ वि०	
१३.	सुमिरन दानलीला (२३—छ)	कबीर-साहित्य			
१४.	सूरजपुरान (९३)	भक्ति			
१५.	सूर्यकथा (७६)	भक्ति			
१६.	स्वासागुंजार (७०)	योग			
१७.	हनुमानचालीसा (९४)	स्तोत्र			
१८.	क्षेत्रमिति और पहेलियाँ (७७)	गणित			

संस्कृत-ग्रन्थ

(ग्रन्थों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गई संस्कृत-पोथियों की क्रम-संख्याएँ हैं)

क्र० सं०	ग्रन्थों के नाम	विषय	रचनाकाल	लिपिकाल	विशेष
१.	अहिबलचक्र (३६)	ज्यौतिष			
२.	आथर्वणी पुरुषसुबोधिनी (१९)	स्तोत्र		१८७९ वि०	
३.	गजेन्द्रस्तोत्र (२४)	स्तोत्र			
४.	दत्तात्रेय-तन्त्र (३)	तन्त्र			
५	पञ्चदशी (१०)	दर्शन			
६.	व्याकरण और छन्द (२३)	व्याकरण, छन्द			
७.	भागवततत्त्वसार-सन्दीपन (२५)	भक्ति			
८	महाभारत और भागवत के मिश्रित खण्ड (२७)	भक्ति			
९.	महाविद्यास्तोत्र (३४)	स्तोत्र			
१०.	रणदीक्षाप्रकार (२)	तन्त्र			
११.	रामकृष्णकाव्य (३०)	काव्य			
१२.	रीति-शास्त्र और स्तोत्र (२६)	स्तोत्र			
१३.	रुद्रयामलतन्त्र (७)	तन्त्र			
१४.	रुद्रयामलतन्त्र (४७)	तन्त्र			
१५.	लघुजातक (४३)	ज्यौतिष			
१६.	वाजसनेय-संहिता (६)	वैदिक सा०			
१७.	विष्णुपञ्जरस्तोत्र (४६)	स्तोत्र			
१८.	शिवताण्डवतन्त्र (४९)	तन्त्र			
१९.	स्वरूपोपनिषद् (४५)	उपनिषद्			
२०.	सन्ध्याविधि (३५)	कर्मकाण्ड			
२१.	सूत्रपाठ (११)	व्याकरण			
२२.	सूर्यार्णव, कर्मविपाक, राशि-फल (४२)	ज्यौतिष			

परिशिष्ट—२

ग्रन्थों की अनुक्रमणिका

(ग्रन्थों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गई क्रम-संख्याएँ हैं)

संस्कृत-ग्रन्थ

(ग्रन्थों के सामने की संख्याएँ विवरणिका की पृष्ठ-सं० १८४ से प्रारम्भ संस्कृत-पोथियों की क्रम-संख्याएँ हैं)

ग्रन्थकारों की अनुक्रमणिका

(ग्रन्थकारों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गई क्रम-संख्याएँ हैं)

संस्कृत-ग्रन्थकार

(ग्रन्थकारों के सामने की संख्याएँ विवरणिका में दी गई संस्कृत-पोथियों की क्रम-संख्याएँ हैं)

परिशिष्ट—३

महत्त्वपूर्ण हस्तलेखों के समय तथा अन्य प्रकाशित खोज-विवरणिकाओं में उनके उल्लेख का विवरण

क्रम-संख्या	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज-विवरणिकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या				विशेष
			लिपिकाल	खो० वि० ग्रं०		ग्रं० सं०	
१.	आनन्दकवि*	कोकसार	१७३४ ई०	ना० प्र० स०, का०	१९०२	५	*ग्रन्थकार की अन्य रचनाओं — कोकमंजरी, कोकविलास और आसन-मंजरीसार—की बारह प्रतियाँ नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) को खोज में मिली हैं। इस ग्रन्थ की ३८ प्रतियाँ उक्त सभा को खोज में प्राप्त हुई हैं।
			१७४८ ई०	,,	१९०६	८	
			१७६५ ई०	,,	१९१७-१९	९७	
			१७८१ ई०	,,	१९२३-२५	१३ डी, ई, जी, एच्, आई, जे	
			१८४६ ई०				
			१८५३ ई०				
			१८८४ ई०				
			१९०१ ई०				
				,,	१९२९-३१	१० सी, डी, ई, एफ्, जी, एच्, आई, जे	

क्रम-संख्या	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज-विवरणिकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या			विशेष
			लिपिकाल	खो० वि० ग्रं०	ग्रं० सं०	
१.	आनन्दकवि	कोकसार	१८१७ ई०			
			१८३५ ई०			
			१८६६ ई०			
			१८७५ ई०			
			१८९८ ई०			
			१९०१ ई०			
			१८२८ ई०			
			१८८३ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०	७९	
२.	कवीरदास*	१ शब्दावली	१८०४ वि०	ना० प्र० स०, का० १९०६ ८	१७७ पी	*परिषद्-संग्रहालय में कवि के अन्य तीन ग्रन्थ संगृहीत हैं। काशी-नागरी प्रचारिणी सभा को ग्रन्थकार के अट्ठानब्बे ग्रन्थों की एक सौ बीस प्रतियाँ खोज में मिली हैं। दे — हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' पहला भाग, पृ' सं० १८; हस्तलिखित हिन्दी-ग्रन्थों का चौदहवाँ त्रैवार्षिक विवरण, पृ० सं० ५४ और पन्द्रहवाँ त्रैवार्षिक विवरण, पृ० सं० ४१। श्वासागुंजार' नामक ग्रन्थ सहसगुंजार' नाम से भी मिलता है।
				,, १९०९-११	१४३ एल्	
				बि० रा० भा० प० १ खं०	३२	
		२ बीजक	१८५६ वि०	ना० प्र० स० का० १९२०-२२	७४ ए	
			१८८५ वि०	,, १९२३-२५	१९८ डी, ई, एफ्	
			१९०७ वि०	,, १९२९-३१	१७८ डी	
			१९५१ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०	८०	
		३ श्वासागुंजार	१८४६ वि०	ना० प्र० स०, का० १९०९-११	१४३ जे	
			१९३२ ई०	बि० रा० भा० प० १ खं०	८४	

३.	कृपाराम	भागवत भाषा		ना० प्र० स०, का० १९०५	६
			१६५० वि०	वि० रा० भा० प० १ खं०	८५
	केशवदास	१ विज्ञानगीता		ना० प्र० स० का० १९००	५५
			१८९९	" १९०४	१२७
			१८९१	" १९२०-२२	८९ सी
				" १९२३-२५	२०७
				" १९२६-२८	२३३ ए
			१८४९ वि०	" १९२९-३१	१९२ जी
				वि० रा० भा० प० १ खं०	७३,९७
		२ रसिकप्रिया		ना० प्र० स०, का० १९०३	८९
			१८१४ वि०	" १९०४	१२८
				" १९१७-१९	९६ बी
			१९१७ वि०	" १९२०-२२	८९ बी
				" १९२३-२५	२०७
				" १९२६-२८	२३३ एफ् ज
				वि० रा० भा० प० १ खं०	८६ १००
		३ रामचन्द्रिका	१८२५ वि०	ना० प्र० स०, का० १९०२	२५२
			१६३१ वि०	" १९०३	२
				" १९२३-२५	२०७
				" १९२६-२८	२३३ ई
५.	गोस्वामी तुलसीदास		१७९३ वि०	वि० रा० भा० प० १ खं०	९८
		१ रामचरितमानस	१६४७	ना० प्र० स०, का० १९००	१

क्रम-संख्या	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज विवरणिकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या				विशेष
			लिपिकाल	खो० वि० ग्रं०		ग्रं० सं०	
५.	गोस्वामी तुलसीदास	१ रामचरितमानस	१६०४	ना० प्र० स० का०	१९०१	२२	
			१६७४	,,	१९०१	२८	
			१७६७	,,	१९०३	१६७, १६८, १६९	
			१८१८	,,	१९०४	१४४	
			१९०४	,,	१९२०-२२	१९८ ए	
				,,	१९२३-२५	४३२	
				,,	१९२६-२८	४८२ ए, बी, सी, डी, ई, एफ जी, एच्, आई जे, के।	
			१८३४ वि०	,,	१९२९ ३१	३२५ ए बी सी, डी, ई, एफ्, जी, एच् आई, जे, के, एल् एम् एन्, ओ, पी, क्यू, आर, एस्, टी, यू, वी, डब्लयू, एक्स वाई, जेड ३२५ ए२, बी२, सी२	

५.	गोस्वामी तुलसीदास	१ र. मचरितमानस			डोर, ईर, एक्र. जीर, एच्र, आईर, जेर, केर, एल्र एम्र एन्र ओर।
			१९१३ वि०		
			१८७८ वि०		
			१८७९ वि०		
			१७९० वि०		
			१८५६ वि०		
			१७६० वि०		
			१८८३ वि०		
			१८८७ वि०		
			१९०४ वि०		
			१९०६ वि०		
			१८६२ वि०		
			१९०२ वि०		
			१७९० वि०		
			१८७२ वि०		
			१८८८ वि०		
			१९३२ वि०		
			१९२२ वि०	वि. रा० भा० पा० १ खं०	२
			१८४७ वि०	,,	३
			१८८२ वि०	,,	४

क्रम संख्या	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज-विवरणिकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या			विशेष
			लिपिकाल	खो० वि० ग्रं०	ग्रं० सं०	
५	गोस्वामी तुलसीदास	१ रामचरितमानस	१८५९ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०	५	
			१८६४ वि०	,,	१८	
			१८३६ वि०	,,	४१	
			१९०९ वि०	,,	९९	
		२ विनयपत्रिका	१८२७	ना० प्र० स०, का १९०६ ८	२४५ जी	
			१८७२	,, १९०९-११	३२३ एल्	
				,, १९१७-१९	१९६ एफ्	
				,, १९२०-२२	१९८ के	
				,, १९२३-२५	३३२	
				,, १९२६-२८	४८२ एर बीर, सीर	
				, १९२९-३१	३२५ पीर, क्यूर	
				बि० रा० भा० प० १ खं०	३९	
	चरनदास	ज्ञान सरोदै	१८१३	ना० प्र० स०, का० १९०१	७०	
			१८१५	,, १९०३	१३५	
				,, १९०६-८	१४७ ई	
				,, १९१७-१९	३८ ए	

६.	चरनदास	ज्ञानसरोदै		ना० प्र० स०, का०	१९२०-२२	२६ बी	
				,,	१९२३-२५	७४	
				,,	१९२६-२८	७८ के	
			१९१८ वि०	,,	१९२६-३१	६५ डब्ल्यू, एक्स वाई, जेड्	
			१८३७ वि०	,,			
			१८७७ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०		६६	
७.	नाभादास	भक्तमाल	१७१२	ना० प्र० स०, का०	१९०९-११	२११	
				,,	१९१७-१९	११७	
				,,	१९२३-२५	२८९	
			१९०७ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०		६	
			{ १८७७ ई० १९३४ वि०	,,		१०, ११	
८.	पदुमनदास	हितोपदेश	१८७४ वि०	ना० प्र० स० का	१९२६-२८	३३९	र० का०—सं० १७६६ = १७०९ ई० (ना० प्र० स०, का०) र० का०—स० १७३८ (बि० रा० भा० प०, १ खं०) ग्रन्थकार की अन्य दो—काव्यमंजरी, भाषाभूषण—रचनाएँ मिली हैं।
			१९१९ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०		२२	
९.	परमानन्ददास	कबीरभानुप्रकाश		ना० प्र० स०, का०	१९२९-३१	२६२	र० का०-सं० १९२५ = १८७८ ई०(ना०प्र०स०,का०)

क्रम-संख्या	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज-विवरणकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या			विशेष
			लिपिकाल	खो० वि० ग्रं०	ग्रं० सं०	
९.	परमानन्ददास	कबीरभानुप्रकाश	१९३६ वि० = १८८३ ई०	वि० रा० भा० प० १ खं	३३	र० का०—सं० १९३५ (वि० रा० भा० प० खं० १)।
१०.	बिहारीलाल	बिहारी सतसई	१७१८	ना० प्र० स०, का० १९०१	१७	
			१७८०	,, १९०१	५२,७५	
			१७६६,१७४६	,, १९०२	८	
			१७८२	,, १९०३	१३३,१३५	
				,, १९०६-८	३ ए	
			१७९३	,, १९०६ ८	९९ ए	
			१७१७	,, १९२०-२२	२० ए	
			१८०५	,, १९२०-२२	२० बी	
				,, १९२३-२५	६२ ए से जे तक	
				,, १९२६-२८	६८ ए से ई तक	
			१७६२	,, १९२९-३१	५ ए, बी, सी	
				वि० रा० भा० प०, १ खं०	७२	
११.	लालचदास	हरिचरित्र		ना० प्र० स०, का० १९२६-२८	२३८	कवि की दूसरी रचना—
			१८५८ वि०	,,	२६१ ए, बी	विष्णुपुराण—भी प्राप्त हुई है।

११.	लालचदास	हरिचरित्र	१८५८ वि०	वि० रा० भा० प०	१ खं०	
१२.	सन्त दरियादास	१ शब्द		ना० प्र० स०, का०	१९०९-११	५५ के
			१९५५ वि०	बि० रा० भा० प०	१ खं०	४४, ४६, ५०, ५० (ग)
		२ ज्ञानदीपक	१९०७ वि०	ना० प्र० स०, का०	१९०९-११	५५ आई
			१२६६ फ०	बि० रा० भा० पा०	१ खं०	४४ (क), ४६, ४७, ५७ (ख), ६५ (क)
		३ दरियासागर	१८८१ वि०	ना० प्र० स०, का०	१९०९-११	५५ ई
			१२६६ फ०	बि० रा० भा० प०	१ खं०	४५ (ख), ५७ (क), ६० ख), ६१(क), ६२ (क)
		४ भक्तिहेतु	१८६६ वि०	ना० प्र० स०, का०	१९०९-११	५५ मी
			१२६६ फ०	० रा० भा० प०	१ खं०	४५ (ग), ५१ (क). ५२(घ) ६१ (ख) ६५ (ख)
		५ ज्ञानसरोदै	१८८७ वि०	ना प्र० स०, का०	१९०९ ११	५५ एफ्
			१२६६ फ०	बि रा० भा० प०	१ खं०	४५ (घ)
		६ प्रेममूला	१२६६ फ०			
			१२८६ फ०	१८६६ वि, १९१३ वि०		४५ (ङ), ५२ (क), ६० (क) ६५ (घ)
		७ ब्रह्मविवेक	१९४६ वि०	ना० प्र० स०. का०	१९०९-११	५५ बी
			१२६६ फ०	बि० रा० भा० प०	१ खं०	४५ (च)
			१२८६ फ०	,,		५२ (ग), ६२ (ग)
			१९१३ वि०	,,		६५ (ग)
		८ अमरसार	१५४६ वि०	ना० प्र० स०, का०	१९०९-११	५५ ए

क्रम-संख्या	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज-विवरणकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या			विशेष
			लिपिकाल	खो० वि० ग्रं०	ग्रं० सं०	
१२.	सन्त दरियादास	८ अमरसार	१२६७ फ०	वि० रा० भा० प० १ ख०	४५ (छ)	
			१२८६ फ०	„	५२ (ङ) ६० (म)	
		९ ज्ञानरतन	१८६६ वि०	ना० प्र० स० का० १९०९-११	५५ एच्	इन पोथियों के अतिरिक्त व वि की अन्य--निर्भयज्ञान, विवेक-सागर अग्रज्ञान, सहस्रानी, ज्ञानमुल, यज्ञसमाधि और ब्रह्म-चैतन्य—सात पोथियों की प्रतियाँ परिषद्-संग्रहालय में सुरक्षित हैं।
			१२७८ फ०	बि० रा० भा० प० १ खं०	४७ (क), ६२ (ख)	
			१८३४ वि०	„	६३	
			१२१६ फ०	„	३५	
		१० गणेशगोष्ठी	१९४९ वि०	ना० प्र० स० का० १९०९-११	५५ जो	
				बि० रा० भा० प० १ खं०	५० (ख)	
			१८६४ वि०	„	५३ (क), ५४	
		११ अलिफनामा	१८९० वि० = १८३३ ई०	ना० प्र० स०, का० १९२६-२८	८८	
			१८९० वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०	५८	
१३.	सूरदास	सूरसागर	१८५३ वि०	ना० प्र० स० का० १९०१	२३	
			१७९२ वि०	„ १९०४	१४२	
			१८७३ वि०	„ १९०६-८	२४४ सी	
			१८६६ वि०			
			१८२७ वि०	„ १९२६-२८	४७१ एम्, एन्	
			१८२५ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०	४३	

संस्कृत

महत्त्वपूर्ण हस्तलेखों के समय तथा अन्य प्रकाशित खोज-विवरणिकाओं में उनके उल्लेख का विवरण

[illegible]	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज विवरणिकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या			विशेष
			लिपिकाल	खो० वि ग्रं०	ग्रं० सं०	
१.	अनुभूतिस्वरूपाचार्य	सारस्वतप्रक्रिया	१८६३ वि०	आ० शा० भं० ज० ग्रं०	पृ० १४१	
					,, २	
			१७७६ वि०	,,	,, ३	
			१८३८ वि०	,,	, ४	
			१८४० वि०	,,	,, ५	
				,,	,, ६	
				,,	,, ७	
				,,	,, ८	
			१८७३ वि०	,,	,, ९	इसके लिपिकार ने महाराजा दौलतराव सिन्धिया का उल्लेख किया है।
				,,	,, १०	

क्रम-संख्या	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज-विवरणिकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या			विशेष
			लिपिकाल	खो० वि० ग्रं०	ग्रं० सं०	
१	अनुभूतिस्वरूपाचार्य	१ सारस्वतप्रक्रिया	१६६२ वि०	आ० शा० भं० ज० ग्रं०	२	बालबोधिनी-टीकासहित,टी०
				क० प्रा० ता० ग्रं०	१०१,६६८	का० पं० मिश्र बासव.
				जै० सि० भ० आ० सू०	छ० गं० ५१०,५१८,५४०	कन्नड-लिपि में लिखित।
				बि० रा० भा० प	१ खं (सं०) १२,३७५	
२	जयदेव	गीतगोविन्द	१६ ७ वि०	बि०रि०सो०सा०डि कैं० मि०II)	३६ ए बी सी डी,	
			शक सं० १७०५	,,	३६ ई०	
			शक-सं० १७६६			
			=१२५५ फ०	,,	३६ एफ्	
			१२२२ फ०	,,	३६ जी एच्	
			१११२ फ०	,,	३६ आई जे, के, एल्	
				सी० सी० पट०	आई, पी १५३	
				पट०	११	
				पी०	३१	
				पट० III	पी० ३३	
				सी० एस्० सी० खं० ५	पी० २०-२१ ए. सी	
				पट० आई०	पी० १४	
			१६०५	एच्० पी० एस्० खं० I	पी० १६	

			१९०८	बी० एम्०	पी० २५३	
				सी० पी० बी०	पी० १२५	
				डिस० कैट० खं० ८८	सं० ११९३७	
			१८७१ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०	२०	
				,,	५, ३८	
३.	दैवज्ञानन्दसुतदैवराम	मुहूर्तचिन्तामणि	शक-सं० १८७१	बि० रि० सो० डि० कै० (मि) खं० II	२६३	
				,,	२६३ बी	
			,, १७४७	,,	२६३ सी	
			,, १७५५	,,	२६३ डी	
			,, १७४९	सी० सी० पट०	आई पी ४६२	
				पट० ११	पी १०६, २१८	
				पट० III	पी ९९	
				सी० पी० बी० पी०	३७८	
				सी० एस्० सी०	[सं० ९५] ९	दे०—सं०१७४, २६४ और १७९ की टिप्पणी
				बि० रा० भा० प० १ खं०	१	
४.	दैवज्ञढुण्ढिराज	१ जातकाभरणम्	१८३२ वि०	बि० रि० सो० डि० कै० (मि०) खं० II	१०१	
			१७६६ वि०	,,	१०१ ए	
			१७१८ वि०	,,	१०१ बी	
			शक-सं० १६६३	,,	१०१ सी	
				सी० पी० पट०	आई पी २०५	

क्रम-संख्या	ग्रन्थकार	ग्रन्थ-नाम	प्राप्त ग्रन्थों के लिपिकाल एवं खोज-विवरणिकान्तर्गत ग्रन्थ-संख्या			विशेष
			लिपिकाल	खो० वि० ग्रं०	ग्रं० सं०	
४.	दैवज्ञढुण्ढिराज	जातकाभरणम्		पट० II	पी ४२,२०१	
				पट० III	पी० ४४	
				डिस० ८८४	१३७१६	
				सी० पी० बी० पी०	१६७	
				सी० एस्० सी० ४	२२	
५.	पाणिनि	अष्टाध्यायी	१७०० वि०	आ० शा० भं० ज० ग्रं० सू०	पृ० सं० ७	ग्रन्थकार की एक–'कारकान्य-सम्बन्धपरीक्षा'–रचना कन्नड-लिपि में प्राप्त हुई है। दे०–कन्नडप्रान्तीय तालपत्रीय ग्रन्थ-सूची के मूड़बिद्रीय जैन-मठ की तालपत्रीय ग्रन्थ-सं० ३७ (पृ० सं० १०७)
६	रामाश्रमाचार्य्य	१ सिद्धान्तचन्द्रिका	१९३४ वि०	बि० रा० भा० प०, १ खं०	४०	
			१८९८ वि०	आ० शा० भं० ज० ग्रं० सू०	पृ० सं० १४२	श्रीलेकेशंकरकृत टीका-सहित
			१९२१ वि०	बि० रा० भा० प० १ खं०	३१	
			१९३५ वि०	"	३२	सुबोधिनी टीका-सहित
				"	३६	पं० सदानन्दकृत टीका-सहित